1 कुरिन्थियों

मसीही समुदाय में जीवन आचरण के सिद्धान्त

एफ. वेन मैक लियोड

HARVEST MISSION PUBLICATIONS
V-82, SECTOR-12, NOIDA (U.P.)

1 Kurinthiyo *(Hindi)*

1 Corinthians

Copyright @ F. Wayne Mac Leod.

First Edition : July 2008

© 2003 by F. Wayne Mac Leod.

Translated from the original English title The Epistles of John and Jude published by Authentic Publishing, 129 Mobilization Dr, Waynesboro GA 30830, USA.

All Rights Reserved. No part of this book may be reproduced in any form without permission in writing from the publisher, except in the case of brief quotations embodied in critical articles or reviews

Published in Hindi by **Harvest Mission Publishers** with permission

Contact Address:

V – 82 Sector- 12, NOIDA, UP- 201301

Tel : 0120- 2550213, 4264860, 6417828, 9811373357

bijujo@bijujohn.com, bijujohn@roadrunnerworldmission.com

Printed at : NEW LIFE PRINTERS (P) LTD, New Delhi

लाइट टु माए पाथ शृंखला

पुराना नियम

एज्रा, नहेम्याह, और एस्तेर

अय्यूब

यशायाह

यिर्मयाह और विलापगीत

यहेजकेल

आमोस, ओबद्याह और योना

मीका, नहूम, हबक्कूक और सपन्याह

हाग्गै, जकर्याह और मलाकी

नया नियम

यूहन्ना

प्रेरितों के काम

रोमियों

1 कुरिन्थियों

2 कुरिन्थियों

फिलिप्पियों और कुलुस्सियों

याकूब और 1 व 2 पतरस

यूहन्ना और यहूदा की पत्रियां

विषय-सूची

परिचय 9
पौलुस, अपुल्लोस, कैफा और मसीह 15
[illegible] नाम तथा क्रूस 19
[illegible] 25
[illegible] की बुद्धि 29
[illegible] में विभाजन 33
[illegible] 39
[illegible] विश्वास 45
[illegible] 49
[illegible] 55
[illegible] 59
[illegible] 65
[illegible] 69
[illegible] 73
[illegible] 77
[illegible] 81
एक [illegible] 86
[illegible] 91
[illegible] 95
[illegible] 101
[illegible] 105
[illegible] 111
प्रेम धीरजवन्त और कृपालु है 117
प्रेम डाह नहीं करता और अपनी बड़ाई नहीं करता 122
प्रेम [illegible] नहीं, और न अनरीति चलता 126
[illegible] 132
प्रेम कुकर्म से नहीं, परन्तु सच्चाई से आनन्दित होता है 136
प्रेम सब बातें सह लेता है, विश्वास करता और आशा रखता है 140
प्रेम सब [illegible] है और कभी टलता नहीं 145
[illegible] और भविष्यद्वाणी 151
उचित आराधना विधि 157
वह जो उठा है 161
मृतकों का क्या होता है 167
अन्तिम टिप्पणियां 171

आमुख

कुरिन्थियों की पहली पत्री एक ऐसी कलीसिया को लिखी गई थी जो नाना प्रकार के संघर्षों में जी रही थी। उनमें विभाजन हो गया था। कलीसिया के सदस्य अलग अलग अगुवों के पीछे हो गए थे। वे प्रेरित पौलुस की प्रेरिताई पर भी उंगली उठाने लगे थे। कलीसिया के कुछ सदस्य तो अपने आप को बहुत बुद्धिमान समझते थे, अत: वहां सुधार की आवश्यकता थी। कलीसिया के सदस्य एक दूसरे को अदालत में भी खींच रहे थे। एक सदस्य तो व्यभिचार में भी गिर गया था परन्तु उसका पाप ढांप दिया गया था। अनेक जन प्रभु भोज में शराब के नशे में डूबे हुए सहभागी हो रहे थे। कुछ लोग वहां ऐसे भी थे जो मसीह के पुनरुत्थान पर सन्देह करते थे। विवाह, मूर्तिपूजा, आत्मिक वरदान, सेवकाई में स्त्रियों की भूमिका तथा पुनरुत्थान आदि अनेक प्रश्न उनके मन मस्तिष्क में थे।

पौलुस ने कुरिन्थ की कलीसिया को यह पहला पत्र लिखा था जिसमें उसने वहां के विश्वासियों को परामर्श दिया कि वे व्यावहारिक थियोलॉजी को कैसे समझें और कलीसिया में उनके व्यवहार में भी सुधार लाएं। पौलुस इन विषयों पर कुरिन्थ की कलीसिया को यह पहला पत्र सप्रेम भेजता है परन्तु आवश्यकता पड़ने पर उसने कठोर होकर निर्भयता से भी संबोधन किया है। उसने अपने इस पत्र में सार्थक आराधना और मसीही आचरण पर विस्तृत निर्देश देते हुए उनके प्रश्नों के उत्तर दिए हैं तथा उन्हें चुनौती दी है कि वे परमेश्वर के प्रेम में रहते हुए एक दूसरे से कैसे प्रेम रखें।

इस शृंखला की अन्य सब टीकाओं के अनुरूप ही इस पुस्तक का लक्ष्य भी यही है कि पाठक को क्रमवार रूप से कुरिन्थियों की कलीसिया को लिखे पौलुस के पहले पत्र में लेकर चले। मैंने इस पुस्तक को इस प्रकार तैयार किया है कि वह प्रभु के साथ आपके मनन में भी सहायक सिद्ध हो। मैं आपको प्रोत्साहित करना चाहता हूँ कि आप अपनी बाइबल में कुरिन्थियों की

पहली पत्री को इस पुस्तक के मार्गदर्शन में पढ़ें। इस पुस्तक का उद्देश्य बाइबल का स्थान लेना नहीं वरन् उसकी सहायक होना है तथा उसे समझने में आसानी प्रदान करना है। कृपया प्रत्येक अध्याय में दिए गए बाइबल के संदर्भों को अवश्य पढ़ें। प्रत्येक अध्याय के अन्त में दिए गए प्रश्नों को पढ़कर मनन करने पर ध्यान दें।

इस शृंखला की टीकाएं विश्व में उन पास्टर और मसीही सेवकों को भेजी जाती है जिन्हें वचन की व्याख्या की आवश्यकता है। मुझे अफ्रीका और एशिया से परमेश्वर के सेवकों से मिलने वाले पत्रों से यह जानकर बड़ा प्रोत्साहन मिला है कि इस शृंखला की इन टीकाओं को परमेश्वर ने वास्तव में प्रयोग किया है। क्या आप एक क्षण प्रार्थना करेंगे कि प्रभु इस पुस्तक को अफ्रीका और एशिया के पास्टर और मसीही सेवकों की आशीष के लिए प्रयोग करे?

परमेश्वर इस पुस्तक के माध्यम से आपको अपने निकट लाने में प्रसन्न हो!

एफ. वेन मैक लियोड

1
परिचय

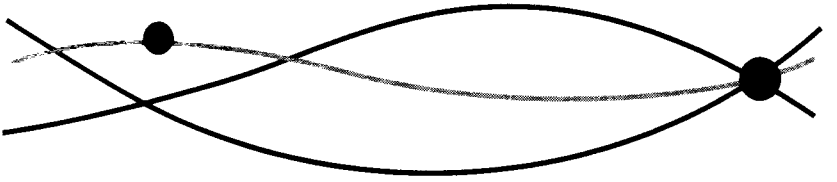

पढ़िए 1 कुरिन्थियों 1:1-9

कुरिन्थ के विश्वासियों को पौलुस द्वारा लिखा गया यह पहला पत्र था। पौलुस के समय में कुरिन्थ नगर एक महत्त्वपूर्ण व्यापारिक केन्द्र और अफ्रोडाइट देवी जो प्रेम की देवी कहलाती है उसका निवास स्थान था। यहां पौलुस ने लगभग डेढ़ वर्ष सेवा प्रदान की थी।

कुरिन्थ के विश्वासियों को लिखते समय पौलुस आरंभ में ही स्पष्ट कर देता है कि वह परमेश्वर की इच्छा से प्रेरित होने के लिए बुलाया गया था। अपने प्रेरित होने का उन्हें स्मरण दिलाना पौलुस के लिए आवश्यक इसलिए था कि वे जानें, वह उन्हें एक अधिकार से लिख रहा है। वह परमेश्वर द्वारा दिए गए अधिकार का प्रयोग कर रहा है क्योंकि कलीसिया में उत्पन्न समस्याएं ही ऐसी थीं कि उनके विषय में निर्देश देने हेतु परमेश्वर से अधिकार प्राप्त होना आवश्यक था। यही कारण था कि पौलुस ने पत्र लिखने

में परमेश्वर की बुलाहट और अधिकार को स्पष्ट किया। उसके पास उन विश्वासियों के लिए परमेश्वर का सन्देश था। कुरिन्थ के विश्वासियों को पौलुस के इस गंभीर पत्र को स्वीकार करना अनिवार्य ही था।

इस पत्र का वाहक सोस्थनीस था। हमें उसके बारे में अधिक जानकारी नहीं है। कुछ लोगों के विचार में वह कुरिन्थ में आराधनालय का प्रधान था जो पौलुस की सेवकाई द्वारा मसीह में आया था। (देखिए प्रे. का. 18:17)। हो सकता है कि सोस्थनीस कुरिन्थ में एक गणमान्य व्यक्ति था जिसके कारण उसे किसी प्रकार के परिचय की आवश्यकता नहीं थी।

यह पत्र कुरिन्थ में परमेश्वर की कलीसिया को संबोधित किया गया था। (पद 2) यहां ध्यान दीजिए कि यह कलीसिया परमेश्वर की कलीसिया थी कुरिन्थ के विश्वासियों की नहीं। यह उनकी अपनी खोज नहीं थी। वे जो इस कलीसिया के सदस्य थे वे परमेश्वर के जन थे। दूसरी बात यह कि कलीसिया के सदस्य मसीह यीशु में शुद्ध किए गए थे। शुद्ध किए जाने का अर्थ है कि चरित्र और जीवन-शैली में मसीह यीशु और उसके उद्देश्यों के लिए अलग किए जाना। अत: वे जो परमेश्वर की इस कलीसिया के सदस्य थे, उन्होंने अपने आप को प्रभु के लिए संसार से अलग कर लिया था और प्रभु उन्हें अपनी समानता में ढाल रहा था। तीसरी बात यह थी कि इस कलीसिया के लोग पवित्र होने के लिए बुलाए गए थे। यह उनका कर्त्तव्य था। जैसा परमेश्वर चाहता था वैसा जीवन आचरण उन्हें रखना अनिवार्य था। उन्हें अपने पुराने जीवन को त्यागकर पूर्ण रूप से प्रभु यीशु की सेवा में रहना था और वैसा ही जीवन बिताना था। यहां ध्यान दीजिए कि पौलुस कुरिन्थ के विश्वासियों से कहता है कि परमेश्वर यह आशा उसके जनों से हर जगह रखता है, केवल कुरिन्थ में ही नहीं। अब आती है चौथी बात कि वह एक नगर में स्थित कोई छोटा सा समुदाय नहीं है। परमेश्वर की कलीसिया विशाल है। वह प्रत्येक मनुष्य जिसे मसीह यीशु के बलिदान की मृत्यु द्वारा परमेश्वर ने अलग किया है और पवित्र होने के लिए बुला लिया है, वह इस कलीसिया का अंग है। अत: कुरिन्थ के विश्वासी उस विश्वव्यापी देह के अंग थे जो संपूर्ण पृथ्वी पर फैल जाएगी और समय के विस्तार में बढ़ती जाएगी।

पद 3 में पौलुस कुरिन्थ के विश्वासियों को आशीष देता है। "हमारे पिता परमेश्वर और प्रभु यीशु मसीह की ओर से तुम्हें अनुग्रह और शान्ति मिलती रहे।" अनुग्रह का अर्थ है, पापियों को योग्य न होने पर भी प्रभु यीशु का यश मिलना है। शांति का अर्थ यह नहीं कि समस्याओं से मुक्ति मिले परन्तु वह

कि परमेश्वर के साथ उचित संबन्ध बने रहें। कुरिन्थ के विश्वासियों के लिए पौलुस की यही शुभकामना थी।

पौलुस का दिल बहुत बड़ा और तरस से भरा हुआ था। उसने अधिकांश विश्वासियों से तो भेंट भी नहीं की थी। हम देखेंगे कि कुछ विश्वासी गंभीर पाप में गिरे हुए थे परन्तु पौलुस उनके लिए परमेश्वर को धन्यवाद ही देता है। उसका मन धन्यवाद से भरकर उमण्ड रहा था। (पद 4) उनके पापों के बावजूद भी पौलुस उन्हें परमेश्वर की सन्तान मानता था। इस पत्र में संकेत यह भी है कि वहां के कुछ लोग पौलुस का सम्मान नहीं करते थे। इसका पौलुस ने बुरा नहीं माना वे परमेश्वर के जन थे और वह उनसे प्रेम रखता था तो पौलुस भी उनसे प्रेम रखता था। क्या हम में पौलुस का सा स्वभाव है?

हम ईमानदारी से कहें। कुछ विश्वासियों से प्रेम रखना बहुत कठिन है परन्तु पौलुस में कुछ ऐसी क्षमता थी कि वह उन्हें वैसे ही देख पाता था जैसे परमेश्वर उन्हें देखता था। क्या आपके सामने ऐसे भी विश्वासी हैं जिनके लिए आप परमेश्वर को धन्यवाद नहीं कह सकते हैं? पौलुस कुछ कुरिन्थवासी विश्वासियों के लिए मन में बुराई रख सकता था परन्तु उसने इस फन्दे में फँसने से अपने आप को दूर रखा। परमेश्वर हमें पौलुस के उदाहरण की नकल करने के लिए अनुग्रह प्रदान करे।

पौलुस ने इस पत्र का आरंभ कुरिन्थवासी विश्वासियों के सद्‌गुणों की सराहना के साथ किया। आइए हम इनमें से प्रत्येक गुण का अवलोकन करें।

क्योंकि उसमें होकर तुम हर बात में...धनी किए गए। (पद 5)

कुरिन्थ के विश्वासियों को मसीह ने हर बात में धनी किया था। उनकी समृद्धि दो मुख्य बातों में थी। पहली कि वे शब्दों के धनी थे। (बोलचाल में) 2 कुरिन्थियों 8:7 में पौलुस कहता है कि वे बोलने और ज्ञान में समृद्ध थे। इससे प्रकट है कि वे सुसमाचार को अपने तक सीमित किए हुए नहीं थे। वे इसका प्रचार कर रहे थे। वे परमेश्वर के वचन का निर्भीकता से प्रचार कर रहे थे। यह उनके जीवन में परमेश्वर की आशिषों का संकेत था।

परमेश्वर ने उन्हें निर्भीकता का वरदान दिया था। दूसरा, कुरिन्थ की कलीसिया विश्वास से पूर्ण थी। वे मसीह का प्रचार अज्ञानता में नहीं कर रहे थे। वे धर्मशास्त्र को जानते थे और परमेश्वर के सत्य को समझते थे। वे अपने आसपास के लोगों के साथ कलीसिया के धर्म-सिद्धान्तों की चर्चा करते थे। उनके पास उनकी आशा के विषय पूछे गए प्रश्नों के उत्तर थे।

(1 पतरस 3:15) परमेश्वर ने इस कलीसिया को प्रचार में उत्साह और धर्मशास्त्र की समझ की आशिषें दी थीं।

"जैसा कि मसीह की गवाही तुम में पक्की भी निकली।" (पद 6)

जब पौलुस ने देखा कि कुरिन्थ के क्षेत्र में परमेश्वर का काम किस प्रकार बढ़ रहा है, तब उसे बड़ी शांति मिली। उसने उनके मध्य रहते हुए मसीह के जीवन और काम के बारे में उन्हें जो सिखाया था, वह उनके जीवन द्वारा प्रदर्शित किया जा रहा था। वे पुनरुत्थित मसीह का सामर्थ अपने दैनिक जीवन में अनुभव कर रहे थे। जिस समय पौलुस उनकी समस्याओं को देख रहा था उस समय भी प्रभु उनके द्वारा बड़े बड़े काम कर रहा था। वे जीवित एवं सर्वशक्तिमान मसीह के गवाह थे।

"यहां तक कि किसी वरदान में उन्हें कमी नहीं हुई।" (पद 7)

जीवित मसीह के सामर्थ का प्रमाण था- कुरिन्थ के विश्वासियों द्वारा आत्मा के वरदानों का अनुभव और उपयोग। हमें प्राय: विश्वासियों को उत्साह दिलाना पड़ता है कि वे परमेश्वर द्वारा दिए गए वरदानों का उपयोग करें परन्तु कुरिन्थ की कलीसिया में ऐसा नहीं था। वे तो अपने आत्मिक वरदानों के बारे में पहचाने जाते थे। वे अपने वरदानों का उपयोग करते थे और अपने मध्य परमेश्वर के सामर्थ का अनुभव करते थे।

"तुम हमारे प्रभु यीशु मसीह के प्रकट होने की प्रतीक्षा करते रहते हो।" (पद 7)

कुरिन्थ के विश्वासियों का एक और गुण था। वे प्रभु के आने की उत्सुकता से प्रतीक्षा कर रहे थे। पौलुस अपने इस पत्र में समय लेकर उनके प्रश्नों का उत्तर देता है जो उन्होंने यीशु के पुन: आगमन के बारे में पूछे थे। यह उनकी सेवकाई में सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण बात थी। वे उस दिन के लिए तरस रहे थे जब प्रभु आकर उन्हें अपने साथ ले जाएगा।

पद आठ में पौलुस उन्हें स्मरण दिलाता है कि प्रभु उन्हें अन्तिम दिन तक अर्थात् प्रभु के दिन तक दृढ़ बनाए रखेगा। पौलुस को पूरा विश्वास था कि प्रभु इस कलीसिया को सिद्ध बनाएगा और अपनी इच्छा के अनुसार ढाल देगा। यद्यपि ये विश्वासी वर्तमान में अनेक परीक्षाओं और कठिनाइयों का सामना कर रहे थे, पौलुस को विश्वास था कि प्रभु ने उन्हें बुलाया है तो वह उन्हें त्यागेगा नहीं। (पद 9) परमेश्वर ने कुरिन्थ के विश्वासियों को पाप से निकलकर उसके पास आने के लिए बुलाया था और अब जब वे उसके हो

गए हैं तो वह उन्हें क्योंकर त्यागेगा। वे अविश्वास में भी गिर गए पर परमेश्वर उनके लिए विश्वासयोग्य है।

ध्यान देने योग्य बातें:

- क्या कोई ऐसा व्यक्ति है जिससे प्रेम निभाने में आपको परेशानी है और उनके लिए परमेश्वर को धन्यवाद देने में आपको कठिनाई होती है। परमेश्वर से मांगें कि वह वह आपको आवश्यक अनुग्रह प्रदान करे कि आप आज उनके लिए धन्यवाद दें।
- कुरिन्थ की कलीसिया के सद्गुणों को देखें। आपकी कलीसिया उनकी तुलना में कहां है? आप अपने जीवन में उनकी तुलना में कहां हैं?
- क्या आज आप अपने जीवन में परीक्षाओं का सामना कर रहे हैं? आपको बाइबल के इस भाग से क्या प्रोत्साहन मिला?

प्रार्थना विषय:

- परमेश्वर से वचन करें कि वह आप में कुरिन्थ की कलीसिया के से सद्गुणों की स्थापना करे।
- परमेश्वर का धन्यवाद करें कि उसने आप में जो काम आरंभ किया है उसे पूरा करने की प्रतिज्ञा उसने की है। उससे मांगें कि वह आज आपके जीवन में जिन क्षेत्रों में काम कर रहा है, उन्हें आप पर प्रकट करे।
- समय लेकर उन मनुष्यों के बारे में सोचिए जिन्हें परमेश्वर आपके जीवन में लाया है। उनमें से हर एक के लिए परमेश्वर का धन्यवाद करें।

2

पौलुस, अपुल्लोस, कैफा और मसीह

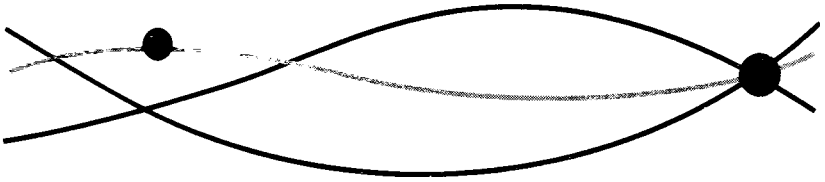

पढ़िए 1 कुरिन्थियों 1:10-17

पिछले अध्ययन में हमने देखा कि कुरिन्थ की कलीसिया में अनेक सद्गुण थे जबकि वे विश्वास में सिद्ध नहीं थे। इस अध्याय में हम देखते हैं कि उनकी कलीसिया में विभाजन हो गया था।

पौलुस यहां एकता के निवेदन से आरंभ करता है। वह कुरिन्थ विश्वासियों से निवेदन करता है कि वे एक दूसरे से सहमत होकर रहें जिससे कि उनमें फूट न पड़े। देखिए पद 1 में वह उनसे भाइयों का सा निवेदन करता है। उसने यहां अपने आपको उनसे बड़ा दिखाने का प्रयास नहीं किया है। भाइयों का सा संबोधन करते हुए वह उनके प्रति सहार्द्र प्रेम दर्शाता है। यह भी देखिए कि वह "हमारे प्रभु यीशु" के नाम में उनको लिख रहा है। वह प्रभु की ओर से और प्रभु के अधिकार में होकर उन्हें निर्देश दे रहा है। वह एक भाई के रूप में परन्तु एक प्रेरित होने के अधिकार में उन्हें निर्देश दे रहा है।

कुरिन्थ के विश्वासियों के लिए पौलुस के मन में एक ही इच्छा थी कि वे एक दूसरे से सहमत रहें और मन एवं विचारों में एक बने रहें (पद 10)। पौलुस का यह वाक्य हमें सोचने पर बाध्य करता है कि क्या पौलुस मनुष्य

के स्वभाव को समझता था? क्या कलीसिया में कभी सब सदस्य आपस में एक मन, एक विचार होकर सहमत हुए हैं? क्या पौलुस इन विश्वासियों से ऐसी आशा रखता है जिसका पूरा होना संभव ही नहीं? पौलुस के कहने का अर्थ क्या था? रोम की कलीसिया को उसने पत्र में लिखा कि विश्वास में निर्बल भाइयों को अपनी संगति में ले लें। उसने उन्हें यह भी याद दिलाया (पद 5) और अन्त में उसने उनको प्रोत्साहित किया कि वे उन बातों का प्रयत्न करें जिनसे मेल मिलाप और एक दूसरे का सुधार हो। (19-20) इससे स्पष्ट होता है कि पौलुस जानता था कि एक पुष्ट कलीसिया में भी छोटी-छोटी बातों अर्थात् धर्मसिद्धान्तों और अभ्यासों पर मतभेद रहता है।

अपने इस पत्र में पौलुस एक विशेष विषय पर चर्चा कर रहा है। पद 11 से हमें जानकारी मिलती है कि पौलुस के पास कुरिन्थ की कलीसिया का समाचार पहुंचा था कि वहां आपस में कलह था। पद 12 से स्पष्ट होता है कि वहां के विश्वासी अगुवों को लेकर अलग अलग गुट बनाए हुए थे जो उनकी आराधना-शैली और उनके व्यक्तित्वों पर आधारित था। कुछ पौलुस के अनुयायी बन गए थे तो कुछ अपुल्लोस के और कुछ कैफा के (पतरस के) परन्तु कुछ ऐसे भी थे जो मसीह के अनुयायी थे। एक गुट अपने आपको दूसरे गुट से अधिक भक्त समझता था।

पद 13 में पौलुस कहता है कि मसीह की देह को विभाजित नहीं होना है। यद्यपि प्रत्येक अगुवे के अपने वरदान और सेवकाई थीं, कलीसिया को तो मसीह के अधीन एक होकर रहना था। पौलुस बहुत ही शक्तिशाली प्रचारक था। प्रेरितों के काम 18:24 में लिखा है कि अपुल्लोस धर्मशास्त्र का अति उत्तम ज्ञान रखता था। पतरस यहूदियों का प्रेरित था। वे विभिन्न क्षेत्र मसीह की देह की परिपूर्ण सेवकाई के लिए थे परन्तु कुरिन्थ के विश्वासी उन पर वाद-विवाद कर रहे थे। शैतान सफलतापूर्वक इन अगुवों के गुणों का उपयोग करके कलीसिया में विभाजन उत्पन्न कर रहा था। हमारे ध्यान देने योग्य बात यह है कि बैरी कैसी चतुराई से वार करता है। वह हमारे गुणों का उपयोग करके अपने दुष्ट उद्देश्यों को पूरा करता है।

शैतान आज हमारी कलीसिया का विभाजन करने में भी सफल हो जाता है। कुछ विश्वासी स्थानीय सुसमाचार प्रचार की आवश्यकता को बहुत बड़ा मानते हैं तो कुछ मिशन क्षेत्र में बाहर निकलने को अत्यधिक महत्त्व देते हैं। कुछ जन वचन की शिक्षा पर अत्यधिक बल देते हैं जबकि अन्य आराधना और सहभागिता पर ध्यान केन्द्रित करते हैं। कभी कभी स्थानीय कलीसिया में

गुट बन जाते हैं। हम उन्हीं के साथ उठते-बैठते हैं जिनके साथ हमें आराम मिलता है। मसीह की देह के कुछ भागों में मैंने ऐसे विश्वासियों को भी देखा है जो अपनी कलीसिया के धर्मसिद्धान्तों और परम्पराओं के प्रति नतमस्तक होते हैं। कुछ विश्वासी अपने आराधनालय एवं कलीसिया के प्रति अत्यधिक श्रद्धालु होते हैं। कुरिन्थ की कलीसिया इस प्रकार की समस्याओं का सामना करनेवाली एकमात्र कलीसिया नहीं थी। ये समस्याएं तो आज की कलीसिया में भी वैसी की वैसी ही हैं।

पौलुस इसी समस्या के विषय में कुरिन्थ के विश्वासियों को कह रहा था कि वे एक मन और एक विचार के हों और आपस में सहमत रहें। उन्हें विभाजन के इन विषयों का त्याग करना था। उन्हें छोटी-छोटी बातों को छोड़कर महत्वपूर्ण बातों पर ध्यान देना चाहिए। पद 13 में पौलुस ने उनसे एक प्रश्न पूछा "क्या मसीह का विभाजन हो गया है?" क्या तुम्हारे पापों के लिए पौलुस ने अपने प्राण निछावर किए थे? क्या तुमने पौलुस के नाम में बपतिस्मा लिया था? कुरिन्थ की कलीसिया पौलुस की बात समझ गई थी कि पौलुस को प्रभु का स्थान देना निन्दाजनक बात है। उनकी उपासना और भक्ति का केन्द्र प्रभु यीशु में होना था। वैरी ने उनका ध्यान मसीह से हटाकर उनके अगुवे पर केन्द्रित करके सफलता प्राप्त कर ली थी।

पौलुस ने उन्हें यह भी स्मरण दिलाया कि उसने क्रिसपुस, गयुस और स्तिफनुस को छोड़ और अन्य किसी को बपतिस्मा तक नहीं दिया था। कुरिन्थ के विश्वासियों को पौलुस का नहीं प्रभु यीशु का अनुसरण करना था। अगुवों के लिए यह परीक्षा होती है कि वे अनुयायियों को इकट्ठा करें। हम जो अगुवे हैं जानते हैं कि प्रशंसा और सराहना की परीक्षा कैसी विकट होती है। पौलुस इस परीक्षा में गिरने से इन्कार करता था। वह मानवीय प्रशंसा और सम्मान का भूखा नहीं था। उसकी एकमात्र इच्छा थी कि प्रभु यीशु का नाम ऊँचा उठाया जाए। परमेश्वर ने उसे मनुष्यों को बपतिस्मा देने और अनुयायियों की भीड़ इकट्ठी करने के लिए नहीं भेजा था। वह अपने ज्ञान को फैलाने और उसकी विचारधारा के प्रशंसकों का सहयोग खोजने नहीं आया था। ऐसे विभाजन के समर्थक नहीं होते हैं (पद 17)।

पौलुस ने एकता का स्पष्ट निर्देश देकर परमेश्वर को छोड़ मानवीय अगुवों के अनुयायी बनने के विरुद्ध कुरिन्थ के विश्वासियों को चेतावनी दी। मैंने ऐसी कलीसियाएं भी देखी हैं जिन्होंने अपने कलिसियाई भेदभाव के कारण मसीह का दर्शन खो दिया है। उनके धर्मसिद्धान्त उत्कृष्ट हैं और वे

परमेश्वर के वचन की सच्चाई का प्रचार भी करते हैं परन्तु उन्होंने अपना पहले का सा प्रेम खो दिया है। कुरिन्थ की कलीसिया की यही मुख्य समस्या थी। वे अपने कार्यक्रम, अगुवों, सेवकाई आदि पर अत्यधिक बल देते थे जिसके कारण वे ध्यान का केन्द्र- प्रभु, से दूर हो गए थे। पौलुस ने उन्हें चुनौती दी कि वे अपनी कलीसिया के सिंहासन पर प्रभु यीशु को बैठाएं। वे क्रूस के सामर्थ को खो देने के संकट में थे। मानवीय अगुवाई और बुद्धि पर दिए जा रहे बल के कारण वे अन्ततः खोखले और सामर्थरहित रह जाएंगे। जब तक मसीह उनकी उपासना का लक्ष्य नहीं होगा तब तक उनके पास इस मरते हुए संसार को देने के लिए कुछ नहीं होगा।

ध्यान देने योग्य बातें:

- आज कलीसिया के विभाजन के क्या कारण हैं?
- क्या आप एक ऐसी कलीसिया के बारे में सोच सकते हैं जिसने अपने ध्यान के केन्द्र से मसीह को हटा दिया है? इसका परिणाम क्या हुआ है?
- कलीसिया के लिए जो सच है वह हमारे जीवन के लिए भी सच है। वे कौन सी बातें हैं जो हमारा ध्यान प्रभु से अलग कर देती हैं?

प्रार्थना विषय:

- परमेश्वर से याचना करें कि वह आपके व्यक्तिगत ध्यान को प्रभु यीशु में केन्द्रित करने में आपकी सहायता करे।
- कुछ समय निकाल कर कुरिन्थ जैसी किसी कलीसिया के लिए प्रार्थना करें जिसने अपने केन्द्र से मसीह को हटा दिया है।
- कुछ समय लेकर अपने आत्मिक अगुवों के लिए प्रार्थना करें। परमेश्वर से प्रार्थना करें कि वह उन्हें अनुयायियों की भीड़ जमा करने की लालसा से मुक्ति प्रदान करें।

3
मानवीय ज्ञान तथा क्रूस

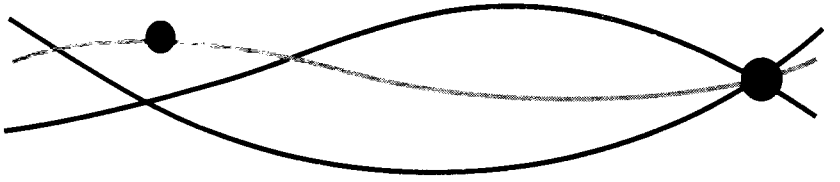

पढ़िए 1 कुरिन्थियों 1:18-31

कुरिन्थ की कलीसिया में एक समस्या यह भी थी कि उसके सदस्य प्रभु के स्थान पर अपने अगुवों के अनुयायी बन गए थे। कुछ लोग पौलुस द्वारा बाइबल के सिद्धान्तों पर दिए गए बल के समर्थक थे तो अन्य अपुल्लोस और कैफा की शिक्षाओं का समर्थन करते थे। इस प्रकार वे विश्वासी क्रूस की सामर्थ विहीन कर रहे थे। वे अपने अगुवों के तौर-तरीकों का प्रचार कर रहे थे। उनके ध्यान का केन्द्र परमेश्वर नहीं था। पौलुस ने उन्हें समझाया कि उनके अगुवों के ज्ञान का अनुसरण करने से उन्हें परमेश्वर का सामर्थ नहीं मिलेगा। उन्हें अपना ध्यान मसीह के क्रूस पर केन्द्रित करना है।

पत्र के इस भाग में वह कुरिन्थ के विश्वासियों से कहता है कि क्रूस का प्रचार, इस संसार के मनुष्यों के लिए "मूर्खता" की बात है। (पद 18) वे जो प्रभु यीशु को नहीं जानते उनके लिए क्रूस केवल मृत्यु और पराजय है। क्रूस को वैसे देखा जाए तो वह अन्तिम अपमान का चिन्ह है। इतिहास के उस युग में क्रूस गर्व का कारण नहीं होता था। क्रूस वह दण्ड था जो अपराधियों को उनके पाशविक अपराध के लिए दिया जाता था। अतः पौलुस के समकालीन

विचारों के मध्य क्रूस की महिमा का कारण कहा जाए तो यह बात उस समय के लोगों की समझ के बाहर थी।

दूसरी ओर, विश्वासी के दृष्टिकोण से क्रूस एक भिन्न विषय था। उनके लिए क्रूस पराजय और मृत्यु का नहीं परन्तु जीवन, विजय और आशा का प्रतीक था। क्रूस पर ही विश्वासियों के पाप क्षमा हुए थे। क्रूस यीशु का अपमान नहीं परन्तु उसकी विजय का चिन्ह था। क्रूस मृत्यु, पाप और शैतान पर प्रबल सामर्थ को दर्शाता था।

पौलुस की शिक्षा में संसार का ज्ञान क्रूस के सामर्थ की बराबरी नहीं कर सकता है। हम अपने सांसारिक ज्ञान से संसार में सब कुछ पा सकते हैं- धन, प्रतिष्ठा, प्रभाव आदि परन्तु पापों की क्षमा नहीं पा सकते। सांसारिक ज्ञान अपनी परिपूर्णता में भी पापियों को नरक जाने से नहीं रोक सकता। क्रूस हमें शैतान के पंजे से छुड़ाकर स्वतन्त्र कर सकता है।

पौलुस कुरिन्थ के विश्वासियों को समझाता है कि परमेश्वर बुद्धिमानों के ज्ञान को मिटा देगा। (पद 19) "बुद्धिमान मनुष्य कहां है?" पौलुस ने पद 20 में पूछा- सांसारिक ज्ञान हमें कहां लाया है? सांसारिक ज्ञान के द्वारा हमने अपने जीवन को सुलभ बना लिया है। हम अपने आयुर्विज्ञान के विकास द्वारा जीवन को कुछ दिन और चला सकते हैं। जो रोग कभी असाध्य माने जाते थे उनका उपचार अब संभव है। संचार का माध्यम विकसित और सुव्यवस्थित हो गया है। आज पृथ्वी की एक छोर से दूसरी छोर तक की यात्रा आसान हो गई है। क्या हमारे इस विकास ने हमें परमेश्वर की निकटता प्रदान की है? क्या इस ज्ञान के द्वारा हम न्याय के दिन परमेश्वर के सामने खड़े होने योग्य हो गए हैं? यदि इन सुख-सुविधाओं के रहते हम अनन्त जीवन में सदा के लिए परमेश्वर से दूर हो जाएं तो क्या होगा?

पौलुस के समय में यहूदी किसी चमत्कारी चिन्ह की प्रतीक्षा में थे। (पद 22) यूनानी महा-ज्ञान की प्रतीक्षा में रहते थे परन्तु पौलुस के पास तो क्रूस पर चढ़े हुए मसीह का सन्देश था (पद 23)। यहूदियों ने क्रूस का त्याग किया। वह तो उनके लिए ठोकर का कारण था। यहूदियों को यीशु से आशा नहीं थी क्योंकि यीशु तो खुद अपने आपको मृत्यु से बचा नहीं पाया था। मसीह का क्रूस पर मर जाना उनकी आशा का अन्त था। वे जो विश्वास करते थे कि परमेश्वर की आशिषें मसीह पर होंगी उनके लिए क्रूस दुख की बात थी। अन्यजाति क्रूस के सन्देश को स्वीकार नहीं करते थे क्योंकि इसमें तर्क नहीं था। एक यूनानी के लिए क्रूस का सन्देश सांसारिक बुद्धि के अनुरूप

समझ की बात नहीं थी। यही कारण था कि क्रूस का सन्देश अस्वीकार किया गया परन्तु जिन्होंने इसे स्वीकार किया, उन्होंने पाया कि यह उद्धार पाने के लिए परमेश्वर का ज्ञान और सामर्थ है। (पद 24)

आज का मनुष्य इन्हीं वर्गों में से एक में आता है। हमारी भेंट ऐसे लोगों से हुई है जो क्रूस की राह के सन्देश को स्वीकार नहीं करते क्योंकि वे आकाश से बिजली गिरने की प्रतीक्षा करते हैं। जब तक उन्हें पौलुस का सा अनुभव (प्रे. का. 9) प्राप्त नहीं होता, वे सुसमाचार को ग्रहण नहीं करेंगे। यीशु के युग के यहूदियों की नाईं वे परमेश्वर के निकट आने के लिए किसी महान चमत्कार को देखना चाहते हैं।

ऐसे मनुष्य भी हैं जो सुसमाचार में तर्क नहीं देख पाते हैं। वे समझ नहीं पाते हैं कि मसीह की मृत्यु उन्हें अनन्त जीवन कैसे दे सकती है। उनके विचार में यह मूर्खता की बात है। उनके विचार में सुसमाचार रूढ़ीवादियों और दुर्बल मस्तिष्क के लोगों की बातें हैं। जिस बात को समझने में उनकी बुद्धि सक्षम नहीं वह यह है कि यदि परमेश्वर मूर्खता करे तो वह संसार के अपरिमित ज्ञान से बढ़कर होती है। (पद 24) परमेश्वर का ज्ञान हमारे ज्ञान के दृष्टिकोण के बाहर सर्वथा भिन्न है। जब परमेश्वर यहूदी या अन्यजाति को उद्धार पाने के लिए बुलाता है तब वे समझ जाते हैं कि मसीह अपने क्रूस के काम के द्वारा अन्तिम सामर्थ और परिपूर्ण ज्ञान है।

पद 26 में पौलुस अपना ध्यान फिर से कुरिन्थ के विश्वासियों पर केन्द्रित करता है। वैसे तो वे बड़े ही साधारण लोग थे। सांसारिकता के परिमाण के अनुसार अधिकांश विश्वासी बुद्धिमान और प्रतिष्ठित नहीं थे। दूसरे शब्दों में, वे संसार की दृष्टि में महत्त्व नहीं रखते थे। तथापि परमेश्वर ने इन साधारण मनुष्यों को चुनकर उनमें महान कार्य किया। उसने उन्हें अपनी सन्तान बनाया और अपने महान राज्य का वारिस ठहराया जिसका मार्ग क्रूस का साधारण सन्देश ही था। ऐसा कोई मनुष्य नहीं है जो यह कहे कि परमेश्वर ने मुझे अनन्त नरक से बचाया क्योंकि मैं धनवान और प्रतिष्ठित था। कहने का अर्थ यह है कि उनमें ऐसी कोई बात नहीं थी कि परमेश्वर उनकी ओर आकर्षित हो। अपने मानवीय ज्ञान के आधार पर उनको उद्धार नहीं मिला था। उनके उद्धार का मार्ग था--क्रूस का साधारण सा सन्देश।

यह उनकी निर्बलता ही थी कि प्रभु यीशु उनके बीच आया। क्रूस के द्वारा कुरिन्थ के विश्वासियों ने दुनिया के बुद्धिमान मनुष्यों को लज्जित किया। परमेश्वर के पुत्र का आत्मा उनमें वास करता था। वे परमेश्वर की दृष्टि में

धनी जन थे। (पद 30) वे परमेश्वर के लिए अलग किए हुए पवित्र जन थे। क्रूस पर यीशु के जीवन के बलिदान द्वारा वे बैरी से मुक्त कराए गए थे। कैसा भी मानवीय ज्ञान उन्हें इस स्थान तक नहीं ला सकता था। केवल यीशु का क्रूस ही उन्हें ऐसी विजय दिला सकता था।

पौलुस ने कुरिन्थ के विश्वासियों को चुनौती दी कि वे मतभेद त्यागकर मसीह में क्रूस के एकमात्र उद्देश्य के अधीन एकमत हो जाएं। यही उनकी शक्ति थी, यही उनकी एकता थी। इस प्रकाश में उनको देखते हुए उनका पौलुस, अपुल्लोस, कैफा का नाम लेना मूर्खता थी। किसी अगुवे के पीछे चलने के कारण कोई किसी दूसरे से अधिक अच्छा नहीं हो जाता है। उनके गर्व का कारण मानवीय बुद्धि या विधि नहीं परन्तु प्रभु यीशु का क्रूस पर किया गया काम और जीवन था।

मेरे विचार में यह सिद्धान्त आज हम पर भी लागू होता है। क्या हम अपने आपको मसीह में अपने भाई या बहिन से अच्छा समझते हैं क्योंकि हम किसी विशेष कलीसिया के सदस्य हैं या हम किसी विशेष धर्मसिद्धान्त के पालक हैं या हमारे अभ्यास उत्तम हैं? क्या हम अपने भाई और बहनों के समान हर बात में क्रूस पर निर्भर करते हैं? हमारा घमण्ड क्रूस में होना चाहिए।

ध्यान देने योग्य बातें:

- ऐसी क्या बात है जो आपके अविश्वासी मित्रों को प्रभु से दूर रखती है? इसके बारे में इस गद्यांश में हम क्या पाते हैं?
- आपके विचारों में क्या ऐसा भी समय है जब विश्वासी क्रूस से लजाते हैं क्योंकि वे संसार के ज्ञान के अनुरूप अपने आप को नहीं देख पाते है?
- ऐसी कौन सी बातें हैं जिन पर हम विश्वासी होने के कारण घमण्ड कर सकते हैं? क्या ये बातें वास्तव में उचित हैं? हमारे एकमात्र गर्व का कारण क्या है?
- विश्वासी होने के नाते हमारी एकता का स्रोत पौलुस किसे बताता है?

प्रार्थना विषय:

- समय लेकर प्रार्थना करें कि परमेश्वर आपके अविश्वासी मित्रों तक उतर आए और क्रूस का सामर्थ दिखाए।
- क्या आप अन्य विश्वासियों की आलोचना करने और उन्हें नीचा देखने के दोषी हैं। क्योंकि वे आपके समान काम नहीं करते? परमेश्वर से इसकी क्षमा मांगें।
- परमेश्वर से याचना करें कि वह आपको मनुष्यों के लिए गहरा प्रेम प्रदान करे जो उनके धर्मसिद्धान्तों और कलीसियाई मान्यताओं से अलग हो।

4

क्रूसित मसीह को जानना

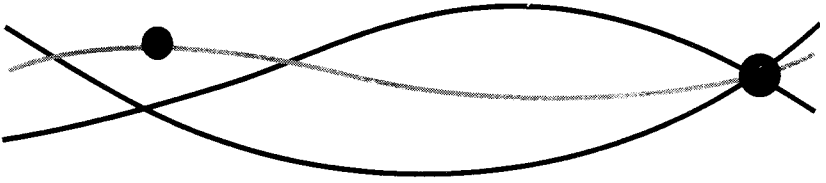

पढ़िए 1 कुरिन्थियों 2:1-5

अध्याय एक में पौलुस ने कुरिन्थ के विश्वासियों को मानवीय ज्ञान पर निर्भर रहने के संकटों से चिताया था। उसने उन्हें समझाया कि वे उनके धन और बुद्धि के द्वारा आनेवाले क्रोध से नहीं बचाए गए थे। वे साधारण जन थे और उनका सन्देश भी सीधा सा था। उनका सामर्थ उनकी योग्यता में नहीं परन्तु मसीह के क्रूस में था। इसके बाद प्रेरित पौलुस ने उन्हें यह गवाही दी कि किस प्रकार यह सिद्धान्त उसकी उस सेवकाई के कारण सिद्ध हुआ जो वह उनके मध्य कर रहा था।

पद 1 में पौलुस कुरिन्थ के विश्वासियों को यह एक बात स्पष्ट करता है कि जब वह उनके मध्य सेवा करने गया था तब वह एक ज्ञानवान उत्तम भाषण देनेवाले मनुष्य के रूप में नहीं गया था। यहां यह तथ्य जान लेना उचित होगा कि सब प्रेरितों में पौलुस संभवत: सबसे अधिक पढ़ा-लिखा और अच्छा वक्ता था। नये नियम में आप देखेंगे कि सबसे अधिक पौलुस के लेख हैं। पौलुस की बुद्धि तीव्र थी परन्तु वह यह समझ चुका था कि कुरिन्थ में सेवा करने के लिए आवश्यकता ज्ञान की बहुतायत की नहीं थी। कुरिन्थ

पहुंचने पर उसने यह देखा कि सुसमाचार का प्रभाव उसके ज्ञान और योग्यता से नहीं होगा। वह जानता था कि यदि वह मानवीय ज्ञान और उपदेशों की उत्तमता के द्वारा प्रचार करेगा तो वह वहां सफल नहीं होगा। अत: उसने एक निर्णय लिया कि वह कुरिन्थ में प्रचार करते समय केवल एक ही बात पर स्थिर रहेगा- क्रूस पर चढ़ाया गया मसीह। (पद 2) हमें इस बात पर बड़ी सावधानी से ध्यान देना है।

क्रूस पर चढ़ाए हुए मसीह से पौलुस का तात्पर्य दो बातों में था। पहला, मसीह का क्रूस उसके प्रचार और उसकी शिक्षा का केन्द्र था। यदि कुरिन्थ के निवासियों को वह कुछ सुनाना चाहता था तो वह एकमात्र मसीह का सुसमाचार था। पद 4 में उसने कुरिन्थ के विश्वासियों को लिखा कि उसके प्रवचन मानवीय ज्ञान और कर्णलोभी (कायल करने वाले) शब्दों से भरे हुए नहीं थे। उसका प्रचार केवल एक ही विषय पर केन्द्रित रहता था-- मसीह का क्रूस।

क्रूस पर चढ़ाए हुए मसीह से पौलुस का दूसरा तात्पर्य यह था कि वह प्रचार करने के लिए मानवीय ज्ञान की अपेक्षा क्रूस के सामर्थ पर निर्भर रहता था। पद 4 में वह कुरिन्थ के विश्वासियों से यही कहता है। वह उन पर स्पष्ट करता है कि उसका प्रचार मानवीय ज्ञान से पूर्ण नहीं था, उसमें आत्मा और सामर्थ भरा हुआ था। अध्याय 1 में हमने देखा कि क्रूस का समाचार उद्धार के निमित्त परमेश्वर का सामर्थ था (1:18)।

हम कितनी बार हम इस गंभीर सत्य से पथभ्रष्ट हुए हैं? संसार को मसीह की आवश्यकता है, इसका विश्वास दिलाने के लिए क्या करना होगा? हमें यह सिखाया गया है कि प्रचार कार्य में सफलता सही विधि का प्रयोग करने से प्राप्त होती है। हमने कितनी बार इस विश्वास के साथ वचन की चर्चा लोगों में की है कि हम उन्हें उचित शब्दों के प्रयोग द्वारा मसीह में ला सकते हैं? इसमें परमेश्वर का सामर्थ कहां है? क्या हम अपनी तकनीक और सांसारिक ज्ञान पर निर्भर करके संसार को मसीह में जीतना चाहते हैं? पौलुस हमें कह रहा है कि संसार को मसीह में जीतने का सामर्थ केवल क्रूस ही है। क्रूस की साधारण चर्चा ही उद्धार के लिए पर्याप्त है। हमें उच्च शिक्षा की भी आवश्यकता नहीं है। हमें प्रत्येक आपत्ति के लिए उत्तर खोजने की भी आवश्यकता नहीं है। हमें केवल क्रूस पर चढ़ाए हुए मसीह का सन्देश देना है। इसी के द्वारा परमेश्वर आत्माओं को जीत लेगा। एक साधारण मनुष्य भी प्रभु की प्रभावी गवाही बन सकता है।

पौलुस ने कुरिन्थियों को लिखा कि उसने जानबूझकर प्रचार का यह विषय उनके लिए चुना था जिससे कि उनका विश्वास मानवीय ज्ञान की अपेक्षा परमेश्वर के सामर्थ पर स्थिर हो जाए। (पद 5) पौलुस के लिए अनुयायी जमा कर लेना कोई बड़ी बात नहीं थी परन्तु उसकी मनोकामना यह थी कि मनुष्य उसके ज्ञान और भाषण-क्षमता की अपेक्षा उसमें मसीह के सामर्थ को देखें। वह अपने जीवन और प्रचार को मसीह से और उसके सामर्थ से भर देना चाहता था जिससे कि मनुष्यों को क्रूस पर चढ़ाए मसीह की अपेक्षा और कुछ न दिखाई दे कि वह उसमें जीवित है और क्रियाशील है। इसका कारण यह था कि वे पौलुस की ओर नहीं मसीह की ओर आकर्षित हों। लोग आपके जीवन में क्या देखते हैं।

इस गद्यांश में हम एक बात और देखते हैं, देखिए पद 3 में वह लिखता है कि निर्बलता में, भय के साथ कांपते हुए वह वहां गया था। यह मान लेना कठिन है कि पौलुस जैसा व्यक्ति डरता होगा और कांपता होगा। हम पौलुस को असीम आत्मविश्वास और आत्मिक योग्यता का मनुष्य मानते हैं परन्तु पौलुस का आत्मविश्वास अपना नहीं मसीह का था।

जब वह अविश्वासी था तब उसे अपनी प्रतिभाओं पर बड़ा भरोसा था। उसने मसीही कलीसिया को पकड़ने की अनुमति पाने के लिए महायाजक के पास जाने में आत्मविश्वास की कोई कमी नहीं दिखाई थी। अब जब वह मसीह के विश्वास में आ गया था तब उसका आत्मविश्वास जाता रहा था। वह जानता था कि कुरिन्थ में प्रचार करते समय अति संभव था कि वह अपने सांसारिक ज्ञान और मानवीय योग्यता को बीच में ले आए। अत: वह घमण्ड से खाली होकर प्रभु के सामर्थ पर भरोसा रखकर गया था। यह एक भयावह बात थी क्योंकि अपनी शक्ति और योजना को तो हम जानते हैं परन्तु परमेश्वर हमें कहां ले जाएगा और हमारा भोजन कहां से आएगा नहीं जानते हुए आगे बढ़ना बहुत कठिन होता है। पौलुस निश्चय ही जानता था कि अपनी योग्यता और क्षमता में वह इस काम के लिए अधूरा था। उसमें आत्मविश्वास नहीं था। मेरे विचार में हमें अपनी सेवकाई में ऐसी स्थिति में होना चाहिए। परमेश्वर अब पौलुस पर अपनी विश्वासयोग्यता सिद्ध करेगा और उसका प्रभावी उपयोग करेगा। वह आपके लिए भी ऐसा ही करेगा यदि आप उस पर और क्रूस के सामर्थ पर भरोसा रखें।

ध्यान देने योग्य बातें:

- एक पल सोचिए कि पिछली बार कब आपने किसी से प्रभु के बारे में चर्चा की थी। उस समय क्या आप प्रभु पर निर्भर थे या अपनी योग्यता पर कि उन्हें विश्वास दिला सकें?
- मनुष्य आपकी सेवा और आपके जीवन में मसीह का कितना अंश देखते हैं?
- इस भाग से आपको कितना प्रोत्साहन मिलता है? वे लोग कौन हैं जिन्हें परमेश्वर चुनता है कि उसके नाम में सेवकाई हेतु प्रयोग किए जाएं?
- सेवकाई में आपके भय क्या हैं? परमेश्वर की सेवा में पीछे हटने के कारण आपमें क्या हैं? कुरिन्थ में प्रचार करने के लिए जाते समय पौलुस कांप रहा था, इससे आपको क्या प्रोत्साहन मिलता है?

प्रार्थना विषय:

- क्या आप ने अपने आस-पड़ोस में मसीह की चर्चा करते समय अपनी क्षमता पर भरोसा किया है। परमेश्वर से क्षमायाचना करके उसके सामर्थ में चलने की सहायता मांगें।
- प्रार्थना करें कि मसीह का सामर्थ और जीवन आप में दिखाई दे।
- परमेश्वर से याचना करें कि आपके भय और कांपने के उपरान्त भी वह आपको निर्भीकता प्रदान करे।

5
आत्मा की बुद्धि

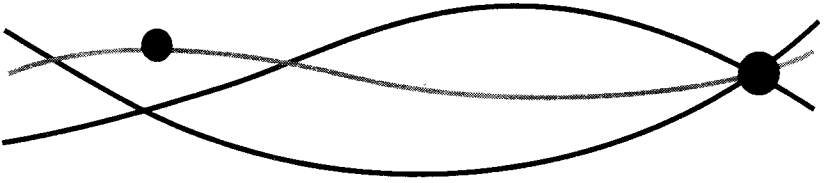

पढ़िए 1 कुरिन्थियों 2:6-16

पौलुस ने कुरिन्थ के विश्वासियों को स्पष्ट कर दिया था कि उसका प्रचार मानवीय ज्ञान से संबन्धित नहीं था। इसका अर्थ यह नहीं कि पौलुस मूर्खता भरी बातें करता था अपितु गहराई में देखा जाए तो उसका प्रचार बुद्धि की बातें था परन्तु यह बुद्धि सांसारिक ज्ञान नहीं था। सांसारिक ज्ञान तो एक दिन समाप्त हो जाता है। हमारा विज्ञान चाहे किसी भी क्षेत्र में हो प्रभु के न्यायासन के सामने किसी काम का नहीं रहेगा। प्रेरित पतरस के कथनानुसार यह पृथ्वी एक दिन जलकर समाप्त हो जाएगी। (2 पतरस 3:10)

पौलुस सांसारिक ज्ञान का प्रचार करने में रुचि नहीं रखता था। पौलुस तो उस बात का प्रचार करता था जो रहस्यमय ज्ञान था। यह तो संसार के आरंभ से पहले का ज्ञान था। परन्तु संसार से छिपाकर रखा गया था। (पद 7) पौलुस के युग के शासक इस ज्ञान से अनभिज्ञ थे क्योंकि यदि वे इस ज्ञान से पूर्ण होते तो वे यीशु को क्रूस पर नहीं चढ़ाते। इससे हमें यह स्पष्ट समझ में आता है कि पौलुस यीशु के जीवन और काम के बारे में प्रचार करता था।

यूहन्ना के सुसमाचार में यूहन्ना कहता है कि यीशु "वचन" था अर्थात् परमेश्वर की बुद्धि (यूहन्ना 1:14)। यीशु मनुष्य के उद्धार के लिए परमेश्वर की योजना को पूरी कर रहा था। उसमें हमारे अस्तित्व का सार है। संसार में अनेक बुद्धिमान जनों ने जीवन का उद्देश्य और अर्थ समझने का प्रयास किया। केवल मसीह में ही उसमें और उसके काम में परमेश्वर का अपार ज्ञान निहित है।

जिन मनुष्यों पर यह ज्ञान प्रकट किया गया है उनके लिए एक महान प्रतिज्ञा दी गई है। पौलुस कहता है कि परमेश्वर ने अपने प्रेम करनेवालों के लिए जो योजना बना रखी है उसे किसी ने नहीं देखा है। (पद 9) किसी ने यह भी नहीं सुना कि इस ज्ञान के ग्रहण करनेवालों के लिए परमेश्वर ने कैसी महिमा आरक्षित की हुई है। हमारी बुद्धि परमेश्वर की इस महान योजना को अन्तर्ग्रहण करने के योग्य नहीं है जो उसने मसीह में विहित की है। मनुष्य ने अपने सांसारिक ज्ञान में जीवन को अधिक सुविधाजनक और आकर्षक बना लिया है। जीवन को भी अधिक लम्बा कर लिया है। हमने घातक माने जाने वाले रोगों को साध लिया है। ये उपलब्धियां उन बातों के सामने महत्त्वहीन हो जाती हैं जो परमेश्वर ने अपने प्रेम करनेवालों के लिए रखी हुई हैं।

पद 10 में पौलुस कहता है कि यह पवित्र आत्मा का कार्य है कि वह विश्वासियों पर परमेश्वर के गहन सत्य को प्रकट करे। जिस प्रकार हम अपनी मानवीय आत्मा द्वारा सांसारिक ज्ञान को ग्रहण करते हैं उसी प्रकार हमें परमेश्वर के आत्मा की आवश्यकता होती है कि हम आत्मिक ज्ञान को ग्रहण करें। अपने भीतर परमेश्वर के आत्मा को ग्रहण किए बिना हम मसीह के मुक्तिकार्य को न तो समझ पाएंगे और न ही किसी को समझा पाएंगे (पद 13)।

वे जो विश्वास नहीं रखते उनमें पवित्र आत्मा का जीवन व बुद्धि नहीं होती है इसलिए वे परमेश्वर की बातों को नहीं समझते क्योंकि इन सच्चाइयों को समझने के लिए आत्मा को नियन्त्रित विवेक की आवश्यकता है। (पद 14) आप इस बात को अपने आप में देख सकते हैं। आपने सुसमाचार प्रचार कितनी बार सुना है? आपने कितनी बार सुना है कि प्रभु यीशु आपके पापों के लिए मरा और यदि आप उसे अपने मन में ग्रहण कर लें तो आप परमेश्वर की सन्तान बन जाएंगे? आपने इन शब्दों को सुना परन्तु इन शब्दों में समझ की बात नहीं देखी। आप में आत्मिक विचार को समझने की क्षमता नहीं थी।

ठीक यही बात पौलुस पद 14 में कुरिन्थ के विश्वासियों को समझा रहा था। उसने स्पष्ट कर दिया कि आत्मा से रहित मनुष्य के लिए आत्मा की बातें मूर्खता हैं। केवल वे ही जन जिनमें परमेश्वर का आत्मा है, परमेश्वर का ज्ञान

ग्रहण कर सकते हैं। पौलुस का सन्देश आत्मा से संबन्धित था। उसकी बातें संसार के विद्वानों द्वारा लिखी गई पुस्तकों में नहीं पाई जाती हैं। वह आत्मा के निर्देश में सन्देश देता था। वह आत्मिक ज्ञान को पवित्र आत्मा द्वारा दिए गए शब्दों में व्यक्त करता था और केवल वे ही जिन पर पवित्र आत्मा इस सत्य को प्रकट करता है, इसे समझ सकते हैं।

जब पवित्र आत्मा से रहित मनुष्य पौलुस की बातों को नहीं समझ पाता, एक आत्मिक मनुष्य (जिसमें परमेश्वर का आत्मा है) इन आत्मिक विषयों पर सोच विचार कर सकता है। (पद 15) दूसरे शब्दों में आत्मिक जन परमेश्वर की बातों को समझ सकते हैं क्योंकि उनमें अन्तर्वासी पवित्र आत्मा उन्हें समझ प्रदान करता है।

पौलुस आगे कहता है कि एक आत्मिक जन किसी मनुष्य के न्याय की सीमा में नहीं आता है (पद 15)। इस पद पर टीकाकारों को कुछ परेशानी होती है। पौलुस के कहने का अर्थ यह है कि अविश्वासी जिनमें संसार की केवल प्राकृतिक समझ है, विश्वासियों को समझने में सक्षम नहीं होते हैं क्योंकि विश्वासियों में जीवन का अलौकिक ज्ञान होता है। विश्वासियों को संसार गलत समझता है परन्तु वे केवल परमेश्वर के सामने लेखा देंगे, मनुष्य के नहीं। हम विश्वासियों में आत्मा वास करता है और हम पर प्रभु के विचार प्रकट होते हैं। (पद 16) हम अविश्वासियों की तुलना में अधिक अच्छी समझ रखते हैं और परमेश्वर की इच्छा के अनुसार निर्णय ले सकते हैं क्योंकि हमें प्रभु की आंखों द्वारा संसार का दर्शन दिखाई देता है।

हमारे चारों ओर लोग पाप में नाश हो रहे हैं क्योंकि वे उद्धार के निमित्त परमेश्वर के ज्ञान को नहीं ग्रहण कर पाते। हमें मसीह का मन दिया गया है कि हम अपने पापों को समझें और प्रभु यीशु में क्षमादान का विश्वास रखें। हमें प्रभु का धन्यवाद करना है कि उसने हमें यह समझ दी है।

यह जानते हुए कि अविश्वासी परमेश्वर की बातों को नहीं समझते हमारे सुसमाचार प्रचार में सहायक होना चाहिए। अविश्वासियों को सुसमाचार का नया और अच्छा तरीका नहीं, उनके जीवन में आत्मा का काम चाहिए। इसके कारण हमें बाध्य होना है कि उनकी ओर से घुटने टेककर परमेश्वर से प्रार्थना करें। हम उन लोगों में प्रचार करते हैं जिनमें हमारी बात समझने की क्षमता नहीं है। अत: यह हमारे लिए कैसी महत्त्वपूर्ण बात है कि हम पवित्र आत्मा के साथ काम करें कि वह प्रचार में हमारा उपयोग करे और अविश्वासियों को समझ प्रदान करे। यह हमारा कैसा सौभाग्य है कि इस संसार तक पहुंचने

में हम परमेश्वर के साझेदार हों! यह भी एक सौभाग्य ही है कि परमेश्वर के गहन सत्यों को समझने के लिए हमारी बुद्धि खोली गई है।

ध्यान देने योग्य बातें:

- क्या आप उस दिन को याद कर सकते हैं जिस दिन आपने पहली बार सुसमाचार के सन्देश को समझा था? क्या आप पौलुस की इस बात को प्रासंगिक बना सकते हैं, "मसीह का मन हमें दिया गया है।"
- सुसमाचार सुनाने में सही शब्दों का प्रयोग कितना महत्त्वपूर्ण है? मसीह के लिए एक आत्मा जीतने में हमारी क्या भूमिका है? परमेश्वर के आत्मा की क्या भूमिका है?
- क्या आप में मसीह का मन है? मसीह का मन और सांसारिक ज्ञान में क्या अन्तर है?

प्रार्थना विषय:

- अपने पड़ोस के किसी अविश्वासी के लिए प्रार्थना करें। प्रभु से निवेदन करें कि इस मनुष्य को वह सुसमाचार की समझ दे।
- क्या आप ने कभी अपने आप को सुसमाचार प्रचार में परमेश्वर से आगे भागते हुए देखा है कि आप किसी को अपने विश्वास दिलानेवाले शब्दों द्वारा मसीह के लिए जीत सकते हैं? परमेश्वर से प्रार्थना करें कि वह आपको क्षमा करे और खोए हुओं को जीतने में पवित्र आत्मा की भूमिका को समझाए।
- प्रभु का धन्यवाद करो कि उसने आपके मन को परमेश्वर की बातें समझने के लिए कैसा खोला है।

6

कुरिन्थ की कलीसिया में विभाजन

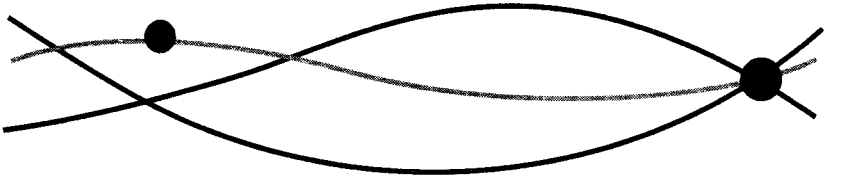

पढ़िए 1 कुरिन्थियों 3

पिछले अध्ययन में हमने देखा कि पौलुस एक आत्मिक जन, जिसमें परमेश्वर का आत्मा है और एक सांसारिक मनुष्य जिसमें परमेश्वर का आत्मा नहीं है, अन्तर समझा रहा था। इस अध्याय में वह कुरिन्थ के विश्वासियों को समझा रहा है कि एक आत्मिक जन और सांसारिक मनुष्य में जो अन्तर है वह सदैव सुस्पष्ट नहीं होता है यद्यपि आत्मिक जनों में परमेश्वर के ज्ञान में जीने की क्षमता होती है, वे ऐसा हमेशा करते नहीं हैं। वे प्रायः एक सांसारिक मनुष्य का सा जीवन व्यतीत करते हैं और उसी की तरह सोचते भी हैं। पौलुस कुरिन्थ के विश्वासियों से कहता है कि वे संसार को आत्मिक दृष्टिकोण से नहीं देखते हैं।

पद 1 में देखिए कि पौलुस कुरिन्थ के विश्वासी पुरुषों को भाई कहकर सबोधित करता है। इसका अर्थ यह हुआ कि वह उन्हें परमेश्वर की सन्तान मानता था क्योंकि उन्होंने प्रभु को ग्रहण कर लिया था और वे परमेश्वर के परिवार के सदस्य थे। यहां एक बात पर ध्यान दें कि वे विश्वास में पौलुस के भाई थे परन्तु वह उन्हें आत्मिक जन नहीं कह रहा है। वे प्रभु यीशु के

ए भी सांसारिक ज्ञान में जीना पसन्द करते थे। यह कैसे दु:ख की बात था! वे मसीह में अभी शिशु ही थे। वे विश्वास में परिपक्व ही नहीं हो रहे थे। उनका विश्वास जीवन आचरण से प्रकट नहीं हो रहा था।

पौलुस उन्हें ठोस आहार नहीं खिला पा रहा था अर्थात् परमेश्वर के गहन सत्यों का ज्ञान नहीं दे पा रहा था। (पद 2) उन्हें प्रभु के साथ जीवन बिताने में अभी शिशुओं का सा दूध चाहिए था। उन्हें मसीह में विश्वास लाए इतना समय हो गया था कि उन्हें वास्तविक परिवर्तन अपने जीवन से दिखाना था परन्तु ऐसा नहीं हुआ था। पौलुस के कहने का अर्थ था कि वे अभी तक सांसारिक ज्ञान में ही थे। (पद 3)

यहां महत्त्वपूर्ण है कि हम ध्यान दें कि पौलुस उनके मसीही आचरण में उन्नति की आशा कर रहा है। क्या आपके जीवन में उन्नति हुई है? क्या आप पिछले वर्ष की तुलना में इस वर्ष प्रभु के अधिक निकट हैं। वह उन्नति मसीही अनुभव के प्रत्येक स्तर पर आवश्यक है। प्राय: होता यह है कि हम अपने मन फिराव के आरंभिक दिनों में महान उन्नति देखते हैं फिर धीरे-धीरे वह समाप्त हो जाती है। विश्वासी चाहे बूढ़ा भी हो जाए उसे मसीही जीवन में लगातार उन्नति करते रहना चाहिए। हम परमेश्वर और उसके अनुग्रह की समझ को पूरा कभी नहीं कर सकते हैं। जय पाने के लिए पाप हमेशा सामने होते हैं और मसीही सेवा में बलवन्त होने की नई नई ऊंचाइयां सदैव उत्पन्न होती रहती हैं। उन्नति को हमारा सामान्य अनुभव बना रहना चाहिए।

कुरिन्थ के विश्वासियों ने अपने मसीही जीवन में उन्नति नहीं की थी। एक प्रमाण था- परस्पर कलह करना और ईर्ष्या करना। कलीसिया रूप में वे छोटे छोटे मतभेदों में उलझे हुए थे। कुछ लोग पौलुस के पीछे थे तो कुछ लोग अपुल्लोस के पीछे थे। इसके कारण उस कलीसिया में विभाजन हो गया था। यह भेद एक ही बात दर्शाता था कि वे विश्वास में उन्नति नहीं कर रहे थे। वे आप मनुष्यों का सा व्यवहार कर रहे थे। (पद 3) कहने का अर्थ यह है कि उनका जीवन अविश्वासियों का सा था।

पद 5-6 में पौलुस उन्हें समझाता है कि अपुल्लोस और वह मसीही सेवकाई में सहकर्मी थे। परमेश्वर ने उन्हें मसीह की देह में अलग-अलग उत्तरदायित्व दिए हुए थे। पौलुस ने सत्य का बीज डाला था और अपुल्लोस उसकी सिंचाई कर रहा था। वे दोनों ही परमेश्वर की ओर निहार रहे थे कि वह उसे विकसित करे और कुरिन्थ के विश्वासियों के जीवन में फल उत्पन्न

हों। पौलुस और अपुल्लोस का एक ही लक्ष्य था कि वे कुरिन्थ के विश्वासियों के जीवन में फल देखें। पौलुस के उदाहरण देने का तात्पर्य था कि एक की सेवकाई को दूसरे की सेवकाई से अधिक महत्त्वपूर्ण समझना अपरिपक्वता का चिन्ह है क्योंकि संपूर्ण प्रक्रिया तो परमेश्वर के हाथ में है और वह जैसा चाहता है वैसा उपयोग मनुष्यों का करता है।

पौलुस कुरिन्थ की कलीसिया के जीवन में अपनी भूमिका को समझता था। वह एक ईमारत का उदाहरण देकर उन्हें समझाता है कि उसने कलीसिया की नींव डाली थी। परमेश्वर ने पौलुस का उपयोग करके सुसमाचार वहां पहुंचाया और नई कलीसिया की स्थापना की। (देखिए रोमियों 15:20) अब यह किसी और का कार्य था कि उसके निर्माण को नींव के ऊपर पूरा करे। यह काम अपुल्लोस ने वचन की शिक्षा के द्वारा पूरा किया।

पौलुस उनसे भी कहता है कि उसकी डाली नींव पर कलीसिया का निर्माण करना उनमें से हर एक का उत्तरदायित्व है। यह प्रभु यीशु का जीवन और कार्य है। (पद 11) उनमें से हर एक मसीह के लिए कलीसिया बनाने का उतरदायी है। विश्वासी होने के नाते उन्हें अपनी पसन्द का सामान लगाने की स्वतन्त्रता है। वे बुद्धिमानी से सोना, चांदी और कीमती पत्थरों का उपयोग करें या मूर्खतापूर्वक लकड़ी, फूस और घास का उपयोग करें। (पद 12) विश्वासयोग्य रहकर सेवा करने से वे सुदृढ़ कलीसिया बनाएंगे जो प्रभु की अग्निपरीक्षा में स्थिर रहेगी। (पद 13) दूसरी ओर वे विश्वासयोग्य न रहे तो कलीसिया घास, फूस और लकड़ी की बनेगी जो अग्नि परीक्षा में ध्वंस हो जाएगी। न्याय का दिन स्पष्ट कर देगा। (2 कुरिन्थियों 5:10) उस दिन मसीह की कलीसिया के निमित्त किया प्रत्येक विश्वासी का काम प्रकट हो जाएगा।

पद 15 में पौलुस उनसे कहता है कि नींव पर ईमारत तैयार करने की जो बात उसने उनसे कही है वह उनके उद्धार के विषय में नहीं थी। उनका उद्धार तो उसी दिन हो गया था जिस दिन उन्होंने मसीह को अपना उद्धारकर्त्ता ग्रहण किया था। घास, फूस और लकड़ी की कलीसिया बनाने वाले को हानि तो होगी परन्तु वह न्याय के दिन उद्धार पाया हुआ ही रहेगा जैसे कि कोई आग से बचाया गया हो। (पद 15)

आइए हम देखें कि पौलुस यहां क्या कहना चाहता है। वह कह रहा है कि कुरिन्थ के विश्वासियों के जीवन की नींव मसीह है इसलिए उन्हें अपना यथासंभव प्रयास करके एक स्थानीय कलीसिया और ऐसा जीवन बनाना है

जो प्रभु को आदर दे। उन्हें एक दूसरे की सेवा में सांसारिक ज्ञान को त्याग कर आत्मिक ज्ञान का उपयोग करना चाहिए।

हमारा पृथ्वी का जीवन न्याय के दिन प्रकट होगा। बाइबल में पृथ्वी पर की सेवकाई में प्रतिफल का उल्लेख है। (मत्ती 5:12; 6:1) कुछ विश्वासी परमेश्वर की सेवा घास, फूस और लकड़ी से करते हैं। वे अविश्वासियों की सी मानसिकता रखते हैं। पौलुस कहता है कि वे स्वर्ग में प्रतिफल से वंचित होंगे। वे अनिष्ठ सेवक कहलाएंगे जिन्होंने अपना परिश्रम और साधन व्यर्थ किए। परन्तु प्रभु उन्हें तब भी अपनी सन्तान मानेगा लेकिन उन्हें परमेश्वर से प्रशंसा प्राप्त न होगी।

विश्वासी होने के नाते हम परमेश्वर का मन्दिर हैं। परमेश्वर का आत्मा हम में वास करता है। (पद 16) हम जब तक इस पृथ्वी पर रह रहे हैं हम अपने मन्दिर के निर्माण में लगे हैं। परमेश्वर के पवित्र मन्दिर होने के नाते हमारा जीवन भी पवित्र है। हमें सावधान रहना है कि हम इन मन्दिरों में परमेश्वर के अनादर की कोई वस्तु न आने दें क्योंकि वह हमारे मन में वास करता है। परमेश्वर के मन्दिर को अशुद्ध करना बड़ी गंभीर बात है। पौलुस ने कुरिन्थ के विश्वासियों से कहा था कि यदि वे अपने-अपने मन्दिर को अशुद्ध करेंगे तो परमेश्वर उनका नाश कर देगा। (पद 17) उनका दोष था कि उनमें ईर्ष्या, कलह, और विभाजन प्रवेश कर गए थे। उन्हें परमेश्वर को लेखा देना होगा।

आज आप अपने मन्दिर का निर्माण किस से कर रहे हैं? क्या आप ईर्ष्या, कड़वाहट और विभाजन की ईंटें काम में ले रहे हैं? आपके मन्दिर के भीतर की सजावट में क्या है? आप अपनी आंखों को क्या देखने दे रहे हैं? आपने अपने मन की दीवारों पर कौन कौन से चित्र टांग रखे हैं?

पौलुस ने कुरिन्थ की कलीसिया से कहा था कि वे अपने आप को धोखा न दें। वे (पद 18) अपने आपको बुद्धिमान समझते थे। वे सोचते थे कि उनमें और परमेश्वर के मध्य सब अच्छा है। वे केवल धोखे में थे। अपने बारे में उनकी आंखें खुलना आवश्यक थीं। वे सांसारिक बुद्धि पर आधारित थे। वे सांसारिकता में लीन थे। वे मनुष्यों में प्रशंसा चाहते थे। वे सेवकाई की उत्कृष्टता और व्यक्तित्व की महानता पर गर्व करते थे, जबकि गर्व करने को महत्त्वपूर्ण बातें अन्य अनेक थीं।

पद 22 में पौलुस उन्हें मसीह में उनकी आशिषों का स्मरण दिलाता है। उनके पास परमेश्वर के महान सेवक पौलुस, कैफा तथा अपुल्लोस थे, जिन्होंने

उनके साथ परमेश्वर के प्रेम को बांटा था। जगत ही उनके लिए परमेश्वर का वरदान था। उनकी मृत्यु और जीवन उसके ही हाथों में थे। उनके वर्तमान और भविष्य की आशा अनुग्रहकारी परमेश्वर का वरदान थी। वे मसीह की सम्पदा थे क्योंकि उसने उन्हें चुनकर अनन्त नरक और कष्टों से बचाया था। परमेश्वर की अद्‌भुत आशिषों के सामने उनके छोटे-छोटे विभाजन महत्त्वहीन थे।

विश्वासी होकर भी हम सांसारिक जीवन जीते हैं। यही तो कुरिन्थ की कलीसिया में हो रहा था। उनमें विभाजन हो गया था। बैरी उनका ध्यान मसीह से हटाकर उनके ऊपर लाने में सफल हो गया था। इसका परिणाम यह हुआ था कि वे विश्वास में उन्नति करने से थम गए थे। उन्होंने मसीह की दृढ़ नींव पर ईर्ष्या और विभाजन की ईंटे रखना आरंभ कर दी थीं।

आज हम विश्वासियों के लिए यह अध्याय कैसी चुनौती है। आप अपने मन्दिर निर्माण में कैसी ईंटें देखते हैं? सोना, चान्दी और कीमती पत्थरों के बीच लकड़ी, भूसा और घास दिखाई देती है। इन घटिया ईंटों को निकालकर परमेश्वर को आदर देनेवाली ईंटें हमें वहां लगाना है।

विश्वासी दो प्रकार के होते हैं। एक तो आत्मिक और दूसरे सांसारिक। दोनों की नींवें एक ही है। अन्तर उनका उस सामग्री में है जिससे वे मन्दिर का निर्माण करते हैं। कुरिन्थ के विश्वासी लकड़ी, घास और भूसा काम में ले रहे थे। आपकी सामग्री क्या है?

ध्यान देने योग्य बातें:

- क्या इस मनन ने आपको जीवन की सामग्री पर आपका ध्यान केन्द्रित करवाया है? जिसकी सफाई आपको करना है वे सामग्रियां क्या हैं?
- इस अध्याय में हमने दो प्रकार के विश्वासियों को देखा है आप किस प्रकार के विश्वासी है आपके जीवन में इसका क्या प्रमाण है?
- अपने आत्मिक जीवन में आप विकास का क्या प्रमाण पाते हैं?

प्रार्थना निवेदन:

- परमेश्वर से प्रार्थना करें कि वह उसको आदर न देने वाली सामग्री का निवारण करें।

- क्या आप अपने साथ के ऐसे विश्वासियों को जानते हैं जो अपने आत्मिक जीवन में विकास नहीं कर पा रहे हैं क्योंकि उनके जीवन में कोई रुकावट है? उनके लिए प्रार्थना करने को कुछ पल निकालें।
- प्रार्थना की उस दृढ़ नींव के लिए धन्यवाद कहें जो उसने हमें दी कि उस पर अपने जीवन का निर्माण करें।

7

प्रश्न पूछा गया

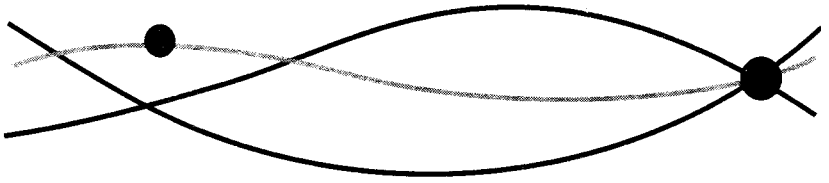

पढ़िए 1 कुरिन्थियों 4:1-5

जैसा कि हम देख चुके हैं कि कुरिन्थ की कलीसिया की समस्याओं में एक थी कि उनमें विभाजन था और वे अपने-अपने अगुवों का अनुसरण कर रहे थे। कुछ पौलुस की ओर थे और कुछ अपुल्लोस की ओर। पिछले अध्ययन में पौलुस उन्हें इस विभाजन की मानसिकता की मूर्खता की ओर लाता है। इस विभाजन के कारण पौलुस को उनके मध्य सेवा करने में कठिनाई हुई थी।

क्या आपकी सेवकाई पर किसी ने प्रश्न किया है या आपकी तुलना किसी अन्य से की है? पौलुस जानता था कि सेवकाई में गिराया जाना क्या होता है। प्रभु यीशु को भी हमेशा सराहा नहीं गया था। वह जानता था कि मनुष्यों द्वारा उसके अधिकार पर उंगली उठाने का क्या दुख होता है। यदि आप सेवकाई में हैं तो एक न एक दिन आप भी इसी स्थिति में होंगे। हम इस विरोध का सामना कैसे करेंगे। पौलुस की प्रतिक्रिया को देखने से हमें सहायता मिलेगी कि कभी हम भी इस स्थिति में हुए तो क्या करें।

उसे अपनी बुलाहट का स्पष्ट बोध था (पद 1)

एक सबसे महत्त्वपूर्ण काम जो हम कर सकते हैं वह है कि हम अपनी बुलाहट के बारे में सुनिश्चित हों। यदि मैं अपनी सेवकाई के बारे में अन्यों की राय पर निर्भर करता तो मैं बहुत पहले सेवकाई छोड़ देता। समस्त कठिनाइयों के बाद भी मुझे यह निश्चय था कि प्रभु यीशु ने मुझे पूरे समय की सेवकाई में बुलाया है। मेरे जीवन में ऐसा अवसर आया था कि मैं अन्य काम देखूं परन्तु हर बार प्रभु मुझे अपनी बुलाहट में लौटा लाया। बुलाहट के इस बोध ने मुझे थामे रखा है।

पौलुस प्रेरित को अपनी बुलाहट का स्पष्ट बोध था। वह समझ चुका था कि वह एक ऐसा सेवक है जिसके सुपुर्द मसीह में परमेश्वर के भेद किए हुए थे। (पद 1) यहां सुपुर्द शब्द बहुत महत्त्वपूर्ण है। परमेश्वर ने उसे एक उत्तरदायित्व दिया हुआ था। परमेश्वर ने उसे अपने जनों के लिए एक सन्देश सौंपा हुआ था और पौलुस भली-भांति जानता था कि उस सन्देश को मनुष्यों में सुनाना उसका परमेश्वर के प्रति एक उत्तरदायित्व था। पौलुस केवल यही जानता था कि उसे परमेश्वर के काम में निष्ठावान रहना था, चाहे मनुष्य कुछ भी कहें। पौलुस अपने आलोचकों का सामना करने के लिए तैयार था क्योंकि वह अपनी बुलाहट को भली-भांति समझता था।

वह अपनी बुलाहट के प्रति अपने आपको विश्वासयोग्य ठहराए हुए था (पद 2)

अपने जीवन में परमेश्वर की बुलाहट को समझने के बाद पौलुस ने उस बुलाहट के पालन हेतु अपने आप को समर्पित किया। प्रभु परमेश्वर ने उसे एक विश्वास का काम सौंपा था और वह जानता था कि उसे उस विश्वास के काम में निष्ठा को दिखाना है।

हम यह निश्चय ही जान लें कि बैरी अपना यथासंभव प्रयास करेगा कि वह हमें परमेश्वर द्वारा दिया गया विश्वास का काम करने से रोके। मैं ने अपने वरदानों के क्षेत्र में सेवकाई के अन्य क्षेत्रों की अपेक्षा अधिक निराशा सहन की है। शैतान ने मनुष्यों की प्रतिक्रिया द्वारा मुझे निराश करना चाहा है। कभी-कभी तो मेरे मन में मेरे वरदानों के लिए सन्देह भी उत्पन्न हुआ है और मैंने परमेश्वर से पूछा भी कि मुझे क्या इस वरदान की सेवकाई को करना है?

अपनी सेवकाई में चुनौती पाते ही पौलुस अपनी बुलाहट पर ध्यान देता था। उसे यह बोध भी था कि यदि परमेश्वर किसी को कोई उत्तरदायित्व देता

है तो वह आशा करता है कि वह मनुष्य उसमें विश्वासयोग्य ठहरे। पौलुस का समर्पण यही था। वह अपनी बुलाहट के प्रति समर्पित था और उसे कोई भी नहीं रोक सकता था।

वह किसी के द्वारा परखे जाने को तैयार नहीं था (पद 3)

अपनी बुलाहट को स्पष्ट करके और उसके प्रति समर्पित होकर उसने कुरिन्थ की कलीसिया से कहा कि वह मनुष्यों के न्याय के अधीन परखे जाने के लिए नहीं है। वह मनुष्यों की राय की तनिक भी चिन्ता नहीं करता था। पौलुस ने उन्हें यह स्पष्ट कह दिया था कि उसका समर्पण मनुष्यों को प्रसन्न करने के लिए नहीं वरन् परमेश्वर को प्रसन्न करने के लिए है। क्योंकि उसकी बुलाहट परमेश्वर से है। उसके लिए उसके प्रति मनुष्यों की राय परमेश्वर की राय से बड़ी नहीं थी। उसने मनुष्यों की अपेक्षा परमेश्वर का विश्वासयोग्य होना चुना।

मैंने देखा है कि ऐसा कहना करने से अधिक आसान है। कितनी बार मैं मनुष्यों की राय के कारण विचलित हुआ हूं। मैं चाहता हूं कि मनुष्य मुझे पसन्द करें। मुझे सराहना और सहयोग की आवश्यकता है। और मैं लोगों की ओर आशा से देखता हूं। इसमें एक संकट यह है कि हम मनुष्यों को प्रसन्न करने लगते हैं।

पूरे धर्मशास्त्र में हम देखते हैं कि परमेश्वर सेवकों को बुलाता है कि वे समय के बहाव के विरुद्ध खड़े हों। जब मैंने अपनी पत्नी से विवाह की शपथ ली थी तब मैं ने आजीवन केवल उसी के साथ निष्ठा निभाने की शपथ ली थी। शपथ लेते समय मैंने यह सोच लिया था कि हम दोनों के मध्य अन्य कोई नहीं आएगा। इसी प्रकार परमेश्वर से उत्तरदायित्व स्वीकार करते समय प्रेरित पौलुस ने समर्पण किया था, जो परमेश्वर के अधीन था। अत: मनुष्य कुछ भी कहें उससे उस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता था। वह अन्यों के कारण अपनी बुलाहट से विचलित नहीं होता था। उसके लिए इस बात का कोई महत्त्व नहीं था कि मनुष्य उसकी या उसके सन्देश की प्रशंसा करें।

यूसुफ पोतिपर की पत्नी का बैरी ठहरा क्योंकि उसने उसके साथ सोने से इन्कार कर दिया था। (उत्पत्ति 39) यद्यपि वह दिन-प्रतिदिन उससे आग्रह करती थी, उसने अशुद्ध होने से इन्कार कर दिया था। दानिय्येल ने अपने परमेश्वर की उपासना त्यागने से इन्कार कर दिया था जिसके कारण उसके अनेक बैरी बन गए थे। (दानिय्येल 6) इसका परिणाम यह हुआ कि उसे शेरों

की मांद में डाल दिया गया था। परमेश्वर की बुलाहट के प्रति निष्ठा निभाने के कारण हमारा परित्याग एवं निन्दा भी की जाएगी। पौलुस की आंखें और कान केवल परमेश्वर के लिए ही थे। उसने केवल परमेश्वर को प्रसन्न करने का संकल्प किया था। मनुष्य क्या कहता है उसकी उसे चिन्ता नहीं थी।

उसने स्वयं को परखने से भी इन्कार कर दिया (पद 3)

यहाँ ध्यान दीजिए कि पौलुस ने अपनी परमेश्वरीय बुलाहट के विषय में अन्यों को वरन् स्वयं को भी परखने की अनुमति नहीं दी। उसने उनको तो अनसुना किया जो उसकी प्रेरिताई पर उंगली उठाते थे साथ ही साथ उसने अपनी बुलाहट के प्रति अपने मन में सन्देह और प्रश्नों को भी स्थान नहीं दिया।

कभी कभी अपना सबसे बड़ा बैरी हम स्वयं ही होते हैं। कितनी बार हम अपनी बुलाहट और योग्यता पर मन में सन्देह करते हैं। बैरी प्राय: हमारी योग्यताओं और वरदानों पर हमारे मन में सन्देह उत्पन्न करता है। मैं खुद भी अनेक बार परमेश्वर के पास यह प्रश्न लेकर गया कि क्या मैं उसके द्वारा दिए गए काम को करने के लिए उचित व्यक्ति हूं। यदि मैं अपने मन में उत्पन्न इन सन्देहों पर ध्यान देता तो बहुत पहले अपनी सेवकाई त्याग देता। धर्मशास्त्र में हम अनेक जनों को देखते हैं कि वे इस संघर्ष में लगे हुए हैं। मूसा ने भी परमेश्वर के सामने अपने मन का सन्देह रखा कि वह बोलने में सक्षम नहीं है (निर्गमन 4:10-13)। यिर्मयाह का अत्यधिक विरोध था अत: वह सोच रहा था कि चुप रहे या परमेश्वर का सन्देश सुनाए। (यिर्मयाह 20:9) मुझे पतरस के बारे में भी सन्देह है कि वह तीन बार प्रभु का इन्कार करने के बाद सेवकाई के लिए तुरन्त तैयार हुआ होगा।

पौलुस जानता था कि उसके जीवन में परमेश्वर की बुलाहट उसकी भावनाओं और उसके मन के सन्देहों के पार थी। वह उस सच्चाई पर प्रश्न नहीं करना चाहता था जो परमेश्वर ने उस पर स्पष्ट कर दी है।

उसका विवेक शुद्ध था (पद 4)

अपनी सेवकाई के विरोध में भी पौलुस शुद्ध विवेक रखना चाहता था। पौलुस अन्यों द्वारा उसकी सेवकाई में डाले गए विघ्न के बाद भी परमेश्वर की बुलाहट को अपने विवेक में स्पष्ट किए हुए था। वह अपने मन के सन्देहों द्वारा भी अपनी बुलाहट में विघ्न नहीं आने देता था। पौलुस कुरिन्थ के विश्वासियों से कहता था कि उसके इस स्वभाव का अर्थ यह नहीं है कि

वह सिद्ध है। वह जानता था कि सेवकाई में उससे चूक हुई थीं। इन भूल-चूकों के बाद भी वह जानता था कि वह उस स्थान पर है जहां परमेश्वर चाहता था कि वह हो। यही उसका शुद्ध विवेक था। उसने परमेश्वर का आज्ञापालन और जो परमेश्वर ने उस पर प्रकट किया है उसका विश्वासयोग्य ठहरना चुना था। अन्य क्या कहते हैं उसकी उसे चिन्ता नहीं थी।

वह प्रभु की प्रतीक्षा कर रहा था कि वह मन के उद्देश्यों को उभारे (पद 5)

ध्यान दीजिए कि मनुष्यों की राय को पौलुस ने प्रभु के सुपुर्द कर दिया था। वह जानता था कि उसकी अपनी सेवकाई के बारे में जो महत्त्वपूर्ण बात थी वह परमेश्वर की राय थी। उसकी सेवकाई में उसके उद्देश्य और उसके तरीकों पर उंगली उठाई जाती थी। पौलुस को आवश्यकता नहीं थी कि वह मनुष्यों पर अपने उद्देश्यों को प्रकट करे। उसने इन बातों को प्रभु के हाथ में छोड़ दिया था। उचित दिन पर प्रभु उसके मन के विचारों का न्याय करेगा। उस समय तक पौलुस जिसे परमेश्वर की बुलाहट कहता है, उसमें अवस्थित रहेगा।

अनेक बार बैरी हमें मनुष्यों की टिप्पणियों द्वारा सेवकाई से विस्थापित करना चाहता है? पौलुस इन बातों को स्वीकार नहीं करता था। न्याय प्रभु के हाथ में छोड़कर वह सेवकाई करता रहा। परमेश्वर हमें भी ऐसा ही करने का अनुग्रह प्रदान करे।

ध्यान देने योग्य बातें:

- परमेश्वर ने आपको क्या सौंपा है? उसने आपको क्या सेवकाइयां दी हैं?
- क्या आप उस सेवकाई में विश्वासयोग्य हैं जो उसने आपको दी है?
- क्या आप अन्यों की बातों से सेवकाई में विचलित हुए हैं? आपको इस गद्यांश से क्या चुनौती मिली है?

प्रार्थना निवेदन:

- परमेश्वर द्वारा आपको दिए गए वरदानों और बुलाहट के लिए उसके आभारी रहें।

- यदि आपको अपने लिए परमेश्वर की सेवकाई के बारे में स्पष्ट बोध नहीं है तो समय लेकर उससे प्रार्थना करें कि वह आप पर अपनी बुलाहट और अपने वरदान स्पष्ट करे।
- परमेश्वर से प्रार्थना करें कि वह आपके लिए अवसरों के द्वारा खोले कि आपके जीवन में उसकी बुलाहट प्रभाव डाले। उससे प्रार्थना करें कि वह आपको अपनी बुलाहट के प्रति निष्ठा प्रदान करे।

8

सुविधाजनक मसीही विश्वास

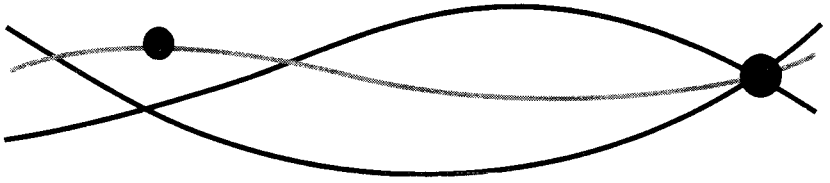

पढ़िए 1 कुरिन्थियों 4:6-21

पौलुस कुरिन्थि वासियों से उनके मध्य विभाजन की चर्चा कर रहा था। वे अपनी सहभागिता में एक प्रचारक को दूसरे प्रचारक से ऊपर उठा रहे थे। इस विभाजन का कारण था-छोटी छोटी ईर्ष्या। पौलुस इस गद्यांश में उनकी इसी घमण्ड और ईर्ष्या की आत्मा के बारे में संबोधन कर रहा था।

पद छः में पौलुस कुरिन्थ के विश्वासियों से कह रहा था कि वे लेखों के बाहर न जाएं। एक की अपेक्षा दूसरे पर गर्व करने से वे परमेश्वर की न्यायिक दृष्टि से अधिक अपने आपको समझ रहे थे। परमेश्वर के वचन की शिक्षा स्पष्ट है कि जो कुछ भी हमारे पास है वह परमेश्वर से प्राप्त है। (पद 7) हमारे पास अपने ऊपर और अपने अगुओं पर गर्व करने का कोई कारण नहीं है। हमने यदि कभी भी कुछ किया है तो उसका श्रेय परमेश्वर को ही जाता है। प्रेरित पौलुस महान होने पर भी जानता था कि उसने जो कुछ भी किया था वह परमेश्वर के अनुग्रह और सामर्थ का परिणाम था। पौलुस जानता था कि वह अन्य सेवकों से बड़ा नहीं है। सुसमाचार में उसका परिश्रम उसके जीवन में सर्वशक्तिमान परमेश्वर के काम का परिणाम था। उसका

जीवन, सेवकाई, प्रभुता संपन्न परमेश्वर के हाथ का अनर्जित वरदान था। यदि उसे गर्व करना ही था तो वह परमेश्वर पर था कि उसने एक अयोग्य पापी के जीवन द्वारा कुछ किया।

कुरिन्थ के विश्वासी इस विचार को समझ नहीं पा रहे थे। अपने घमण्ड में वे सोचते थे कि उन्होंने आत्मिक परिपक्वता प्राप्त कर ली थी। वे अपने आपको आत्मा में समृद्ध समझते थे। (पद 8) वे अपने आप को नगर में आत्मिक राजाओं का सा शासन करते देखते थे। पौलुस का दृष्टिकोण भिन्न था। उसने उनसे कहा कि वह चाहता था कि वे वास्तव में शासक बनें।

जबकि कुरिन्थ के विश्वासी अपनी कलीसिया में सुविधापूर्वक थे, प्रेरितों की संसार में मृत्युदण्ड पाए व्यक्तियों की सी प्रदर्शनी लगी हुई थी। कुरिन्थ के विश्वासी अपने आप को शासक समझ रहे थे परन्तु पौलुस अपने आपको अखाड़े में एक पापी के रूप में देख रहा था। (पद 9) कुरिन्थ के विश्वासियों के सुविधाजनक जीवन की तुलना में प्रेरित जनसमूहों की उलाहना और उपहास का सामना कर रहे थे जो मृत्यु के निमित्त थे। संसार की दृष्टि में प्रेरित मूर्ख थे।

अपने समुदाय में कुरिन्थ के विश्वासी सम्मान का वातावरण बनाए हुए थे, जबकि प्रेरितों को संसार नगण्य और निर्बल समझ रहा था। पौलुस की अनेक बार निन्दा की गई और ठट्ठा उड़ाया गया। वह जहां भी गया उसका अपमान हुआ। वह जानता था कि भूखा और प्यासा रहना क्या है। कुरिन्थ की कलीसिया के समान प्रेरित आधुनिक वस्त्रों में नहीं, फटे पुराने वस्त्र पहनते थे और उनका घर भी नहीं था। (पद 11) उन्हें अपनी सेवकाई का व्यय उठाने के लिए परिश्रम करना होता था। लोग उन्हें श्राप देते थे तो वे उन्हें आशीष देते थे। जब कोई चूक करता था तब वे दया के शब्दों का उपयोग करते थे। मनुष्य उन्हें पृथ्वी का मैल और कूड़ा समझते थे। (पद 13) यह कुरिन्थ की कलीसिया के उस विचार के विपरीत था जो अपने बारे में उनके मन में था।

कुरिन्थ के विश्वासी अपनी मसीही जीवन-शैली में सुख से थे। समाज में उनका सम्मान था। वे राजाओं का सा जीवन बिता रहे थे। वे आत्मिक यात्रा में अपने स्थान से सन्तुष्ट थे। वे सोचते थे कि उन्होंने आत्मिक परिपक्वता प्राप्त कर ली थी।

पौलुस ने उन्हें पद 14 में इसकी चेतावनी दी थी। उसने इसे बड़ी ही कोमलता और सज्जनता से प्रस्तुत किया था। उसने उन्हें विश्वास दिलाया कि

वे उसको प्रिय सन्तान के से थे और वह विश्वास में उनका आत्मिक पिता था। वे उसकी सेवकाई के द्वारा मसीह में आए थे और पिता होने के कारण वह उनके प्रति अपनी चिन्ताओं का वर्णन कर रहा था।

विश्वास में किशोर होने के नाते वे सोचते थे कि उनके पास समस्त उत्तर हैं। उन्हें पौलुस द्वारा अभिभावकीय मार्गदर्शन की आवश्यकता नहीं है। (पद 8) पौलुस ने उनसे आग्रह किया कि वे उसके आदर्श पर चलें। उसने उन्हें चेतावनी दी कि वे सुविधा से पूर्ण विश्वास के जाल में न फंसें। विश्वासी होने के कारण उन्हें यह आशा रखना है कि उनकी ईश्वरभक्ति पर सताव पड़ेगा। (देखिए 2 तीमु. 3:12) पौलुस कुरिन्थियों से कहने में नहीं चूका कि वे उसके कष्टों का अनुसरण करें। (पद 16)

पौलुस का विचार था कि कुरिन्थ के विश्वासियों को सुविधाजनक की मसीही विश्वास की जंजीरों को तोड़ना है। सताव के उपरान्त भी पौलुस स्वतन्त्र मनुष्य था। यद्यपि कुरिन्थ के विश्वासी अपने आप को राजाओं का सा समझते थे, वे वास्तव में उग्र स्वभाव की जंजीरों में जकड़े हुए थे। पौलुस ने तीमुथियुस को वहां भेजने का निर्णय लिया। (पद 17) कि वह उन्हें सिखाए कि परमेश्वर की सच्ची सन्तान का जीवन कैसे जिया जाता है। यहां ध्यान दीजिए कि पौलुस कुरिन्थ विश्वासियों को इस शिक्षा हेतु अलग नहीं करता है। उसने उनसे कहा कि वह जहां भी गया उसने यही शिक्षा दी।

पौलुस की यह चेतावनी हमारे लिए भी है। पौलुस की इच्छा थी कि वह विश्वासियों को परमेश्वर के कामों में आगे बढ़ता देखे। वह हमें भी चुनौती देता है कि हम अपने नगण्य विवादों और सुविधाओं के परे निकल आएं। कुछ कुरिन्थ विश्वासी उद्दण्ड थे। वे सोचते थे कि उन्होंने सिद्धता प्राप्त कर ली है और उनके पास कहने और सिद्धान्तों को मानने का अधिकार था। पौलुस उनकी बातों में नहीं बल्कि उनमें परमेश्वर के सामर्थ में रुचि रखता था। वह उनके कथन को आचरण में देखना चाहता था। पौलुस ने उनसे कहा कि परमेश्वर का राज्य बातों से नहीं सामर्थ से है। (पद 20)

आज हमारे लिए यह एक चुनौती है। काम के करनेवालों की आलोचना करना कैसा आसान काम है। कुरिन्थ विश्वासी ऐसा ही कर रहे थे। वे दूर खड़े रहकर पौलुस और अपुल्लोस में तुलना कर रहे थे। वे उन बातों की आलोचना कर रहे थे जो उनकी अपेक्षाओं से मेल नहीं खाती थीं। काम को कैसे करना है, इस विषय में उनके पास अनेक राय थीं। सच तो यह था कि वे उंगली भी नहीं हिलाते थे कि कुछ करें। हम भी तो सभाओं में बैठकर राय

देते हैं कि किसी काम को कैसे करना है। वे विश्वासी कहां हैं जो उच्चारित विश्वास को कर्मों से दिखाएं?

पौलुस इस बात को बहुत गंभीर विषय मानता था। उसने कुरिन्थ विश्वासियों का आत्मिक पिता होने के नाते कहा कि यदि वे अपने मार्गों में परिवर्तन नहीं लाते तो वह कोड़ा लेकर उनके पास आएगा (पद 21)। परमेश्वर हमें चुनौती दे कि हम सुविधाजनक कुर्सी को छोड़कर वास्तविक जीवन में अपने विश्वास के सामर्थ का प्रदर्शन करें।

ध्यान देने योग्य बातें:

- हमारी आज की कलीसिया को पौलुस क्या कहता है? क्या हम सुविधा के आदि हो गए हैं? क्या आज हम अपनी कलीसिया में आत्मिक राजाओं का सा जीवन व्यतीत कर रहे हैं?
- हमारे समुदाय में वास्तविक आत्मिक आवश्यकताएं क्या हैं? आपकी कलीसिया परमेश्वर के सामर्थ का इन आवश्यकताओं के प्रति प्रदर्शन करने के लिए क्या कर रही है?
- आपके जीवन में परमेश्वर का सामर्थ कैसे प्रदर्शित किया जाता है?

प्रार्थना निवेदन:

- परमेश्वर से याचना करें कि वह हमारे सुविधापूर्ण जीवन और आवश्यकता से अधिक अपने बारे में सोचने के लिए हमें क्षमा करे।
- परमेश्वर से याचना कीजिए कि वह आपके आस-पास की वास्तविक आवश्यकताएं आप पर प्रकट करे। यह याचना भी करें कि वह आपको बताए कि उन आवश्यकताओं के लिए आपको क्या करना है।
- उससे याचना करें कि वह आपके माध्यम से जीवन बदल देने वाले सच्चे सामर्थ का प्रदर्शन करे।

9
पुराना खमीर

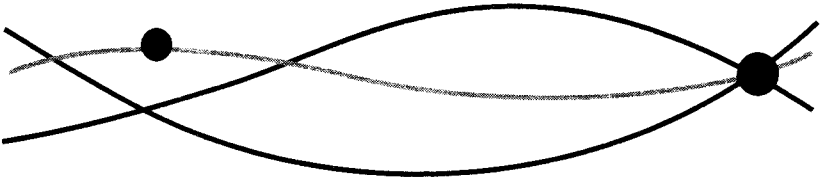

पढ़िए 1 कुरिन्थियों 5

हम देख चुके हैं कि कुरिन्थ की कलीसिया की समस्याएं सांसारिकता (3:1) तथा विभाजन (3:3) थीं। इन पापों के उपरान्त वे आत्मिक विकास में अपने वर्तमान स्थान से प्रसन्न थे। (4:8) पौलुस ने उन्हें बोध कराया कि उनके पाप वृहत्त थे। अध्याय पांच में उनकी गंभीर अनैतिकता का उल्लेख किया गया है जो ऐसी थी कि अन्यजातियां भी ऐसे कामों को करने से घबराती थीं। (पद 1)

वहां एक पुरुष अपने पिता की पत्नी से साथ व्यभिचार करता था। यह स्त्री उसकी माता नहीं थी। यहां हमें यह नहीं बताया गया है कि उसका पिता इस समय कहां था। क्या वह मर गया था? क्या उसने उस स्त्री को तलाक दे दिया था? या वे अब भी साथ थे? यहां यह जान लेना है कि ऐसा काम पाप है जो कुरिन्थ की संस्कृति के अनुसार ही नहीं परमेश्वर की व्यवस्था के अनुसार भी पाप है। (लैव्य. 18:8)

पौलुस को चिन्ता इस बात की थी कि कुरिन्थ की कलीसिया ने उस भाई की ताड़ना नहीं की थी। पद दो में पौलुस कहता है "तुम घमण्ड करते हो?"

(पद 2) पिछले अध्ययन में हमने देखा कि कुरिन्थ के विश्वासियों में धार्मिकता का आत्मविश्वास था। पौलुस उनसे कह चुका था कि वे घमण्डी जन थे। (4:18) सत्य तो यह था। कि उनके पास गर्व का कारण नहीं था क्योंकि उनके मध्य ऐसे पाप हो रहे थे। जिन्हें उन्होंने ढांक दिया था।

कुरिन्थ की कलीसिया को उनके पापों के कारण दोषी ठहराने से पूर्व हम देखें कि क्या हम भी अपनी कलीसियाओं में पापों को अनदेखा कर रहे हैं। इसके अनेक कारण है। हमें परमेश्वर के वचन का परिपूर्ण ज्ञान नहीं है। पास्टर गण नहीं जानते कि परमेश्वर क्या चाहता है। यह भी है कि हम पाप से लगाव रखने के कारण वचन को अनदेखा कर देते हैं। एक और कारण यह भी है कि हम पाप में रहने वालों का विरोध करने से डरते हैं क्योंकि मनुष्यों के विरोध का भय हमें परमेश्वर से अधिक होता है।

पौलुस कुरिन्थ की कलीसिया को कहता है कि वह इस परिस्थिति में क्या करे। आइए हम देखें कि पौलुस ने उनको क्या निर्देश दिए।

अपने मन में पाप का दुख मनाओ (पद 2)

पौलुस ने कहा कि जब वे कोई पाप देखें तो उन्हें दु:ख हो। कितनी बार हम पाप के संबन्ध में कठोर हो जाते हैं। हमने पराजय को आम बात स्वीकार कर लिया है। हम यह नहीं समझ पाते कि जय पाना संभव ही नहीं आवश्यक भी है। परमेश्वर अपने जनों को पाप में गिरता देख प्रसन्न नहीं होता है। उसने हमें विजयी जीवन जीने के लिए अपना आत्मा दिया है। उसका बल और सामर्थ हमारे उपयोग के लिए दिया गया है। हमें यह देखकर दु:खी होना चाहिए कि मसीही विश्वासी पाप पर विजय पाने के लिए इस सामर्थ का उपयोग नहीं करते हैं।

क्या विश्वासियों को पाप में देख आपका दिल नहीं टूटता? क्या आप में परमेश्वर की इच्छा और उद्देश्यों के विपरीत कार्यों के प्रति पवित्र घृणा है? मैं नहीं जानता कि इस गद्यांश में मेरे लिए क्या अधिक दुखदाई है- मनुष्य में अनैतिकता का पाप या, कलीसिया द्वारा पाप पर दुखी न होने का पाप। इससे पहले कि हम कलीसिया में अनुशासन लागू करें हमें ऐसे मनुष्य होना है जो पापों पर दुख प्रकट करे।

पाप का न्याय करो (पद 3)

हम पद 2 पर फिर आएंगे परन्तु अभी पद तीन देखें जिसमें पौलुस कुरिन्थ विश्वासियों से कहता है कि यद्यपि वह उनके मध्य उपस्थित नहीं है,

उसने उस व्यक्ति का न्याय किया है। शैतान हमारे मन में डालेगा कि हम न्याय करनेवाले नहीं हैं। वह हमें अपनी चूकों की याद दिलाता है। वह विश्वासियों को न्याय के नाम से ऐसा भयभीत कर देता है कि वे पाप को अकेला छोड़ देते हैं। इससे शैतान लाभ उठाता है।

पौलुस पाप को पाप कहने से डरता नहीं था। पौलुस उस व्यक्ति का न्याय कर सकता था क्योंकि उसके काम परमेश्वर के वचन के विरोधी थे। जब कोई भाई या बहिन परमेश्वर के वचन को तोड़े तब हमारा यह उत्तरदायित्व बनता है कि हम उनके पाप का न्याय करके उन्हें चेतावनी दें। विश्वासी होने के नाते हमें हर एक बात की तुलना परमेश्वर के वचन से करनी है। यदि हम ऐसा नहीं करते हैं तो शैतान के हाथ में पड़ते हैं।

पौलुस पाप को उजागर करने में चूकता नहीं था और वह कुरिन्थ विश्वासियों से भी ऐसा ही करने को कहता था। यदि हम पाप को उजागर नहीं करते हैं तो इसका अर्थ यह है कि हम उसके साथ रहकर प्रसन्न हैं और शीघ्र ही कलीसिया पापों से भर जाएगी तथा हर एक मानक त्याग दिया जाएगा। ऐसे समय आते हैं जब हमें बैरी का सामना करने की बुलाहट मिलती है और पाप को उजागर कर न्याय करना होता है।

पापी को आपकी सहभागिता से बाहर कर दें (पद 2)

परमेश्वर के वचन के अनुसार पाप को उजागर करके पौलुस उनसे कहता है कि पाप और पापी से वे दूर रहें। उसने स्पष्ट कहा कि वे पापी को सहभागिता से दूर कर दें।

यदि शैतान का उद्देश्य पूरा हो रहा है तो वह हमें परमेश्वर के प्रेम की याद दिलाने से भी नहीं चूकता है। कितनी बार वह हमें समझाता है कि किसी सदस्य का कलीसिया से बहिष्कार प्रेमपूर्ण व्यवहार नहीं है। वह हमें समझाता है कि किसी को पाप में पड़ा रहने देना जय पाने की अपेक्षा प्रेम का अधिक प्रदर्शन है। हमारे मन की गहराई में हम जानते हैं कि यह उचित नहीं है परन्तु कलीसिया में अनुशासन बनाए रखने में हमें ऐसे विषयों से संघर्ष करना पड़ता है।

बहिष्कार के तीन कारण होने चाहिए। पहला कि विश्वासियों को पाप की गंभीरता का बोध हो और वे अपने मसीही जीवन के बारे में इस समय गंभीरता से विचार करें। वे पाप में रहकर परमेश्वर और उसके जनों के साथ सहभागिता नहीं कर सकते। यदि विश्वासी अपने विश्वास के प्रति गंभीर हैं

तो वे पाप को दूर अवश्य करेंगे। अनुशासन के कारण वे समझ जाएंगे कि पाप एक गंभीर बात है जो कलीसिया में स्वीकार्य नहीं है।

दूसरा कि अनुशासन कलीसिया की गवाही को दृढ़ करता है। अविश्वासियों का यह दोष देना आम बात है कि कलीसियाओं में पाखण्डी भरे हुए हैं। इसका मुख्य कारण है कि विश्वासी अनुशासन लागु नहीं करते हैं। यदि हम संसार में अपनी गवाही बनाए रखते हैं तो हमें अपनी सहभागिताओं में से पाप को निकालना है।

तीसरा कि इससे कलीसिया में प्रदूषण फैलने से बचता है। पाप एक महामारी की तरह फैलता है। यदि पाप को कलीसिया में रोका नहीं जाए तो वह शीघ्र ही राज्य करने लगेगा। पाप को बगीचे की बुरी घास की तरह निकाल देना चाहिए। अन्यथा वह अच्छे पौधों को मार देती है।

पद 6-8 में पौलुस पाप की तुलना खमीर से करता है। खमीर को आटे में मिलाते ही वह पूरे आटे में व्याप्त हो जाता है। ऐसा ही पाप है। वह भी तुरन्त फैल जाता है। उसे तुरन्त हटा देना महत्त्वपूर्ण है।

पाप से दूर रहने का सिद्धान्त उन पर प्रभावी है जो कलीसिया में विद्रोह और खुला पाप करते हैं। पौलुस कहता है कि इस नियम को अविश्वासियों पर लागू न करें नहीं तो वे संसार से ही दूर हो जाएंगे। (पद 10) इस संसार के वासी होने के कारण उन्हें अविश्वासियों से संबन्ध रखना है।

विश्वासियों का मानक अलग है। विश्वासियों को उन विश्वासियों से दूर रहना है जो अपने आपको विश्वासी कहकर परमेश्वर के वचन के नैतिक मानदण्ड पर नहीं चलते। (पद 11) पौलुस यहां पापों का उल्लेख करता है: व्यभिचार, लालसा, मूर्तिपूजा, झूठ, पियक्कड़पन और धोखाधड़ी।

पौलुस ने यह नहीं कहा कि मतभेद के कारण किसी भाई को अलग कर दो। वह परमेश्वर के वचन आधारित नियमों के उल्लंघन के बारे में कह रहा था। उसने विभाजन को तो पहले ही दोषी ठहराया है। (3:1-4) कलीसिया की गवाही का अत्यधिक हानि होने का कारण है कि हम अनैतिकता पाप को छोटे छोटे मतभेदों से अलग नहीं कर पाते हैं।

पाप को शैतान के सुपुर्द कर दो (पद 4-5)

पौलुस ने कुरिन्थ विश्वासियों से कहा कि वे उस व्यक्ति को शैतान के हाथ में छोड़ दें जिससे कि उसकी पापी प्रवृत्ति का नाश हो। यहां हमें कुछ

बातों पर सावधानीपूर्वक ध्यान देना है। पद 4 में ध्यान दें कि उस व्यक्ति का शैतान को सौंपा जाना प्रभु यीशु के अधिकार के अधीन काम था। वह व्यक्ति इसके उपरान्त भी परमेश्वर के हाथ में था। इससे हमें अय्यूब का ध्यान आता है। अय्यूब को परमेश्वर ने शैतान को दे दिया था परन्तु उसे छोड़ा नहीं था। शैतान केवल वहीं तक था जहां तक परमेश्वर ने उसे अनुमति दी थी।

यहां यह स्पष्ट है कि शैतान भी वास्तव में परमेश्वर के महानतम् उद्देश्य की पूर्ति करता है। परमेश्वर ने अय्यूब की देह को शैतान के कष्टों हेतु दे दिया कि उसका महानतम् उद्देश्य पूरा हो। परमेश्वर ने राजा शाऊल को एक दुष्ट आत्मा के सुपुर्द कर दिया कि इस्राएल जाने की परमेश्वर का हाथ दाऊद पर था। (1 शमू. 18:10-16) परमेश्वर ने शैतान को अनुमति दी कि वह बाबुल और अश्शूरी राजाओं को इस्राएल को बन्दी बनाने की प्रेरणा दे कि वह उनके पापों का न्याय करे और उन्हें कायल करे। (यिर्म. 25:9-12) परमेश्वर ने शैतान को अनुमति दी कि वह पतरस को फटके कि वह तीन बार यीशु का इन्कार करे जिसके कारण उसका आत्मविश्वास टूटे। (लूका 22:31-32; मत्ती 16:23) परमेश्वर ने शैतान के दूत को भेजा कि वह पौलुस को कष्ट दे जिससे कि वह केवल परमेश्वर के सामर्थ में विश्वास रखे। (2 कुरि. 12:7-9) क्या आप इस बात पर अचम्भा करते हैं कि परमेश्वर अपने महानतम् उद्देश्यों की पूर्ति में शैतान का प्रयोग करता है। ढाढ़स बांधो कि शैतान भी परमेश्वर के महानतम् उद्देश्यों के अधीन है।

इस व्यक्ति को शैतान को सौंप देने के उद्देश्य पर ध्यान दें। उसके पापी स्वभाव का नाश हो और प्रभु के दिन उसकी आत्मा बच जाए। (पद 5) शैतान उसको उद्धार से वंचित नहीं कर पाएगा। शैतान ने उसके साथ जो भी किया परमेश्वर उसी के द्वारा इस व्यक्ति का शोधन करने के लिए उसको साफ करेगा।

यदि कोई सदस्य पाप का त्याग करने से इन्कार कर दे तो यह अनुशासन कलीसिया में कैसे लागू होता है? पहला, कलीसिया इस व्यक्ति के पाप को दूर करने का प्रयास करेगी जिसमें वह मत्ती 18:15-17 को आधार बनाएगी। यदि वह तब भी विरोध करे और पवित्रता को स्वीकार न करे तो उसे सहभागिता और कलीसिया की आशिषों से वंचित कर दिया जाए। उसे प्रभु के हाथों में छोड़ दिया जाए। कलीसिया प्रार्थना करे कि परमेश्वर उनकी कलीसिया में सहभागिता के पाप के कारण आनेवाली बाधा को तोड़ कर उसे पुनःस्थापित करे। आनेवाले कुछ सप्ताह, कुछ महीने और कुछ वर्ष शैतान को उसका आंशिक अधिकार दिया जाए जो प्रभु के हाथ के नीचे हो। दुष्टात्माएं

उसकी देह और मस्तिष्क को पीड़ा देकर प्रसन्न होती हैं कि वह तोड़ा जाए। इस पीड़ा और प्रार्थनाओं के कारण उस व्यक्ति का विद्रोह तोड़ा जाता है। वह पाप के कारण अपनी स्थिति को देखता है। उड़ाऊ पुत्र की तरह आत्मा, देह और जीवात्मा में टूट कर उसे यह बोध हो जाता है कि स्वर्गीय पिता के पास उसे उसकी वर्तमान स्थिति से अधिक विश्राम था। इस प्रकार वह दीन होकर टूटा हुआ दिल लेकर अपनी आवश्यकता के नये बोध के साथ मसीह की देह में लौट आता है। उसका पुन: आगमन ध्यान केन्द्र होकर सहभागिता से प्रेम पाता है।

ध्यान देने योग्य बातें:

- हमें अपने मध्य पाप के साथ व्यवहार करना क्यों कठिन है? आज कलीसिया में अनुशासन लागू करने में हमें कौन सी बाधाओं का सामना करना होता है?
- यह अध्याय हमें अपनी सहभागिता में से पाप निकालने के लिए क्या शिक्षा देता है?
- क्या आपने कभी शैतान को स्वयं पर अधिकार करने का असवर दिया है? इसका आपके जीवन पर क्या प्रभाव पड़ा?
- आज कलीसिया के जीवन में पाप का परिणाम क्या है?

प्रार्थना निवेदन:

- क्या आप आज आप में वास कर रहे विश्वासियों को जानते हैं? समय निकालकर प्रार्थना करें कि परमेश्वर वह सब करे जो उन्हें पुन: उसके पास लाने में आवश्यक है।
- परमेश्वर से याचना करें कि वह हमें- कलीसिया, को क्षमा कर दे कि हमने पाप को गंभीरता से नहीं देखा।
- परमेश्वर से याचना करें कि वह ऐसी कलीसियाओं का उत्थान करे जो पाप की गंभीरता को समझती हैं।

10
विश्वासियों का न्यायालय जाना

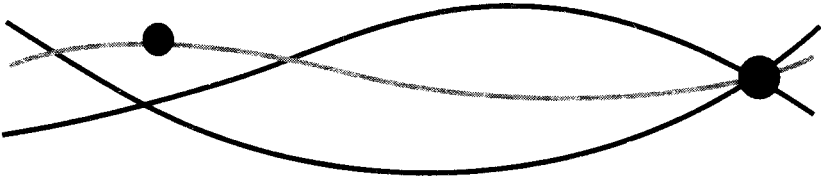

पढ़िए 1 कुरिन्थियों 6:1-11

कुरिन्थ की कलीसिया सिद्धता से बहुत दूर थी। हम देख चुके हैं कि वे कलीसिया में विभाजन से संघर्षरत् थे। (3:1-4) पिछले अध्ययन में पौलुस उन्हें अनैतिकता में पाए गए व्यक्ति से व्यवहार करने का प्रोत्साहन दे रहा है। इस अध्याय में पौलुस कुरिन्थ की कलीसिया के एक और घृणित अभ्यास को उजागर कर रहा है। उन विश्वासियों में मतभेद इतना अधिक था कि वे न्यायालयों की शरण ले रहे थे।

पौलुस ने इस विषय में कठोरता से कहा था कि यदि उनमें मतभेद था तो उन्हें पवित्र जनों को छोड़ अधर्मियों के पास जाने की क्या आवश्यकता थी। (पद 1) पौलुस जानता था कि उनमें गंभीर मतभेद भी थे। वह उन्हें अपने वाद-प्रतिवाद अविश्वासियों के सामने रखने के विरुद्ध चेतावनी दे रहा था।

इसका अर्थ यह न समझा जाए कि पौलुस न्याय पद्धति का तिरस्कार कर रहा था। रोमियों 13:3-5 में पौलुस ने विश्वासियों को कहा कि वे शासन के अधीन रहे क्योंकि परमेश्वर ने सरकार को उनके ऊपर नियुक्त किया था। शासक उचित व्यक्तियों के लिए भय का कारण नहीं हैं। शासन से वे डरते हैं

जो न्यायोचित्त नहीं हैं। शासक परमेश्वर के प्रकोप का दूत है जो अनुचित काम करनेवाले को दण्ड देता है। अत: प्रशासनिक अधिकारियों के अधीन डर के कारण नहीं होना है परन्तु विवेक के कारण। पौलुस ने कहा कि न्याय-तन्त्र परमेश्वर की ओर से होता है और उसका आदर करना आवश्यक है। मसीहियों को भी देश के नियमों का पालन करना है। अन्यथा वे न्यायालयों द्वारा दोषी ठहराए जाएं। कुरिन्थ की कलीसिया की समस्या न्यायालय जाने की नहीं थी। उनकी समस्या थी कि वे अपने मतभेद स्वयं ही दूर नहीं कर पा रहे थे। पौलुस ने दो कारणों के निमित्त उन्हें न्यायालय की शरण में जाने से मना किया था।

संत एक दिन संसार का न्याय करेंगे (पद 2-5)

पहला कारण यह था कि एक दिन उन्हें संसार का न्याय करना होगा। यीशु ने अपने चेलों से मत्ती 19:28 में कहा था कि जब वह (मनुष्य का पुत्र) अपने महिमामय सिंहासन पर बैठेगा तब वे भी बारह सिंहासनों पर बैठेंगे और इस्राएल के बारह गोत्रों का न्याय करेंगे।

प्रकाशितवाक्य अध्याय बीस में यीशु के हज़ार वर्ष के राज्य में विश्वासियों द्वारा मसीह के साथ शासन करने का उल्लेख है। प्रकाशितवाक्य 20:4 में यूहन्ना लिखता है कि उसने उनको सिंहासनों पर बैठे देखा जिन्हें न्याय करने का अधिकार दिया गया था। पौलुस ने 2 तीमुथियुस 2:12 में स्पष्ट किया है कि वे जो धीरज धरेंगे, मसीह के साथ राज्य करेंगे। ये पद तथा अन्य पद हमें स्मरण कराते हैं कि वे जो सच में प्रभु यीशु के हैं एक दिन उसके साथ न्याय करेंगे। पौलुस ने कुरिन्थ विश्वासियों से कहा कि वे स्वर्गदूतों का भी न्याय करेंगे। (पद 3) यहां स्वर्गदूतों से तात्पर्य है शैतान के दूतों का।

यह कैसा महिमा से पूर्ण विचार है कि एक दिन हम मसीह के साथ शासन करेंगे और उसके साथ पृथ्वी का न्याय करेंगे। यदि हम एक दिन पूरे संसार का न्याय करेंगे तो क्या हम कलीसिया के इन छोटे छोटे विषयों का न्याय खुद नहीं कर सकते? यदि उनमें विवाद का कोई विषय था तो वे अपने में सबसे तुच्छ सदस्य को इन विषयों पर विचार करने के लिए नियुक्त कर देते। नागरिक अधिकारियों के पास जाने की क्या आवश्यकता थी। (पद 4-5) क्या उनमें कोई भी ऐसा बुद्धिमान व्यक्ति नहीं था जो इन मामलों को सुलझा सकता था। उन्हें क्योंकर अविश्वासियों के पास जाना पड़ा?

एक दिन मसीह के साथ राज्य करनेवाले विश्वासी होने के कारण कुरिन्थ विश्वासियों को अपनी समस्याओं का समाधान स्वयं ही खोज लेना था।

परमेश्वर ने उन्हें अधिकार दिया था कि वे अपने मध्य किसी भी विवाद का न्याय कर लें। उन्हें कलीसिया के विवाद को लेकर किसी अविश्वासी के पास न्याय खोजने की आवश्यकता नहीं थी।

अविश्वासी संसार के समक्ष हमारी गवाही (पद 6-8)

दूसरा कारण यह था कि विश्वासी यदि अपने विवादों को सब के सामने रखेंगे तो उनकी गवाही क्या होगी? वे विश्वासी जो अपने मतभेदों को स्वीकार नहीं कर सकते, मसीह के काम को कैसी हानि पहुंचाते हैं।

कुरिन्थ विश्वासियों में न्यायिक कार्यवाही होने का अर्थ था कि वे पराजित हो चुके थे। (पद 7) वे संसार के सामने गवाही प्रस्तुत करने में पराजित हो चुके थे। वे विश्वासी होने के नाते परस्पर संबन्धों में पराजित हो चुके थे। वे मसीह की संगति में भी पराजित हो गए थे।

पौलुस ने कुरिन्थवासियों को कहा कि बुराई के बदले बुराई करने के स्थान पर बुराई सहन करना और छल सहन करना उत्तम है। अपने अधिकारों को मांगना कितना आसान है परन्तु पौलुस ने कुरिन्थ की कलीसिया से कहा कि एक गाल के स्थान पर दूसरा गाल भी दिखा दो। प्रतिक्रिया दिखाकर बुराई करने वालों के पापों के साथ अपने पाप बढ़ाने से उत्तम है कि बुराई सह ली जाए।

अन्त में पौलुस कहता है कि बुराई करनेवाला परमेश्वर के राज्य में प्रवेश नहीं करेगा। उसने उन्हें मसीही जीवन से पूर्व के उनके जीवन का स्मरण दिलाया। (पद 9-10) प्रभु यीशु के पास आने से पूर्व वे व्यभिचार के दोषी थे (व्यभिचार, वेश्यागमन और समलैंगिक संबन्ध)। अन्य जन मूर्तिपूजक थे। कुछ लोग चोर थे। कुछ पियक्कड़ थे। कुछ दुराचारी थे। कुछ ठग थे। मसीह में आ जाने से वे धोकर पवित्र किए जा चुके थे। परमेश्वर ने उनके जीवन में हस्तक्षेप करके उन्हें उनके पापी आचरण से मुक्ति दिलाई थी। उन्हें अब उन पापों में जीवन व्यतीत करने की आवश्यकता नहीं थी।

सत्य तो यह था कि कुरिन्थ की कलीसिया ने उस विजय में जीवन यापन नहीं सीखा था जो मसीह में उनकी थी। पौलुस ने उन्हें स्पष्ट कह दिया था कि वे अब भी सांसारिक ही थे। (3:1) पौलुस को उनके उद्धार पर नहीं परन्तु उनकी परिपक्वता पर सन्देह था। पद ग्यारह में वह उन्हें स्मरण दिलाता है कि वे धोए जा चुके हैं (पापों से), अलग किए जा चुके हैं (परमेश्वर के लिए) और धर्मी ठहराए जा चुके हैं (परमेश्वर के साथ सही संबन्धों में।)। परन्तु परमेश्वर की सन्तान होने के कारण उन्हें अभी लम्बी यात्रा करनी थी।

उन विश्वासियों को देखकर कैसा दुख होता है जो अपने जीवन में पापों पर विजय का अनुभव नहीं कर पा रहे हैं। मसीह में पूरी विजय होती है। यहां पराजय में जीनेवाले विश्वासियों का चित्रण किया गया है। यहां वे विश्वासी थे जो एक दिन संसार का न्याय करेंगे परन्तु वे अपनी छोटी छोटी बातों का न्याय नहीं कर पा रहे हैं। वे अपने पारस्परिक संबन्धों में भी जयवन्त जीवन नहीं जी रहे थे।

ध्यान देने योग्य बातें:

- क्या आपको वह अन्तिम समय स्मरण आता है जब आप के साथ बुराई की गई या आप पर कोई झूठा दोष लगाया गया? आपकी प्रतिक्रिया क्या थी?
- क्या आपको वह समय स्मरण है जब आपके साथ बुरा किया गया और आपने निर्णय अपने हाथ में लिया था? उसका परिणाम क्या था? क्या आपके लिए यह अच्छा होता कि आप बुराई सहन करते?
- क्या आपके जीवन में पराजय का जीवन जीने के क्षेत्र हैं? ये क्षेत्र क्या हैं?

प्रार्थना निवेदन:

- समय निकालकर प्रभु से प्रार्थना करें कि वह जयवन्त जीवन जीने में आपकी सहायता करे। उसको धन्यवाद कहें कि आपके लिए यह उसकी मनोकामना है।
- क्या आप ऐसे विश्वासी को जानते हैं जो आज प्रभु के लिए नहीं जी रहा है। समय लेकर प्रार्थना करें कि प्रभु उसको वह विजय दिखाए जो प्रभु में उसकी है।
- प्रभु से याचना करें कि वह आपके जीवन में उन संबन्धों को सुधारे जो ठीक नहीं हैं।

11
व्यभिचार

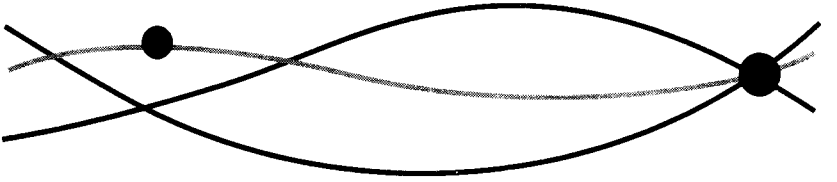

पढ़िए कुरिन्थियों 6:12-20

पौलुस कुरिन्थ की कलीसिया को चुनौती दे रहा था कि वह अपने आत्मिक जीवन में आई बाधाओं को दूर करे। आरंभिक अध्यायों से प्रतीत होता है कि वहां ऐसे अनेक विषय थे। हमने पिछले अध्याय में देखा था कि कुरिन्थ की कलीसिया अनैतिकता और गहन पापों से निकलकर प्रभु में आई थी। (6:9-11) इसका अर्थ क्या यह था कि वह जीवन-शैली उनका जीवन बन गई थी? मसीह को खोजने और उसके मार्गों में चलने के लिए उन्हें मार्गदर्शन की आवश्यकता थी।

पौलुस ने उन्हें दो मुख्य सिद्धान्त देते हुए अपना वचन सुनाना आरंभ किया जो प्रभु और अन्य मनुष्यों के साथ उनके संबन्धों के बारे में था। मेरे लिए सब कुछ उचित है परन्तु लाभकारी नहीं है। मेरे लिए सब कुछ उचित है परन्तु उन्हें अपना स्वामी नहीं बनने दूंगा। (पद 12) पौलुस ने कुरिन्थ के विश्वासियों को स्मरण दिलाया कि वे मसीह में स्वतन्त्र जन थे कि परमेश्वर द्वारा दी गई अच्छी वस्तुओं का आनन्द लें। वे व्यवस्था के अधीन नहीं थे। उन्हें खाने और न खाने के बारे में चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं थी या

विशेष दिनों पर क्या करें या क्या न करें। परन्तु इसका अर्थ यह नहीं कि वे जो चाहें करें। पौलुस ने उन्हें दो मार्गदर्शक निर्देश दिए जो उन्हें यह बताने के लिए थे कि उनके काम स्वीकार्य होंगे या नहीं।

क्या यह लाभ की बात है? (पद 12)

मुझे कुछ करने की स्वतन्त्रता है परन्तु मैं जो कुछ करता हूं वह मेरे लिए या अन्यों के लिए लाभदायक नहीं है। अतिरिक्त समय में पढ़ना अच्छा होता है परन्तु हम जानते हैं कि पढ़ने की हर पुस्तक लाभकारी नहीं है। आपके अवैध काम आपकी पत्नी और बच्चों से आपको दूर करते हैं, ऐसे में आपके काम आपकी पत्नी और बच्चों के लिए लाभकारी नहीं हैं। अत: आपको एक प्रश्न अपने आप से पूछना है, "जो मैं कर रहा हूं क्या वह मेरे लिए या मेरे आस-पास के लोगों के लिए लाभकारी है?" पौलुस कुरिन्थ के विश्वासियों से कहता है कि उन्हें वे काम रोकने पड़ेंगे जो या तो उनके अपने लिए या उनके आस-पास के लोगों के लिए लाभदायक नहीं हैं। उन्हें अन्यों पर अपने कामों के प्रभाव को देखना होगा। यह उचित होगा कि वे ऐसे काम न करें जो किसी भाई या बहिन के लिए ठोकर का कारण बनें। पौलुस ने कुरिन्थ के विश्वासियों को प्रोत्साहित किया कि वे उन बातों से दूर रहें जो लाभ की नहीं थीं।

मैं जो काम करता हूं क्या मैं उसकी प्रभुत्ता में हो जाऊंगा? (पद 12)

पौलुस ने कुरिन्थ के विश्वासियों से कहा कि वे अपने आप से एक और प्रश्न पूछें कि क्या वे अपने कामों की प्रभुत्ता के अधीन हो जाएंगे। यदि हम ईमानदारी से सोचें तो पाएंगे कि हम कुछ कामों के करने में बड़ा आनन्द लेते हैं। वैद्यानिक काम भी हमारे प्रभु बन सकते हैं। यदि हम देखें कि कोई काम हमारा समय, पैसा और शक्ति को ले रहा है तो हम तुरन्त ही उससे मुक्ति पा लें। यह सत्य धार्मिक व अन्य कार्यकलाप में बराबर महत्त्व रखता है। अपने जीवन में मैं बहुत समय तक प्रभु के लिए व्यापार करने का दास था। मैं प्रभु के लिए जो भी संभव था उसे करने के लिए तैयार था। पौलुस ने कहा कि परमेश्वर को छोड़ उस हर एक वस्तु या काम से सावधान रहें जो आपका समय, पैसा और शक्ति का उपयोग करे।

इसके बाद पौलुस व्यभिचार के बारे में स्पष्ट कहता है। (पद 13) "पेट के लिए खाना या खाने के लिए पेट।" परमेश्वर दोनों का नाश करेगा। विश्वासियों की देह व्यभिचार के लिए नहीं परन्तु प्रभु के लिए है और प्रभु

विश्वासियों की देह के लिए है। पौलुस कुरिन्थ की कलीसिया से क्या कहना चाहता था? पेट का एक विशेष काम है। उसे भोजन का पाचन करना है। इसी प्रकार देह का भी एक विशेष काम है। हमें शरीर दिया गया है कि हम उससे प्रभु की सेवा करें। जिस प्रकार पेट भोजन के लिए बनाया गया है उसी प्रकार हमारी देह प्रभु और उसकी महिमा के लिए बनाई गई है। अपनी देह को व्यभिचार के काम में लेने का अर्थ है कि परमेश्वर द्वारा रची गई देह का निरादर। किसी भी अनापेक्षित काम के करने से परमेश्वर का निरादर होता है। पौलुस कहता है कि व्यभिचार और भी चार कारणों से अनुचित है।

हम पुनर्जीवित किए जाएंगे (पद 14)

यह भौतिक शरीर तो एक दिन मिट्टी में मिल जाएगा। मसीह यीशु इस पृथ्वी पर आया और सांसारिक मृत्यु द्वारा मर गया जिससे कि वह मृत्यु और पाप पर विजयी हो। वही शक्ति जिसने यीशु को मृतकों में से जिलाया हमें भी एक दिन मृतकों में से जिलाएगी। हम विश्वासियों को एक अद्‌भुत आशा है। मसीह के साथ अनन्त जीवन व्यतीत करने के लिए हमारा पुनरुत्थान होगा। इससे हमें उस आशा में जीने का कैसा प्रोत्साहन मिलता है। वे जो अनन्त जीवन के बोध में जीवित हैं वे अपनी देह को प्रभु के लिए पवित्र बनाए रखते हैं।

हमारी देह मसीह के अंग हैं (पद 15-18)

व्यभिचार से दूर भागने का दूसरा कारण विश्वासियों के लिए यह है कि वे मसीह की देह के अंग हैं। जिस समय हम प्रभु यीशु को अपना मुक्तिदाता ग्रहण करते हैं उसी क्षण एक गंभीर परिवर्तन हम में आ जाता है। प्रेरित पतरस कहता है कि हम एक चुनी हुई जाति, एक राजसी याजकवर्ग, एक पवित्र प्रजा और परमेश्वर के जन हैं जिससे कि हम उसकी स्तुति करें जिसने हमें अन्धकार से निकालकर इस अद्‌भुत ज्योति में रखा है। (1 पतरस 2:9)

कुरिन्थ की कलीसिया परमेश्वर की चयनित प्रजा थी जिसे उसने अन्धकार से निकालकर अपनी घनिष्ठ और निजी संगति में रखा था।

वे अयोग्य होते हुए भी इस मरते हुए संसार के सामने परमेश्वर के प्रतिनिधित्व और सन्तान होकर खड़े थे। वे उसके साथ अनन्तकाल तक राज्य करेंगे। परमेश्वर उन्हें अपना कहने में प्रसन्न था।

पौलुस उनसे एक प्रश्न पूछता है कि क्या यह उचित है कि मसीह की देह के एक अंग को निकाल कर उसे किसी वेश्या से जोड़ दें? क्या यह

निन्दा का काम नहीं है? व्यभिचार पाप है परन्तु विश्वासियों के लिए यह पाशविकता है क्योंकि इसके कारण प्रभु यीशु का नाम तिरस्कृत होता है क्योंकि उसके साथ वे शुद्ध एकता में जुड़े हुए हैं। व्यभिचार का पाप शरीर और आत्मा दोनों का नाश करता है।

हमारी देह पवित्र आत्मा का मन्दिर है (पद 19)

तीसरा कारण यह है कि उनकी देह पवित्र आत्मा का मन्दिर है। जब वे परमेश्वर की सन्तान बन गए तब प्रभु ने उनके मन में पवित्र आत्मा को रख दिया कि वह उन्हें परमेश्वर की इच्छा के अनुसार जीवन जीने की शक्ति और सामर्थ प्रदान करे। क्या हम पवित्र आत्मा के आवास (मन्दिर) को गन्दा कर सकते हैं? नहीं, हमें तो अपनी देह की देख-रेख और प्रयोग द्वारा परमेश्वर का आदर करना चाहिए।

आपको मूल्य देकर खरीदा गया है (पद 20)

मसीह को ग्रहण करने से पहले कुरिन्थ के विश्वासी अनैतिकता और पाप का जीवन जी रहे थे। प्रभु यीशु ने उन्हें पाप के उस दासत्व से निकाला और क्रूस पर अपने बलिदान के द्वारा उन्हें स्वतन्त्र किया, वह मरा ही इसलिए था कि वे क्षमा किए जाएं और नया जीवन जीएं। अपनी मुक्ति के मूल्य को जानते हुए वे अपने पुराने जीवन में कैसे लौटकर जा सकते थे। उनके लिए तो जीवन की पवित्रता में चलना एक प्रकार की आभारव्यक्ति थी।

परमेश्वर के परिवार का सदस्य होना कैसा सौभाग्य है। हमारी देह पवित्र आत्मा का मन्दिर है और हम इस संसार में परमेश्वर के प्रतिनिधित्व हैं। पवित्र आत्मा के आवास की देख-रेख करनेवाले होने के नाते हमें प्रभु यीशु की महिमान्वय जीवन-शैली को रखना है। यही कारण था कि पौलुस ने हमसे कहा, "व्यभिचार से दूर भागो।"

ध्यान देने योग्य बातें:

- समय निकालकर अपने निर्णय लेने पर ध्यान दें। अपनी जीवन-शैली में पद 12 के सिद्धान्तों को लागू करें।
- यह जानना कि आप मसीह के हैं और पवित्र आत्मा आप में रहता है, जीवन के प्रति आपके व्यवहार पर कैसा प्रभाव डालता है? क्या ऐसी कोई बात है जिसे प्रभु चाहता है कि आप बदलें?

प्रार्थना विषय

- परमेश्वर से याचना करें कि वह आपको आपके जीवन के उन क्षेत्रों को दिखाए जिन्हें इस अध्याय में दी गई पौलुस की शिक्षाओं के अनुसार बदलना है।
- प्रभु का धन्यवाद करें कि उसका पवित्र आत्मा आप में रहता है कि उसके लिए जीने की शक्ति और सामर्थ दे।
- परमेश्वर से याचना करें कि वह आपको शुद्ध और पवित्र जीवन जीने का सामर्थ प्रदान करे।

12
विवाह करें या न करें

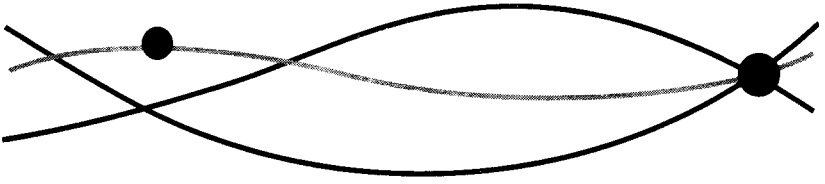

पढ़िए 1 कुरिन्थियों 7:1-9

अध्याय 7 में पौलुस उन प्रश्नों का उत्तर दे रहा है जो एक पत्र में लिखकर कुरिन्थ से उसे भेजे गए थे। (पद 1) पद 1-9 में पौलुस इस प्रश्न का उत्तर दे रहा था कि विवाह करना उचित है या नहीं।

इस प्रश्न का उत्तर देने में पौलुस अपनी व्यक्तिगत राय प्रस्तुत कर रहा था। पुरुष के लिए विवाह न करना ही अच्छा है। (पद 1) अब पौलुस की यह बात उत्पत्ति 2:18 के विरुद्ध है जहां परमेश्वर कहता है। "आदम के लिए अकेला रहना अच्छा नहीं।" पौलुस के कहने का तात्पर्य क्या था?

इसका उत्तर पद सात में है। सहवास की इच्छा स्वाभाविक और प्राकृतिक है तथा विवाहित जीवन में पूरी होती है परन्तु परमेश्वर के कुछ पुरुषों के लिए ब्रह्मचर्य परमेश्वर का वरदान है। पौलुस भी एक ब्रह्मचारी था।

पौलुस के अनुसार विवाह कर्त्तव्यों एवं चिन्ताओं को लाता है। (देखिए पद 32-35) एक विवाहित व्यक्ति प्रभु की चिन्ता के साथ साथ अपने परिवार की चिन्ता भी करता है। एक विवाहित व्यक्ति अविवाहित व्यक्ति के

बराबर समय परमेश्वर को नहीं दे सकता है। पौलुस ने कुरिन्थ के विश्वासियों से कहा कि परमेश्वर को पूरा समय देना तो एक उत्तम विचार है। अविवाहित होने के कारण पौलुस पर भी पारिवारिक उत्तरदायित्व नहीं थे। वह प्रभु की इच्छा के अनुसार कहीं भी आ जा सकता था। उसे पत्नी और बच्चों की चिन्ता नहीं करनी थी। यह एक अच्छी बात थी कि वह स्वतन्त्र होकर पवित्र आत्मा के चलाए चल सकता था।

दूसरी ओर पौलुस यह भी समझता था कि सबको ब्रह्मचर्य का वरदान प्राप्त नहीं है। कुछ की दैहिक आवश्यकता इतनी अधिक थी कि उन्हें विवाह करना उचित था। कुरिन्थ में अनैतिकता इतनी अधिक व्याप्त थी कि पौलुस ने विवाह करने की राय देना ही उचित समझा क्योंकि विवाह में ही परमेश्वर को सम्मान देते हुए वे दैहिक लालसा को पूरा कर सकते थे। यही कारण था कि उसने प्रत्येक पुरुष को और प्रत्येक स्त्री को राय दी कि उनकी अपनी अपनी पत्नियां और अपने अपने पति हों। (पद 2)

पौलुस ने विवाहित व्यक्तियों को राय दी कि वे एक दूसरे के प्रति अपने विवाहित जीवन के उत्तरदायित्वों को पूरा करें (पद 3), अर्थात् अपने शारीरिक संबन्धों को। उसने यह भी कहा कि पत्नी का शरीर उसका अपना ही नहीं है उस पर उसके पति का भी अधिकार है। इसी प्रकार पति का शरीर भी पत्नी का है। (पद 4) यहां एक महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त है जिसे हमें समझना है।

इस पद के द्वारा पति-पत्नी एक दूसरे से अनावश्यक मांग करते हैं परन्तु पौलुस के कहने का अर्थ यह नहीं था। देखिए पौलुस ने इसी प्रकार फिलिप्पी की कलीसिया को क्या लिखा था (5:28-29)। पतिगण अपनी अपनी पत्नियों को अपनी देह के प्रेम का सा प्रेम प्रदान करें। वह जो अपनी पत्नी से प्रेम रखता है वह अपनी देह से भी प्रेम रखता है। अपनी देह से कोई घृणा नहीं करता परन्तु वह उसकी चिन्ता करता है और भोजन देता है। जिस प्रकार मसीह कलीसिया के साथ करता है।

इससे हमें सहायता मिलती है कि पद 4 में लिखी पौलुस की शिक्षा को समझ पाएं। पौलुस के कहने का अर्थ यह था कि विवाह में पति-पत्नी दोनों अपनी अपनी देह का सर्व-सुरक्षित अधिकार त्याग देते हैं। विवाह का अर्थ है एक दूसरे की देह की प्रेमपूर्ण देख-रेख। जीवन साथी को अपने साथी की आवश्यकताओं को अपनी ही आवश्यकता समझना चाहिए। पौलुस ने उन्हें चुनौती दी कि वे स्वार्थ के विचार त्याग दें। वे अपने जीवन साथी की आवश्यकताओं के प्रति जागरुक रहकर उन्हें अपनी व्यक्तिगत आवश्यकता

समझ कर पूरा करें। यहां ध्यान दीजिए कि पौलुस पति-पत्नी दोनों को बराबर अधिकार प्रदान करता है। वह एक की आवश्यकताओं को दूसरे से अधिक मान्यता नहीं देता है।

यदि दम्पत्ति इन सिद्धान्तों को लागू करें तो कितनी वैवाहिक समस्याएं दूर हो जाएंगी? अनेक पति अपनी पत्नी को रसोई में परिश्रम करते देखते हैं परन्तु वे आराम कुर्सी पर बैठे रहते हैं। यदि वे अपनी पत्नियों को अपनी देह का सा प्रेम करें तो क्या वे उनकी वैसी ही सहायता नहीं करेंगे जैसी वे खुद उस स्थान में चाहते हों?

यहां पौलुस पति पत्नियों से यह भी कहता है कि वे एक दूसरे को शारीरिक संबन्धों से वंचित न करें परन्तु एक दूसरे की आवश्यकताओं की चिन्ता करें। इस नियम में छूट का भी प्रावधान है। पौलुस ने यह भी कहा कि कुछ समय ऐसे होते हैं जब उन्हें परस्पर समझौते द्वारा इससे दूर रहना होता है जैसे प्रार्थना का समय। इसमें दोनों की सहमत होना है। बाद में वे फिर अपने संबन्धों में आ जाएं जिससे कि शैतान उन्हें अनैतिकता में न गिरा पाए। (पद 5)

इससे हमें यह समझ में आ जाता है कि शैतान अवसर की खोज में रहता है कि मसीही विवाह का नाश करे। यदि दम्पत्ति कलीसिया के अगुआ हैं तो उनके विवाह का टूट जाना कलीसिया पर विनाशकारी प्रभाव डालता है। हमें शैतान को हमारे विवाहित जीवन में नहीं आने देना है।

पौलुस के विचार में विश्वासियों को प्रभु की सेवा में पूरा जीवन लगा देना है परन्तु वह यह भी जानता था कि सबके पास ब्रह्मचर्य का वरदान नहीं है अत: पाप में गिरकर मसीह का नाम निन्दित न करने के कारण विवाह करना ही उचित है। (पद 9)

कुरिन्थ के विश्वासी अन्धकार से भरे समाज में रह रहे थे। वहां उन्हें परमेश्वर की ज्योति बनना था। अनैतिकता कलीसिया में भी प्रवेश कर रही थी। आज भी विश्वासियों में अनैतिकता चरम सीमा की ओर बढ़ रही है। आत्मिक अगुवे भी शैतान के जाल में फंस रहे हैं। आज हमें पहले से कहीं अधिक मसीह की देह में पवित्र विवाह देखने की आवश्यकता है। हम अपने विवाहित जीवन को अधिक अच्छा बनाने के लिए अधिक निवेश नहीं कर सकते हैं।

पौलुस ने यही कहा कि उसके जैसे विश्वासियों के लिए विवाह आवश्यक नहीं परन्तु कुछ के लिए विवाह आवश्यक भी है। उसने दम्पत्तियों

को प्रोत्साहन दिया कि वे एक दूसरे की आवश्यकताओं को पूरा करें। पौलुस जानता था कि विवाहित व्यक्ति भी व्यभिचार के पाप में पड़ सकते थे।

ध्यान देने योग्य बातें:

- क्या आपके पास ब्रह्मचर्य का वरदान है? आपको यह कैसे मालूम है? इससे आपको प्रभु की सेवा में क्या स्वतन्त्रता प्राप्त हुई?
- क्या पाप अनैतिकता की परीक्षा में आते हैं? आपकी विशेष दुर्बलताएं क्या हैं?
- यदि आप विवाहित हैं तो अपने जीवन साथी के साथ यहां सीखी शिक्षाओं की चर्चा करें।
- क्या आप अपने जीवन-साथी की आवश्यकताओं को अपनी चिन्ता समझते हैं? आप कौन से क्षेत्रों में सुधार ला सकते हैं?

प्रार्थना विषय:

- परमेश्वर से याचना करें कि वह आपके जीवन साथी की आवश्यकताओं को अपनी ही आवश्यकता समझने में आपकी सहायता करे। यदि आप कहीं चूक गए हैं तो परमेश्वर से क्षमा मांगें।
- समय लेकर अपने आत्मिक अगुओं के विवाहित जीवन को प्रभु के सामने लाएं। परमेश्वर से प्रार्थना करें कि वह आपके आत्मिक अगुवों की सहायता करे कि उनका विवाहित जीवन दृढ़ हो कि अन्यों के लिए एक आदर्श ठहरे।
- परमेश्वर से उस विषय क्षमा मांगें जब आपने अपने जीवन साथी से अपने बराबर प्रेम नहीं रखा। परमेश्वर से सहायता मांगें कि वह सब बातें सुधार दे।

13
पृथकीकरण

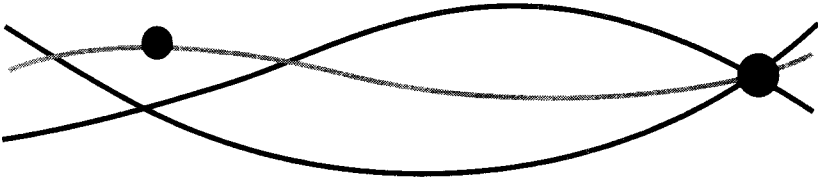

पढ़िए 1 कुरिन्थियों 7:10-24

विवाह के प्रश्न का उत्तर देने के बाद पौलुस ने कुरिन्थ की कलीसिया में विवाहित जनों को संबोधित किया। विशेष करके उनको जिनके जीवन साथी अभी भी अविश्वासी थे।

ऐसे अनेक विश्वासी वहां थे। उन्हें क्या करना चाहिए? क्या उन्हें उनसे विवाह विच्छेद कर लेना चाहिए? पौलुस ने इस विषय में उनके पालन हेतु कुछ मुख्य सिद्धान्त दिए।

विश्वासी अविश्वासी साथी से अलग न हों (पद 10)

पद 10 में पौलुस एक सामान्य नियम बताता है कि विश्वासी जन अपने अविश्वासी साथी से अलग न हों। मसीह को ग्रहण करने से पहले की विवाह शपथ अब भी लागू थी। विश्वासियों को अपने अविश्वासी जीवन-साथी के साथ निष्ठा निभाकर उससे प्रेम करना है। (पद 10) जो एक आसान काम नहीं होगा। विश्वासी होने के कारण उनकी मित्रता परमेश्वर के साथ नई प्रकार की होगी और उनके मार्ग परमेश्वर के पवित्र मार्ग होंगे। उनके

जीवन-साथी उनके जीवन के इस परिवर्तन को नहीं समझेंगे और न ही स्वीकार करेंगे। हो सकता है कि वे प्रभु के साथ उनके संबन्धों के विरोधी भी हो जाएं। इन सब कठिनाइयों के उपरान्त भी उन्हें अपने विवाह में निष्ठावान रहना है जिससे कि प्रभु का नाम आदर पाए।

पद 10 पर ध्यान दीजिए कि पौलुस की यह शिक्षा वास्तव में प्रभु यीशु की शिक्षा थी (देखिए मत्ती 5:31-32, 19:5-8)। यह परमेश्वर की इच्छा है कि विश्वासी अपने अविश्वासी जीवन साथी के साथ निष्ठा निभाएं। वह जिसने विश्वासियों को बुलाया है वह भी उनका विश्वासयोग्य ही रहेगा। वह अपनी सन्तानों को सामर्थ देगा कि वे कठिनाइयों में भी निष्ठावान बने रहें।

प्रभु हमारे दुख को जानता है। वह हमें उस काम के लिए नहीं कहेगा जिसके लिए उसने हमें सामर्थ नहीं दिया है। हम अपनी समस्त परेशानियों में उस पर भरोसा रख सकते हैं।

यदि कोई विश्वासी विवाह विच्छेद करे तो उसे अविवाहित ही रहना है (पद 11-12)

इन नियमों की तो उसने स्थापना कर दी परन्तु उसे बोध हुआ कि कुछ परिस्थितियां ऐसी होती हैं कि एक अविश्वासी के साथ जीवन निर्वाह असंभव हो जाता है। इस पापी संसार में एक अविश्वासी के साथ रहने से परिवार की सुरक्षा को संकट हो सकता है। अविश्वासी जन अपने विश्वासी जीवन-साथी पर प्रहार भी करता है। यह भी हो सकता है कि अविश्वासी जीवन-साथी का जीवन बच्चों को प्रभु से दूर कर दे। ऐसी स्थिति में यदि विश्वासी जन पौलुस के परामर्श के अनुसार अपने जीवन-साथी के साथ रहे तो क्या होगा? पौलुस ने देखा कि उसकी राय कुछ परिप्रेक्ष्यों में व्यवहारात्मक नहीं थी। ऐसी स्थिति में विवाह-विच्छेद संभव हो तो विश्वासी अलग होकर विवाह न करे और अविश्वासी जीवन-साथी से मेल की खोज करे।

यदि अविश्वासी साथी साथ रहना चाहे तो विश्वासी जन विवाह विच्छेद न करे (पद 13-14)

पौलुस ने स्पष्ट कहा कि यदि विश्वासी जन अपने अविश्वासी जीवन साथी के साथ रहने में प्रसन्न है तो वह तलाक न ले। पौलुस ने कहा कि अविश्वासी साथी अपने विश्वासी जीवन साथी के कारण शुद्ध होगा और बच्चे प्रभु के सामने पवित्र ठहरेंगे। इसे समझने के लिए हमें पौलुस से पूछे

गए प्रश्न पर ध्यान देना होगा। क्या एक अविश्वासी के साथ विवाहित जीवन बिताना पाप है? क्या इस विवाह की सन्तान अवैध है?

पौलुस ने कहा कि ये अविश्वासी जीवन-साथी परमेश्वर द्वारा अलग किए जा चुके हैं अर्थात् परमेश्वर उन्हें वैद्य वैवाहिक साथी मानता है। उन्हें विश्वासियों से विवाह करने के कारण विशेष आशिषें प्राप्त होती हैं। अब क्योंकि परमेश्वर को उनकी एकता भाती है इसलिए उनकी सन्तान भी पवित्र या वैद्य है। एक विश्वासी के कारण ही पूरा परिवार परमेश्वर की आशिषों को पाता है। यही कारण था कि पौलुस विश्वासियों को अपने अविश्वासी जीवन-साथी के साथ रहने का प्रोत्साहन देता था। परमेश्वर ने उनकी एकता को स्वीकार किया था और उन्हें अपने विशेष अनुग्रह के लिए अलग किया था।

यदि अविश्वासी अलग होना चाहे तो उसे जाने दें (पद 15-16)

यद्यपि विवाह की शपथ का नियम विश्वासी के लिए आवश्यक था, अविश्वासी यदि विवाह-विच्छेद चाहता तो उसे स्वतन्त्रता प्रदान करनी थी। विश्वासी शपथ के अधीन इस परिस्थिति में बन्धा नहीं था। पौलुस ने पद 15 में कहा कि परमेश्वर ने हमें शांति बनाए रखने के लिए बुलाया है परन्तु अविश्वासी की इच्छा के विरुद्ध विश्वासी विवाह शपथ को थामे न रहे। पद 16 में पौलुस ऐसे विश्वासियों से एक प्रश्न पूछता है कि वे कैसे जानते हैं कि अपने जीवन साथी को वे उद्धार दिलवा देंगे। यथा संभव प्रयास के बाद भी परमेश्वर ने ऐसा होने की कोई प्रतिज्ञा नहीं दी है। अविश्वासी की इच्छानुसार तलाक किया जा सकता था कि शांति बनी रहे परन्तु विश्वासी के लिए तलाक वर्जित था। (पद 10-11)

जो स्थिति प्रभु को ग्रहण करने से पहले थी वैसी ही दशा में रहो (पद 17-24)

विशेष करके खतना के संबन्ध में पौलुस ने कहा था कि वे प्रभु को ग्रहण करने से पहले की दशा में रहें। यदि वे प्रभु को ग्रहण करने से पहले दास थे तो वे दास ही रहें, स्वतन्त्र होने की मांग न करें। वरन् मन लगाकर अपने स्वामी की सेवा करें। विश्वासी ध्यान रखें की मसीह की बुलाहट सामाजिक स्तर पर आधारित नहीं है। प्रभु ने उन्हें उनकी वर्तमान स्थिति में ही बुलाया था।

यह सोचकर कि प्रभु को ग्रहण करने के बाद हमें अपनी पृष्ठभूमि से निकल आना है, हमने इस संसार में ज्योति होने के अवसर बहुत खोए हैं। हमें

जिसका त्याग करना है वह पाप और पाप का जीवन है। परमेश्वर चाहता है कि हम अपनी पृष्ठभूमि में ही रहकर वहां के मनुष्यों में उसकी गवाही बनें।

पौलुस की राय विश्वासियों के लिए यह थी कि वे अपने विवाह को बनाए रखें और अपने अविश्वासी जीवन-साथी को गवाही देने के सौभाग्य को समझें। परमेश्वर उनके विवाह को स्वीकार करता है। पौलुस शांति बनाए रखने को कहता है। अत: आवश्यकता पड़ने पर तलाक भी दिया जा सकता था।

ध्यान देने योग्य बातें:

- क्या आपका जीवन-साथी अविश्वासी है? एक अविश्वासी का जीवन-साथी होने की चुनौतियां क्या हैं?
- प्रभु के साथ आपके संबन्धों के कारण आपके विचारों में आपके अविश्वासी जीवन-साथी और आपके बच्चों के लिए क्या आशिषें आई हैं?
- आपके अविश्वासी अतीत के मनुष्यों के साथ आपके संबन्ध अभी कितनों से हैं? क्या ऐसा कोई मार्ग है जिससे आज आप उनके लिए ज्योति बन सकते हैं?

प्रार्थना निवेदन:

- क्या आपका जीवन-साथी अविश्वासी है? प्रार्थना कीजिए कि परमेश्वर आपको अपने विवाह की शपथ निभाने का अनुग्रह प्रदान करे।
- परमेश्वर से याचना करें कि वह आपको अपने अविश्वासी जीवन-साथी के लिए प्रयोगात्मक गवाही बनने में सहायता प्रदान करे।
- अपने अविश्वासी अतीत के किसी व्यक्ति के लिए प्रार्थना करें। परमेश्वर से याचना करें कि वह आपको उनके लिए ज्योति बनने का मार्ग दिखाए।

14

शुभ ब्रह्मचर्य

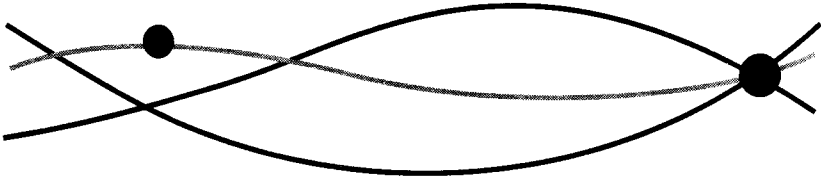

पढ़िए 1 कुरिन्थियों 7:25-40

पौलुस कुरिन्थ के विश्वासियों द्वारा पूछे गए प्रश्नों में विवाह के विषय किए गए प्रश्न का उत्तर दे रहा था। अध्याय सात के इस दूसरे भाग में भी वह उसी प्रश्न का उत्तर तीन भागों में दे रहा था।

वर्तमान संकटों पर ध्यान दो (पद 25-31)

यदि उन्हें विश्वास के विषय में सन्तुष्ट उत्तर प्राप्त नहीं हुआ था तो वे अपनी वर्तमान स्थिति के संकटों को देखें (पद 26)। पद 25 में ध्यान दें कि पौलुस के पास इस विषय पर परमेश्वर से स्पष्ट निर्देश प्राप्त नहीं थे। विवाह न करने का उसका परामर्श अच्छा था और यहां धर्मशास्त्र में भी जोड़ दिया गया है। क्योंकि विवाह न करने की आज्ञा परमेश्वर ने नहीं दी थी, अत: जो विवाह करते थे वे पाप नहीं कर रहे थे। (पद 28)

इस गद्यांश में पौलुस किस संकट की चर्चा कर रहा था? पद 29 में पौलुस ने लिखा कि समय कम है। पद 31 में उसने कहा कि संसार मिटता जा रहा है। पौलुस सुसमाचार को आपातकालीन काम समझता था। उसके

विचार में प्रभु का आगमन कभी भी हो सकता था इसलिए आत्म त्याग के जीवन की बड़ी आवश्यकता थी।

आनेवाले न्याय के प्रकाश में बहुत काम करना आवश्यक था। अविश्वासियों को चिताने की आवश्यकता थी। विश्वासियों को भी प्रभु से भेंट करने की तैयारी करनी थी। समय जीवन की सुख-सुविधा का नहीं था। वह समय प्रभु के आगमन की तैयारियों को अधिकाधिक बढ़ाने का था। इसी विचार को आगे रखते हुए पौलुस ने अविवाहितों "कुंवारियों" को अविवाहित रहने की चेतावनी दी।

पद 24 में पौलुस ने कहा "जिनकी पत्नियां हैं वे भी अविवाहितों का सा आचरण रखें।" इसका अर्थ यह नहीं कि वे अपने जीवन-साथी को तलाक दे दें। उसके कहने का अर्थ था कि ऐसे अनिश्चित काल में विश्वासी प्रभु के काम का समय विवाह के रस में न लगाएं क्योंकि उन्हें संसार को उद्धार का मार्ग दिखाने में समय देना है। विवाह को सेवकाई से बचने का बहाना न बनाया जाए क्योंकि प्रभु का आगमन निकट है।

पौलुस संसार का अन्त देख रहा था। अत: उसका कहना था कि जीवन की अभिलाषाओं में समय लगाने की अपेक्षा सुसमाचार प्रचार में अधिकाधिक समय लगाएं। (पद 30) वे जान लें कि वह समय आनन्द और उत्सवों का नहीं था। वे जो सांसारिक सुविधा प्राप्ति में पैसा लगा रहे थे उन्हें पैसा बचाकर सुसमाचार-प्रचार में लगाना उचित था कि संसार को मुक्तिदाता मिले। वह समय सांसारिक चिन्ताओं और सम्पदा संग्रह का नहीं था।

संसार में सुसमाचार फैलाने में पौलुस के समर्पण की हमें सराहना करनी होगी। संसार के अन्त होने का जो विचार उसके मन में था उससे उसकी जीवन-शैली में गंभीर परिवर्तन आया था। संसार के लिए आपके मन का बोझ पौलुस प्रेरित के मन के बोझ की तुलना में कैसा है? पौलुस को यह पत्र लिखे हुए लगभग दो हज़ार वर्ष होने पर हैं परन्तु मसीह आया नहीं। इसका अर्थ यह हुआ कि उसका आगमन आज और भी निकट है। अत: संसार में सुसमाचार का प्रचार हमारे लिए और अधिक महत्त्व रखता है।

आप विवाह के विषय के साथ सांसारिक चिन्ताओं में कितना डूब चुके हैं? पौलुस ने कुरिन्थ के विश्वासियों को उनके वर्तमान आत्मिक अपातकालीन स्थिति में इस प्रश्न का उत्तर देने की चुनौती दी थी। यहां हम फिर से कहेंगे कि पौलुस के कहने का अर्थ यह नहीं था कि वे जो विवाह करते हैं वे पाप करते हैं या आत्मिकता में उनसे किसी भी प्रकार कम हैं जो ब्रह्मचर्य का पालन करते हैं। पद 28 में वह इसे स्पष्ट करता है। उसने तो उन्हें यह चुनौती

दी थी कि वे प्रभु की सेवकाई के अवसर को अविवाहित रहकर अधिक अच्छी तरह उपयोग में ला सकते हैं।

विवाह के अतिरिक्त उत्तरदायित्वों पर ध्यान दें (पद 32-35)

पौलुस ने कुरिन्थ के विश्वासियों को चुनौती दी कि वे विवाहित व्यक्तियों के अतिरिक्त उत्तरदायित्वों को समझें। अविवाहित व्यक्ति केवल प्रभु की सेवा की चिन्ता करता है जबकि विवाहित व्यक्ति के ऊपर उसके परिवार के उत्तरदायित्वों का बोझ भी होता है। इस प्रकार उसके उत्तरदायित्व बढ़ जाते हैं।

एक विवाहित व्यक्ति जानता है कि विवाह कोई आसान काम नहीं है। उसमें अत्यधिक परिश्रम और आत्म-त्याग की आवश्यकता पड़ती है। परिवार में बच्चों को प्रभु के ज्ञान में बड़ा करने का भी उत्तरदायित्व होता है। इस प्रकार उन पर अनेक बोझ होते हैं। उन्हें अपनी पत्नी को भी प्रसन्न करना पड़ता है। दूसरी ओर, एक अविवाहित व्यक्ति अपना मन, अपनी जान और अपनी देह प्रभु की सेवा में लगा सकता है। यही कारण है कि पौलुस अविवाहितों को सावधान करता है कि वे विवाहित जीवन के उत्तरदायित्वों को देखते हुए विवाह करें क्योंकि उनका ध्यान प्रभु और उनके परिवारों में बंट जाएगा।

अकेले सेवा करने पर भी सेवकाई में सन्तुलन बनाए रखना कठिन है। मनुष्य चारों ओर से पुकार करता है। हमारे समय पर मांग हमारी क्षमता से परे हो जाती है। हमारी सारी उर्जा समाप्त हो जाती है। इसके साथ विवाहित विश्वासियों पर पारिवारिक उत्तरदायित्वों का बोझ भी रहता है। पौलुस चाहता था कि कुरिन्थ के विश्वासी विवाह के इस अतिरिक्त बोझ से बचें।

अपने विवेक पर ध्यान दें (पद 36-40)

अन्त में पौलुस कुरिन्थ के विश्वासियों से कहता है कि विवाह करने से पहले वे अपने विवेक पर ध्यान दें। पद 36 में उसने लिखा कि यदि किसी के विचार में उसका व्यवहार किसी कुंवारी से ठीक नहीं है जिससे उसकी मंगनी हो गई है और उसकी आयु बढ़ती जा रही है तो वह सोचता है कि उसे विवाह कर लेना है तो उसे ऐसा करना चाहिए। वह पाप नहीं है। उन्हें विवाह कर लेना चाहिए।

पौलुस का कहना था कि विवाह के विषय में हर एक व्यक्ति परमेश्वर के सम्मुख अपने विवेक को जांचे कि उसे विवाह करना होगा या नहीं। दूसरी ओर, यदि उन्हें अपनी देह पर वश है तो उन्हें अपना जीवन प्रभु की सेवा में अर्पित करने के बारे में सोचना चाहिए। (पद 37)

पौलुस कहता है कि हर एक को विवाह के लिए नहीं बुलाया गया है। विवाह का विचार करने से पूर्व ध्यान दें कि क्या आपके जीवन में विवाह परमेश्वर की इच्छा है। पौलुस कहता है कि विवाह में स्त्री और पुरुष मरने तक एक दूसरे से बंधे रहते हैं। (पद 39) इस आजीवन समर्पण को केवल मृत्यु ही समाप्त करती है। किसी एक की मृत्यु के बाद दूसरा साथी फिर से विवाह करने के लिए स्वतन्त्र था। पौलुस का अपना विचार था कि विश्वासी अविवाहित रहकर अधिक खुश रहता है।

अन्त में पौलुस ने कहा कि विवाह का प्रश्न विश्वासियों को गंभीरता से देखना चाहिए, इससे पहले कि वे आजीवन का समर्पण करें और देखें कि क्या विवाह उनके जीवन में परमेश्वर की इच्छा थी। उसने उन्हें चुनौती भी दी कि वे अविवाहित रहकर प्रभु की सेवा करना अधिक उचित समझें।

ध्यान देने योग्य बातें:

- प्रचार कार्य में प्रेरित पौलुस के समर्पण पर ध्यान दें। यह आपके जीवन में क्या चुनौती लाता है?
- क्या कुछ ऐसी बातें भी हैं जिन्हें आप मसीह के लिए त्यागना चाहेंगे?
- क्या आपको विवाह करने की बुलाहट मिली है? आप इसे कैसे जानते हैं?
- यदि आप विवाहित हैं तो आप कौन सी चुनौतियों का सामना करते हैं कि आपके समर्पण में सन्तुलन बना रहे?
- आप अपने जीवन-साथी की आवश्यकताओं को कैसे पूरा करते हैं? आप एक दम्पत्ति होने के नाते एक दूसरे की आवश्यकताओं की पूर्ति कैसे करते हैं?

प्रार्थना निवेदन:

- यदि आप विवाहित हैं तो प्रभु से याचना करें कि अपने जीवन-साथी एवं बच्चों और प्रभु की सेवा में सन्तुलन बनाए रखने में वह आपकी सहायता करे।
- यदि आप विवाहित नहीं हैं तो प्रभु से जानें कि उसकी इच्छा में आपको विवाह करना है या नहीं।
- प्रभु से याचना करें कि वह आपको इन अन्तिम दिनों में सुसमाचार-प्रचार की अति-आवश्यकता का बोध प्रदान करे।

15
मूर्तियों को चढ़ाया हुआ मांस

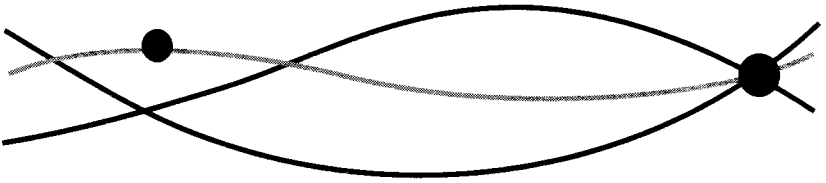

पढ़िए 1 कुरिन्थियों 8

अध्याय 7 में पौलुस ने विवाह संबन्धित प्रश्नों के उत्तर दिए थे। अब अध्याय 8 में वह मूर्तियां को चढ़ाए हुए मांस के खाने के विषय प्रश्नों का उत्तर देता है। अन्यजातियां मूर्तियों को बलि चढ़ाती थीं, जिसका एक भाग पुजारियों को जाता था और कुछ भाग बाज़ार में बिकने के लिए आता था। कुरिन्थ के विश्वासियों ने पौलुस से पूछा कि क्या ऐसा मांस खरीद कर खाना अशुद्ध होगा?

इसका उत्तर देने से पूर्व पौलुस ने कहा कि ज्ञान गर्व कराता है परन्तु प्रेम निर्माण कराता है। आइए हम इस बात का विश्लेषण करें और देखें कि पौलुस क्या कहता है।

ज्ञान गर्व कराता है

ज्ञान का सदुपयोग करें तो वह बड़ी ही अद्‌भुत बात होती है परन्तु ज्ञान प्राय: घमण्ड लाता है। थोड़ा सा भी ज्ञान हमें अपनी वास्तविकता से अधिक सोचने पर बाध्य करता है। हमें किसी बात का ज्ञान होता है तो हम दूसरों के

द्वारा उसी बात के न समझने पर अधीर हो जाते हैं। इसके कारण विश्वासी विश्वास के विषयों पर विभाजित हो जाते थे और एक दूसरे को नीचा दिखाते थे।

इससे पहले कि पौलुस मूर्तियों को चढ़ाए हुए मांस के बारे में कुछ कहे, वह कुरिन्थ के विश्वासियों को ज्ञान के संकट का बोध करा देना चाहता था। पौलुस जानता था कि जिस सत्य का वह उल्लेख करेगा वह निर्णायक होगा। वह जानता था कि विश्वासी उसकी बात पर उन विश्वासियों को नीचा दिखाएंगे जो पौलुस द्वारा बताए गए सत्य को समझ नहीं पाएंगे। इस कारण पौलुस ने ये बातें उनसे कहीं:

पहली, यदि हम सोचते हैं कि हमें बहुत कुछ मालूम है तो सत्य यह है कि अभी हमें बहुत आगे जाना है। (पद 2) मैंने जो सबसे बड़ा सबक सेमिनरी में सीखा वह यह था कि मैं बाइबल के बारे में कितना कम जानता हूं। हम जितना अधिक सीखते हैं उतना अधिक हमें यह समझ में आता है कि हम कितने अज्ञानी हैं।

मैं ज्यों ज्यों परिपक्व होता जाता हूं त्यों त्यों मैं देखता हूं कि जीवन में हर एक बात स्पष्ट नहीं है और मैं कहता हूं "मुझे नहीं मालूम।" पौलुस कुरिन्थ के विश्वासियों से कहता है कि ऐसे घमण्डी मनुष्यों से वे सावधान रहें जो सोचते हैं कि उन्हें सब बातों का ज्ञान है क्योंकि अधिक सीखना जारी रहता है।

दूसरी, परमेश्वर जानता है कि कौन उससे प्रेम रखता है। (पद 3) जीवन में महत्त्वपूर्ण बात यह है कि हम परमेश्वर से प्रेम रखें और उसके द्वारा पहचाने जाएं। मसीही जीवन ज्ञान पर नहीं परमेश्वर के प्रेम पर आधारित रहता है। पौलुस कुरिन्थ के विश्वासियों से कहता है कि यदि वे परमेश्वर से प्रेम रखेंगे तो अपने आप ही मनुष्यों से भी प्रेम रखेंगे। (देखिए 1 यूह. 2:9-11) पौलुस कुरिन्थ के विश्वासियों को उस ज्ञान के लिए तैयार कर रहा था जो वह उनको देनेवाला था जिससे कि वे उसका उपयोग प्रेमरहित व्यवहार में न करें।

प्रेम से रहित ज्ञान के संकट के बारे में उन्हें चेतावनी देकर पौलुस मूर्तियों को चढ़ाए हुए मांस के बारे में अपने विचार व्यक्त करता है। मूर्ति अपने आप में न तो परमेश्वर है और न ही अस्तित्व रखती है। उसमें कोई शक्ति नहीं। सच्चा परमेश्वर तो केवल एक ही है (पद 6) जो जीवन का स्रोत है। अत: एक विश्वासी उस अस्तित्वहीन मूर्ति को चढ़ाए भोजन की चिन्ता क्यों करता है।

पौलुस ने जो कहा उसका अर्थ क्या है यह जान लेना हमारे लिए महत्त्वपूर्ण है। इससे क्या हम यह समझें कि अन्यजातियों की उपासना से संबन्धित वस्तुओं

को विश्वासी अपने घर में रख सकता है? क्या यह उचित होगा कि हम उन वस्तुओं को घर में रखें जो अन्ततः शैतान का साधन बन जाएंगी?

जब हम रीयूनियन द्वीप में मिशनरी थे तब वहां हमने एक मकान किराए पर लिया हुआ था। हमारी मकान मालकिन बड़ी अन्धविश्वासी थी। उसने खिड़की दरवाज़ों पर धार्मिक चित्र लगा रखे थे कि दुष्टात्माएं उस घर में न आ जाएं। घर के भीतर भी उसने कुछ धार्मिक वस्तुएं लटकाकर रखी थीं कि उस घर में आशीष बरसती रहे। मैं आत्मिक शोषण के ऐसे घर में कभी नहीं रहा था। मुझे ऐसा लगता था कि हम एक काले बादल के नीचे रह रहे हैं। इन वस्तुओं में तो अपनी शक्ति नहीं थी परन्तु वे दुष्टात्माओं के प्रवेश का माध्यम थीं। इस दबाव से मुक्त होने का हमारी समझ में एक ही तरीका था कि हम उन वस्तुओं को हटा दें। जब हमने उन वस्तुओं को हटा दिया तब वह दबाव समाप्त हो गया।

संपूर्ण पुराने नियम में परमेश्वर ने अपनी प्रजा को चिताया कि वे अन्यजातियों के धर्मों से संबन्धित वस्तुओं को अपने घरों में न रखें। अन्यजातीय और अधर्मी कार्यकलापों में सहभागी होना और बाज़ार में मांस खरीदने में अन्तर है। बाज़ार में मांस खरीदने वालों का केवल एक ही उद्देश्य होता है कि अपने परिवार को खिलाएं। अतः पौलुस के लिए मांस को इस उद्देश्य से खरीदने में कोई बुराई नहीं थी।

ऐसा समय निश्चय ही आता है जब एक विश्वासी को अन्यजातियों के अधर्मी कार्यकलापों के लिए इन्कार करना होता है। हमारी अन्धविश्वासी मकान मालकिन जिसके बारे में मैं ने पहले कहा, उसके मकान में मेरी पत्नी और मैं ने यह माना कि उन धार्मिक चित्रों को निकाल देने से हम उस मकान को शैतान के चंगुल से मुक्त करा देंगे। हमें अपना जीवन और अपना घर उन सब बातों से स्वच्छ कर देना है जो दुष्टता और पाप से संबन्धित हैं। परन्तु वे जो मूर्तियों को चढ़ाया हुआ मांस बाज़ार से खरीद कर खा रहे थे, वे कोई पाप नहीं कर रहे थे। वे अपना जीवन शैतान के लिए नहीं खोल रहे थे। यह मांस उनकी आत्मिक यात्रा में बाधक नहीं था और न ही किसी बुराई को उत्पन्न कर रहा था।

प्रेम से उन्नति होती है

मूर्तियों को चढ़ाए हुए मांस को खाने के विषय अपनी राय देने के बाद पौलुस अपने पाठकों को स्मरण दिलाता है कि प्रेम से उन्नति होती है। (पद 1)

पौलुस की राय में ऐसा मांस खाने में कोई बुराई नहीं थी परन्तु उसने अपने पाठकों से यही कहा कि वे जो मूर्तियों को चढ़ाए हुए मांस को खाने में झिझकते थे (पद 7) उनके साथ वे अनुकंपा और प्रेम का व्यवहार रखें। उन्हें अपने उन भाई-बहिनों के लिए जो विश्वास में दुर्बल हैं। ठोकर का कारण नहीं बनना है।

पौलुस ने उन्हें जो परामर्श दिया था उसके कारण कहीं ऐसा न हो कि निर्बल भाई का विश्वास जाता रहे (पद 11)। कहीं ऐसा न हो कि वह भाई मूर्तिपूजा करने लगे। ऐसा हो गया तो वह विश्वासी जिसके कारण दूसरा विश्वासी मूर्तिपूजा में लौट गया, उसे प्रभु के सामने इसका लेखा देना होगा। प्रेम और अनुकंपा के अभाव में ज्ञान बड़ा घातक सिद्ध हो सकता था। अत: उचित यह होगा कि दुर्बल विश्वास वाले अपने भाई के ठोकर खाने की अपेक्षा मूर्तियों को चढ़ाया हुआ मांस नहीं खाया जाए। ज्ञान को अनुकंपा के अधीन रखा जाना चाहिए। पौलुस ने कुरिन्थ के विश्वासियों को चिताया कि अपने भाई या बहिन को आहत करके वे मसीह के विरुद्ध पाप कर रहे थे। (पद 12)

पौलुस ने उनसे कहा था कि यदि उनका विवेक शुद्ध है तो वे मूर्तियों को चढ़ाया हुआ मांस खाकर आत्मिक हानि नहीं उठाएंगे परन्तु कुछ विश्वासियों में ऐसा विश्वास नहीं था। ऐसी स्थिति में दुर्बल भाइयों या बहिनों के प्रति प्रेम को मांस खाने की स्वतन्त्रता के ऊपर प्राथमिकता देना चाहिए। पौलुस के अनुसार मसीही समुदाय में भाइयों के प्रति प्रेम व्यक्तिगत स्वतन्त्रता के ऊपर रहे।

ध्यान देने योग्य बातें:

- आज की कलीसिया में प्रेम और अनुकंपा से रहित ज्ञान का क्या परिणाम है?
- मूर्तियों को चढ़ाया हुआ मांस खाने और हमारे घरों और जीवनों में पापी व्यवहारों को करने में क्या अन्तर है?

प्रार्थना निवेदन:

- प्रभु से याचना करें कि आपके संबन्धित जनों के लिए वह आपको ज्ञान और अनुकंपा में सन्तुलन खोजने में सहायता करे।
- परमेश्वर से याचना करें कि दुर्बल भाई और बहन के लिए वह आपको अधिक समझ और प्रेम प्रदान करे।
- उससे याचना करें कि अन्यों के साथ अनुकंपा और समझ के प्रदर्शन में चूक जाने के लिए वह आपको क्षमा करे।

16
व्यक्तिगत उदाहरण

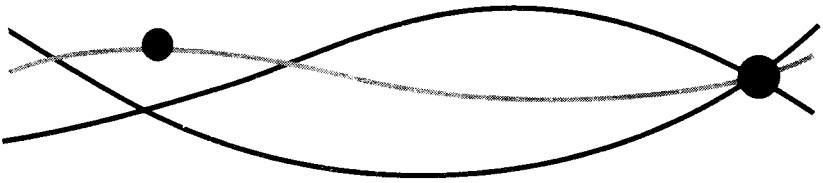

पढ़िए 1 कुरिन्थियों 9

पौलुस ने कुरिन्थ के विश्वासियों से कहा था कि मूर्तियों को चढ़ाया हुआ मांस खाने की उन्हें स्वतन्त्रता थी परन्तु ऐसा करना उचित नहीं था। दुर्बल भाई-बहनों के लिए अनुकंपा उन्हें अपने अधिकार के दमन की प्रेरणा देगी। अब अध्याय 9 में पौलुस इस सिद्धान्त के निमित्त अपना निजी उदाहरण देता है। उसने कुरिन्थ के विश्वासियों से कहा कि वह तो प्रेरित था परन्तु उसने उनके कारण अपने कुछ अधिकारों और सौभाग्यों का त्याग किया था।

पौलुस ने उन्हें सबसे पहले मसीह की देह में अपना स्थान बताया- वह एक प्रेरित था। (पद 1) प्रेरित होने के कारण वह प्रभु के व्यक्तित्व का एक अधिकृत गवाह था। उसने पुनर्जीवित मसीह का दर्शन दमिश्क की राह पर पाया था। प्रेरिताई की उसकी बुलाहट उसे मसीह की देह में एक विशेष स्थान प्रदान करती थी। कुरिन्थ के विश्वासियों ने पौलुस के जीवन पर प्रभु के हाथ का प्रमाण देखा था। उसने उनके बीच डेढ़ वर्ष की सेवकाई की थी (देखिए प्रे. का. 18)। इस पत्र के पाठकों में से अधिकांश जनों का मसीह ग्रहण पौलुस की सेवकाई का परिणाम था। कुरिन्थ की कलीसिया पौलुस की

सेवकाई का परिणाम तथा प्रेरिताई की विशेष बुलाहट का पुष्टिकरण थी। (पद 2)

परन्तु कुरिन्थ के सब विश्वासी पौलुस के समर्थक नहीं थे। पद तीन में लिखा है कि कुछ विश्वासी पौलुस पर उंगली उठा रहे थे परन्तु उनकी शिकायत का उल्लेख नहीं किया गया है। यहां पौलुस अपनी सेवकाई के पक्ष में नहीं वरन् अपने जीवन के उदाहरण के द्वारा उस सत्य को दर्शाना चाहता है जो समुदाय की भलाई के लिए व्यक्तिगत स्वतन्त्रता की आहुति चाहता है।

पौलुस कुरिन्थ के विश्वासियों को कहता है कि प्रेरित होने के कारण उसे अधिकार था कि वह अन्य प्रेरितों के समान प्रचार यात्राओं पर अपनी पत्नी को साथ ले जाएं। (पद 5-6) परन्तु पौलुस ने विवाह करना उचित नहीं समझा (अध्याय 7) ताकि वह अपना सर्वस्व प्रभु की सेवा में लगा दे। पौलुस के विवाह न करने के संकल्प से कुरिन्थ के विश्वासियों को और अन्य कलीसियाओं को लाभ ही हुआ था। पौलुस जैसा प्रभाव अन्य किसी प्रेरित का नहीं था। विवाह न करने के उसके संकल्प ने अनेक कलीसियाओं को लाभ पहुँचाया था।

प्रेरित होने के कारण पौलुस को भोजन-पानी का भी अधिकार था। (पद 4) दूसरे शब्दों में उसे अपनी सेवा के लिए मज़दूरी लेनी थी। उनकी संस्कृति में भी मज़दूर को मज़दूरी का अधिकार था। पद 7 में पौलुस कुरिन्थ की संस्कृति से इसके अनेक उदाहरण देता है। क्या एक सैनिक अपने खर्चे पर देश की सेवा करता है? नहीं, उसका देश उसकी हर एक आवश्यकता एवं मज़दूरी की व्यवस्था करता है। दाख की बारी लगानेवाले को क्या उपज का फल खाने का अधिकार नहीं? क्या चरवाहे को भेड़ का दूध पीने से कोई मना करेगा?

इन उदाहरणों के बाद पौलुस पुराने नियम की व्यवस्था की शिक्षाओं की ओर ध्यान केन्द्रित करता है (पद 8-12)। वह कहता है कि मूसा की व्यवस्था के अनुसार दाएं में चलते हुए बैल का मुंह नहीं बान्धना था। व्यवस्थाविवरण 25:4 के अनुसार गेंहू दांवने वाले बैल का मुंह नहीं बांधना चाहिए। उसे गेहूं खाने देना था। किसान के लिए काम करनेवाले पशु को फसल खाने देने से रोकना वर्जित था। पौलुस ने कहा कि यह व्यवस्था पशुओं पर निर्दयता को रोकने के लिए नहीं अपितु परिणाम का फल पाने के अधिकार के लिए दी गई थी।

इसका अर्थ यह है कि पौलुस ने जिस कलीसिया की स्थापना की थी यहां जहां जहां वचन बोया था वहां से भौतिक फसल को पाने का अधिकार

भी उसका था। यह परमेश्वर की व्यवस्था थी। दूसरे शब्दों में, उसे कुरिन्थ की कलीसिया से अपना वेतन लेने का अधिकार था। उस युग में पुजारियों को भी बलिदानों का एक भाग पाने का अधिकार था। (पद 13) पौलुस ने उन्हें यीशु की शिक्षा का स्मरण दिलाया कि सुसमाचार के प्रचारकों को सुसमाचार से ही अपनी जीविका कमाना थी। (देखिए लूका 10:5-7)

यद्यपि यह पौलुस का अधिकार था, उसने उसका उपयोग करने का निर्णय लिया। (पद 12) उसने प्रचार को बाधा मुक्त रखने के लिए कठिनाइयों को उठाया। वह पैसे के लिए सेवा नहीं दे रहा था। वह तो प्रभु के लिए अपने मनोवेग के कारण कलीसियाओं की सेवा में था। वह पाप में गिरे हुओं को उद्धार दिलवाने के लिए सेवा में था। यदि उसे वेतन न भी दिया जाता तो भी वह सेवा करता।

पौलुस ने स्वेच्छा से पारिश्रमिक का इन्कार किया था। वह परमेश्वर की बुलाहट के कारण प्रचार करता था। वेतन भोगी होने के कारण नहीं। (पद 16-18) यदि पौलुस की सेवा में स्वार्थ होता तो वह अपनी मज़दूरी मांगता परन्तु पौलुस विश्वास के भंडारीपन और परमेश्वर की इच्छा के कारण प्रचार करता था। पौलुस की मनोकामना थी कि उसे बिना मोल प्रचार करने का अवसर मिलता रहे।

इस गद्यांश में हमारे लिए बड़ा ही मूल्यवान सबक है। क्या आप परमेश्वर के सेवक होने के कारण उन लोगों में अपनी सेवा देंगे जो आपको वेतन नहीं दे सकते? क्या आपकी बुलाहट आपके बटुए से बड़ी है? पौलुस पैसे और सम्पदा से मुक्त था। उसने अपने आपको बिना मोल मसीह की देह की सेवकाई में दे दिया था जिसके कारण कलीसिया को बहुत आशिषें मिलीं। हमें मसीह की देह में ऐसे अनेक जनों की अत्यधिक आवश्यकता है।

पौलुस की सेवकाई आत्म-त्याग की थी। उसकी मिशनरी सेवा की सफलता का यह एक विशेष कारण था। यहूदियों के लिए वह एक यहूदी था। मूसा के व्यवस्थापालकों के लिए वह एक व्यवस्थापालक था। दुर्बलों के लिए वह दुर्बल था। वह सब मनुष्यों के लिए सब कुछ बनने को तैयार था। (नैतिकता का उल्लंघन न करके) कि वे मसीह के लिए जीते जाएं। (पद 19-23)

किसी भी काम के लिए अपने ही विचार रखना कितना आसान होता है। मेरी भेंट ऐसे मनुष्यों से हुई है जो अपनी आमदनी के स्तर पर रहना चाहते

हैं। वे आत्म-त्याग करना नहीं चाहते। कुछ ऐसे मनुष्य भी हैं जो अपनी सांस्कृतिक सुविधाओं का त्याग करके मिशन क्षेत्र में जाना नहीं चाहते। कुछ लोग अपने तौर-तरीकों में ऐसे मझ गए हैं कि प्रभु के बुलाने पर वे नई सेवकाई स्वीकार नहीं करते।

इस पृथ्वी पर जब यीशु सेवकाई कर रहा था तब उस पर बार-बार यह दोष लगाया गया कि वह पितरों की प्रथाओं का पालन नहीं करता था। ऐसा प्रतीत होता था कि वह लोगों को उनकी सुख-सुविधा से बाहर लाना चाहता था। वह तो आज भी ऐसा ही करता है। वे लोग कहां हैं जो अपनी पद-प्रतिष्ठा, बैंक बेलेन्स, सुख-सुविधा और समय को प्रभु के लिए बलिदान करेंगे? क्या यही कारण है कि हम पौलुस समान सफल सेवक नहीं हैं? हम उसके समान बलिदान नहीं दे सकते।

पौलुस इस भाग के अन्त में खेल जगत से एक उदाहरण देता है। (पद 24-27) दौड़ स्पर्धा में तो अनेक खिलाड़ी भाग लेते हैं परन्तु पुरुस्कार पानेवाला केवल एक ही होता है। पुरुस्कार पाने वाले को एक निश्चित अनुशासन में रहना होता है। पौलुस ने भी ऐसा ही किया कि वह अनेकों को मसीह में जीत सके। उसकी दौड़ लक्ष्य से रहित नहीं थी। उसका लक्ष्य था कि वह परमेश्वर के राज्य को फैलाए जिसके लिए उसने अपनी देह को अनुशासन में रखा। क्या आपके मन में भी यही है?

पौलुस इस संसर की चिन्ताओं में उलझना नहीं चाहता था। उसके आत्म-त्याग ने संसार पर मसीह के निमित्त गहन प्रभाव डाला था। यदि मूर्तियों को चढ़ाया हुआ मांस खाने से आपके भाई या बहिन को ठोकर लगती है तो मांस मत खाओ। यदि आपके अधिकारों की मांग सुसमाचार के लिए बाधा उत्पन्न करती है तो अपने अधिकारों का त्याग कर दो। यही पौलुस की जीवन-शैली थी। यही कुरिन्थ की कलीसिया को उसकी चुनौती थी।

ध्यान देने योग्य बातें:

- क्या आपके जीवन में कोई ऐसी बात है जिसका त्याग प्रभु के लिए करने में आपको व्यक्तिगत परेशानी है? वह क्या बात है?
- क्या कभी ऐसा हुआ है कि आपने प्रभु के अनुसरण की कीमत अधिक जानकर इन्कार किया? उदाहरण दीजिए?

- क्या ऐसी कोई विशेष बात है जिसे प्रभु ने आपसे त्याग करने को कहा कि उसका काम अधिकाधिक आगे बढ़े?

प्रार्थना निवेदन:

- प्रभु से याचना करें कि वह आपको सम्पदा और सुख-सुविधा के मोह से मुक्ति दिलाए।
- इसी समय अपना जीवन और सम्पदा प्रभु को भेंट कर दें। उससे कहें कि आप उसे वह सब लेने देंगे जो उसके राज्य के निमित्त आपकी सेवा में बाधा डालेगी। उससे याचना करें कि वह आपको पौलुस का सा मन प्रदान करे।

17
एक ऐतिहासिक चेतावनी

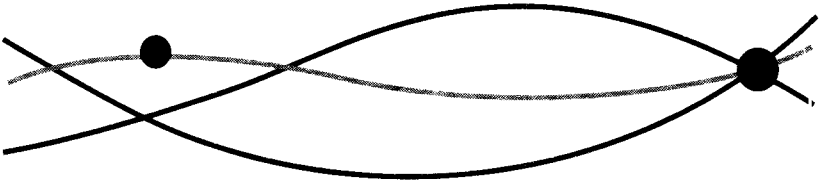

पढ़िए १ कुरिन्थियों 10:1-13

धर्मशास्त्र पढ़कर दूसरों के पापों को देख पाना तो आसान है परन्तु अपने पाप हमें नहीं दिखते हैं। हम अपने आपको आवश्यकता से अधिक महान समझने लगते हैं। हम अपने आप को विश्वास में दृढ़ समझते हैं परन्तु हम पाप में गिर जाते हैं। धर्मशास्त्र के इस भाग में प्रेरित पौलुस कुरिन्थ की कलीसिया को इतिहास का एक सबक सिखा रहा था कि वे वहां की मूर्तिपूजा में फिर से न पड़ जाएं।

पौलुस उन्हें स्मरण कराता है कि उनके विश्वासी पूर्वजों का बपतिस्मा बादलों में और समुद्र में हुआ था। (पद 1-2) वह उस समय की बात कर रहा था जब इस्राएल के वंशज मिस्र से निकले थे और परमेश्वर ने उनके लिए लाल सागर में रास्ता बनाया था। पौलुस कुरिन्थ के विश्वासियों के अनुभव और जंगल में इस्राएल के अनुभव की तुलना कर रहा था।

कुरिन्थ के विश्वासी पाप और मूर्तिपूजा के दासत्व में से उसी प्रकार निकाले गए जिस प्रकार इस्राएल के वंशज मिस्र के दासत्व से निकाले गए थे।

परमेश्वर ने एक दिन मूसा को भेजकर उन्हें दासत्व से निकाला और प्रतिज्ञा के देश तक ले आया। इस्राएलियों ने मूसा की अगुवाई द्वारा अपनी पहचान बनाई। पौलुस उनके द्वारा लाल सागर से निकलने को बपतिस्मा कह रहा था।

इसी प्रकार कुरिन्थ के विश्वासी मसीह में बपतिस्मा पा चुके थे जो पापों से उनकी मुक्ति का प्रतीक था। अपने आत्मिक पूर्वजों की नाईं उन्होंने भी अपने उद्धारक के पीछे चलकर प्रतिज्ञा के देश में प्रवेश करने का चुनाव किया था।

इस्राएलवंशियों ने जंगल में वही आत्मिक भोजन खाया था और वही आत्मिक पेय पिया था। (पद 3-4) पौलुस का संदर्भ मन्ना से था जो परमेश्वर इस्राएल के लिए प्रतिदिन उपलब्ध कराता था। दो बार परमेश्वर ने उन्हें चट्टान से पानी निकालकर पीने के लिएं दिया। जंगल में इस्राएल के वंशजों ने परमेश्वर के अद्भुत प्रावधानों को अनुभव किया। इस्राएल ने परमेश्वर के पीछे चलने के कारण परमेश्वर के सामर्थ और उपस्थिति का अनुभव ऐसा प्राप्त किया जैसा पहले कभी नहीं किया था। भोजन और पानी का विशेष आत्मिक महत्त्व था। वे यीशु की ओर संकेत करते थे जो परमेश्वर के जनों का वास्तविक संभालनेवाला है। (पद 4. देखिए यूह. 6:32-35)

कुरिन्थ की कलीसिया का अनुभव भी ऐसा ही था। हम आगे चलकर देखेंगे कि कलीसियाई रूप में उन्होंने आत्मिक वरदानों का बड़ा प्रभावी प्रदर्शन देखा था। वे प्रभु भोज में सहभागिता भी करते थे अर्थात् वे एक साथ आत्मिक भोजन और पेय खाते और पीते थे। वे पुराने युग के अपने आत्मिक पूर्वजों की नाईं आनन्द के समय का अनुभव कर रहे थे।

पौलुस ने उन्हें बताया कि परमेश्वर इस्राएलवंशियों से प्रसन्न नहीं था। अपनी उस नई स्वतन्त्रता और परमेश्वर की उपस्थिति के उपरान्त भी दो व्यक्तियों ने परमेश्वर से मृत्युदण्ड पाया। पौलुस उन्हें चेतावनी दे रहा था कि यदि वे अपनी स्वतन्त्रता में आत्म-अनुशासित नहीं होंगे तो परमेश्वर उन्हें भी ऐसा ही दण्ड दे सकता है। इस्राएल में यह घटना इसलिए घटी कि कुरिन्थ के विश्वासियों वरन् परमेश्वर के सब जनों के लिए वह एक उदाहरण बन जाए।

क्या कारण था कि परमेश्वर द्वारा मुक्ति पाकर और उसके सामर्थ का अपने मध्य प्रमाण देखकर इस्राएल का पतन हुआ और वे नाश किए गए?

उन्होंने अपने मनों को दुष्ट चीज़ों पर लगाया था (पद 6)

पौलुस ने चार पापों का उल्लेख किया जिनके कारण परमेश्वर ने इस्राएल का नाश किया। उन्होंने अपना मन दुराचारों में लगाया (पद 6)। इस्राएल के

पूरे इतिहास में यही देखने को मिलता है कि उन्होंने अपने आस-पास की जातियों की ओर ध्यान दिया। उन्होंने परमेश्वर से राजा की मांग की जैसा कि अन्यजातियों में होता है। (1 शमूएल 8:4,5) अन्यजातियों के पापी तौर तरीके और प्रथाओं ने उन्हें आकर्षित किया था। वे सैकड़ों वर्ष मिस्र में मूर्तिपूजा और अनैतिकता में रहे थे। यद्यपि परमेश्वर ने उन्हें इस अन्यजाति संस्कृति से बाहर निकाला था, तौभी इस्राएल-वंशी मिस्र के दुराचारों की लालसा रखते थे।

कुरिन्थ की कलीसिया के साथ भी यही समस्या थी। वे कुरिन्थ की विजातीय प्रथाओं से निकल तो आए थे परन्तु उनमें मूर्तिपूजा की अभिलाषा विद्यमान थी। मूर्तियों को चढ़ाया हुआ मांस खाने से और विजातियों के उत्सवों में सहभागिता करने के कारण उनका मूर्तिपूजा में लौट जाने का संकट बना हुआ था। (8:10) अध्याय 3 में पौलुस कुरिन्थ की कलीसिया को सांसारिक कहता है। उनके बीच कलह का मुख्य कारण ही यह था कि उनका मन बुराइयों में था। वे घमण्डी और उद्दण्ड थे। उन्होंने प्रभु को अपने मन और हृदयों का परिवर्तन नहीं करने दिया था।

वे मूर्तिपूजा करते थे (पद 7)

इस्राएलवंशियों ने परमेश्वर से विमुख होकर मूर्तिपूजा आरंभ कर दी थी। मिस्र से निकलते ही उन्होंने आराधना करने के लिए बछड़े की सोने की मूर्ति को स्थापित किया। आगे चलकर उन्होंने बाल देवता के आगे घुटने टेकना आरंभ कर दिए। वे अपने बच्चों की भी आहुति उसे चढ़ाते थे।

कुरिन्थ में भी मूर्तियों की कमी नहीं थी। अध्याय 8 में पौलुस ने विजातिय मन्दिरों में मूर्तियों को चढ़ाए भोजन के विषय में उल्लेख किया है। मूर्तियों की पूजा करने की परीक्षा से वे दूर नहीं थे। पौलुस ने उनसे कहा कि वे मूर्तिपूजक न बनें। मूर्तिपूजा का एक भाग होता था- खाना, पीना और रागरंग में लीन होना। शैतान ने मूर्तिपूजा को बड़ा रोचक बनाया हुआ था। पौलुस ने कुरिन्थ के विश्वासियों को चिताया कि वे इस जाल में न फंसें। कुरिन्थ की परीक्षाओं जैसी ही परीक्षा ने इस्राएल को भी पतन के गर्त में गिराया था।

वे कामवासना की अनैतिकता के दोषी थे (पद 8)

इस्राएलवंशी जो मिस्र से निकले थे, कामवासना के दोषी थे। बाल-उपासना का एक विशेष अभ्यास था। कामभोग मन्दिर की वैश्याएं उसका एक महत्त्वपूर्ण भाग थीं। बाल के पुजारी संभोग के अनुष्ठान पूरे करते थे जिससे कि आनेवाले

वर्ष में फसल अच्छी हो। गिनती 25:1-9 में उल्लेख है कि इस्राएली पुरुष मोआबी स्त्रियों के साथ उनके देवताओं के संभोग चढ़ाते थे। इन सब पुरुषों को मार डाला गया था।

पौलुस ने इस पत्र के लिखने में अधिक समय इसी विषय पर दिया कि वे परमेश्वर के वचन के मानकों के आधार पर अपना नैतिक जीवन साधें। उन्हें अपने परिवेश की अन्यजातियों का सा व्यवहार नहीं रखना था। कुरिन्थ की कलीसिया में इसका प्रमाण प्रकट था। (अध्याय 5) इस क्षेत्र में कुरिन्थ की कलीसिया भी इस्राएल की भांति संघर्ष में लगी हुई थी। इसी पाप ने इस्राएल को पतन के गर्त में डाला और यही पाप कुरिन्थ की कलीसिया को भी गिरा सकता था।

उन्होंने कुड़कुड़ा कर परमेश्वर को परखा (पद 9-10)

गिनती 21 का संदर्भ देते हुए पौलुस ने कुरिन्थ की कलीसिया को बताया कि इस्राएलवंशियों ने मूसा को बुरा-भला कहा कि वह उन्हें जंगल में परेशान करने को तो ले आया था, परन्तु वे मिस्र में ही अच्छे थे। परमेश्वर ने क्रोधित होकर विषैले सांप भेजे। उन्होंने परमेश्वर पर विश्वास नहीं किया। उनका कुड़कुड़ाना परमेश्वर को परखना था।

कुरिन्थ विश्वासी अपने विभाजनों द्वारा परमेश्वर की परीक्षा ले रहे थे। वे एक दूसरे को न्यायालय में ले जा रहे थे। वे अपने आत्मिक अगुवों से असहमति प्रकट कर रहे थे, "मैं पौलुस का हूं। मैं अपुल्लोस का हूं।" उनके इस व्यवहार से परमेश्वर का धीरज टूट रहा था।

धर्मशास्त्र की बातें परमेश्वर की सन्तान को विश्वासयोग्यता सिखाने के लिए थीं (पद 11)। वे आज भी हमारे लिए चेतावनी हैं। कुरिन्थ की कलीसिया अनैतिकता में इस्राएल के सदृश्य थी- मूर्तिपूजा, कामवासना, कुड़कुड़ाना, शिकायत करना आदि।

धर्मशास्त्र में इस्राएल के कुकर्मों के बारे में पढ़ना और कुरिन्थ का कलीसिया के दुराचारों को देखना हमें कैसा भयानक लगता है, परन्तु हम नहीं देख पाते कि हमारी आज की कलीसिया भी वैसी ही दोषी है। पद 12 में पौलुस कहता है कि सावधान रहो। मत सोचो कि तुम खड़े हो। ऐसा न हो कि गिर जाओ। जिन कारणों से इस्राएल गिरा तो उन्हीं कारणों से क्योंकर कुरिन्थ खड़ा रहेगा।

अन्त में पौलुस ने परीक्षाओं का विरोध करनेवाले विश्वासियों को ढाढ़स बंधाया कि परमेश्वर उन्हें सामर्थ देगा। वह उनकी क्षमता से अधिक परीक्षा उन पर नहीं आने देगा। वह उनकी मुक्ति का मार्ग निकालेगा। (पद 13)

समस्या हमारे साथ यह है कि हम परमेश्वर द्वारा उपलब्ध कराई गई मुक्ति को स्वीकार नहीं करते हैं। यदि आप स्वयं का ईमानदारी से आत्म-निरीक्षण करें तो देखेंगे कि हमारे पाप में गिरने का कारण यह है कि हम पाप करना चाहते है। यदि हम सच में जय पाने की खोज में हैं तो हमें परमेश्वर द्वारा प्रदान किए गए मुक्ति के प्रावधान का लाभ उठाना है।

सार यह है कि इस्राएल और कुरिन्थ की नाई हमें भी क्षमा नहीं है। परमेश्वर ने हमें धर्मशास्त्र में स्पष्ट चेतावनी दी है। उसने परीक्षाओं से मुक्ति के मार्ग की प्रतिज्ञा भी दी है। अब यह हमारे ऊपर है कि हम इन उदाहरणों से सबक लेकर पापों से मन फिराएं।

ध्यान देने योग्य बातें:

- प्रेरित याकूब ने परमेश्वर के वचन की तुलना दर्पण से की थी। परमेश्वर के प्रेरित वचन में हमें अपने आपको देखना इतना कठिन क्यों है?
- हम अपनी कलीसियाओं में कौन सी मूर्तियां पाते हैं?
- क्या आपने कभी अपने आप को अपने आत्मिक अगुवों के विरुद्ध कुड़कुड़ाते या शिकायत करते पाया है? इस धर्मशास्त्र के भाग की चुनौती आपके लिए क्या है?

प्रार्थना निवेदन:

- परमेश्वर से उसके सेवकों, कलीसिया और आपके जीवन के लिए उसकी इच्छा के विरुद्ध कुड़कुड़ाने के लिए क्षमा मांगें।
- यदि आज आप किसी परीक्षा में संघर्षरत् हैं तो प्रभु से मुक्ति का मार्ग दिखाने की याचना करें।
- परमेश्वर का धन्यवाद करें कि वह परीक्षाओं से मुक्ति के मार्ग की प्रतिज्ञा देता है।

18

स्वतन्त्रता की सीमा

पढ़िए 1 कुरिन्थियों 10:14-33

पौलुस ने कुरिन्थ के विश्वासियों को पत्र लिखकर उनकी स्वतन्त्रताओं और अधिकारों के प्रति सतर्क किया था। अध्याय 8 में उसने उन्हें कहा था कि उन्हे मूर्तियों को चढ़ाए हुए मांस के खाने में आपत्ति न हो। अध्याय 9 में उसने उन्हें अपने प्रेरित होने की व्यक्तिगत स्वतन्त्रता के बारे में बोध कराया था। अब यहां एक प्रश्न यह उठा कि क्या वे बिना रोक-टोक अपनी इच्छा से कुछ भी कर सकते थे? इस प्रश्न के उत्तर में अध्याय 10 के आरंभ में उसने उन्हें चिताया कि उनके आत्मिक पूर्वज जिन्होंने अपनी स्वतन्त्रता का दुरुपयोग किया था, उनका क्या हुआ था। वे सब जंगल में नाश हुए थे। सच्ची स्वतन्त्रता की अपनी सीमा होती है। यहां पौलुस आत्मिक स्वतन्त्रता की दो सीमाएं बताता है।

मसीह की देह की सहभागिता और दुष्टात्माओं की सहभागिता (पद 14-22)

पहली, कुरिन्थियों द्वारा मूर्तियों को चढ़ाया हुआ मांस खाने में पौलुस को कोई आपत्ति नहीं थी, परन्तु उसने यह स्पष्ट कर दिया था कि उन्हें मूर्तियों

से दूर ही रहना है। अपनी बात को समझाने के लिए पौलुस ने प्रभु भोज का संदर्भ दिया।

प्रभु भोज का अर्थ क्या होता है? पौलुस ने कुरिन्थ की कलीसिया को समझाया कि प्रभु भोज में कटोरे से पीना और रोटी खाना मसीह के लोहू और देह की सहभागिता दर्शाता है। उसके कहने का अर्थ था कि वे इस प्रकार यह स्वीकार करते थे कि मसीह उनके लिए मरा अर्थात् वे स्वीकार करते थे कि प्रभु यीशु उनको क्षमा और पापों का शुद्ध करनेवाला था। एक ही रोटी को खाने का अर्थ था कि प्रभु के साथ उनकी एकता थी। (पद 17)

अपनी बात समझाने के लिए पौलुस ने कुरिन्थ के विश्वासियों को इस्राएलियों की बलि के बारे में बताया कि वे इस्राएली जब पशु की बलि चढ़ाते थे तब वे एक भाग पुजारी को देते थे और एक भाग आनन्द करते हुए खाते थे, जो यह दर्शाता था कि परमेश्वर भला है और उसने उनके पाप क्षमा किये। वे बलि के पशु की मृत्यु के साथ अपनी पहचान बनाते थे और अनुग्रही प्रभु परमेश्वर को धन्यवाद देते थे और उसकी आराधना करते थे।

अन्यजातियाँ (कुरिन्थवासी) जो बलिदान चढ़ाती थीं, वे दुष्टात्माओं को जाता था (पद 20)। यह तो सत्य है कि मूर्तियां अपने आप में तो निर्जीव पत्थर या लकड़ी थीं परन्तु उनके पीछे नरक की आत्मा थी जो आराधकों को दास बनाए हुई थी। इन मूर्तियों को बलि चढ़ाने का अर्थ था कि वे नरक की आत्माओं की अधीनता को स्वीकार कर रहे थे।

इसका अर्थ तो यह हुआ कि विश्वासी मूर्तिपूजा का पूर्ण त्याग करें। पौलुस ने उनसे कहा कि वे मसीह की देह की सहभागिता और दुष्टात्माओं की सहभागिता साथ साथ न करें। (पद 21) क्या यह पवित्र परमेश्वर के मन में जलन पैदा कर करेगा (पद 22)? यदि उसके मन में जलन भड़की तो क्या कोई उसके सामने खड़ा हो पाएगा? कुरिन्थ की कलीसिया में बुद्धि थी कि वे तर्क की बात समझें कि मूर्तिपूजा द्वारा पवित्र परमेश्वर को क्रोधित करना संकट से पूर्ण वरन् दुष्टता थी।

हमारी स्वतन्त्रता में हम परमेश्वर के प्रकोप को न भड़काएं। हमें याद रखना है कि हमारी मुक्ति के लिए परमेश्वर ने क्या किया है। हमें वही करना है जिससे उसे और उसके वचन को महिमा व आदर मिले। अत: मूर्तिपूजा से भागें और केवल प्रभु परमेश्वर के आगे घुटने टेकें।

सब बातों की अनुमति है परन्तु सब बातें लाभ की नहीं है। (पद 23-33)

दूसरी, पौलुस ने सामान्यत: कहा कि सब बातों की अनुमति है। उसके कहने का अर्थ यह नहीं था कि वे अपनी मन की इच्छा से जो चाहें सो करें। वह कह ही चुका था कि उन्हें मूर्तिपूजा से दूर रहना है। जब तक कि कोई बात परमेश्वर के वचन के अनुरूप न हो वे उसे कर सकते थे। पौलुस के विचारों में मसीही जीवन विधि-विधान का जीवन नहीं है परन्तु वह मसीह के द्वारा और मसीह की महिमा के निमित्त स्वतन्त्रता का जीवन है। कुरिन्थ के विश्वासी मसीह में स्वतन्त्र किए गए थे परन्तु हर बात लाभ की नहीं थी। आवश्यक नहीं कि उनका हर एक काम मसीह की देह का निर्माण करता हो। अपनी मसीही स्वतन्त्रता में उन्हें दूसरों की भलाई के काम करने थे। पौलुस ने उन्हें समझाया कि दैनिक जीवन का उदाहरण देने में उसका उद्देश्य क्या था।

पौलुस ने उन्हें दैनिक जीवन का एक उदाहरण दिया। बाज़ार में मांस खरीदते समय उनके लिए उचित यही था कि वे पूछें ही नहीं कि मांस मूर्ति को चढ़ाया हुआ था या नहीं। (पद 25) संपूर्ण पृथ्वी अर्थात् जो कुछ उसमें हैं, परमेश्वर का ही है। अत: परमेश्वर द्वारा दी गई सब अच्छी वस्तुओं का वे आनन्द लें। यदि वे अविश्वासियों के घर भोजन हेतु आमन्त्रित हों तो उन्हें पूछना नहीं चाहिए कि जो भोजन वे खाते हैं क्या उसे मूर्ति को चढ़ाया था। (पद 27) परन्तु यदि कोई कहे कि वह भोजन मूर्ति को चढ़ाया हुआ था तो वे उसके कारण उस मांस को न खाएं। (पद 28)

हमें अपने घरों में जिस बात की स्वतन्त्रता है उसे हम सार्वजनिक स्थानों में त्याग कर किसी दुर्बल भाई या बहिन के लिए ठोकर का कारण न बनें, क्योंकि वह किसी बात को बुरा समझता/समझती है। यदि हम उस भोजन के लिए परमेश्वर को धन्यवाद दें जिससे विश्वास में दुर्बल भाई या बहिन को ठोकर लगती है तो वे हमें त्याग देंगे और कलीसिया में विभाजन हो जाएगा।

स्वतन्त्रता पर व्यक्त अपने विचारों का सारांश पौलुस पद 31-32 में देता है। यहां वह कहता है कि जो कुछ भी वे करें उसे परमेश्वर की महिमा के लिए करें। (पद 31) दूसरा, कि वे जो कुछ करें दूसरों के लिए ठोकर का कारण न बनें, चाहे कोई विश्वासी हो या अविश्वासी। पौलुस का एक सिद्धान्त था कि वह कभी अपने कामों द्वारा किसी को गिरने नहीं देगा। उसने यह सिद्धान्त इसलिए स्थापित किया था कि मनुष्य उद्धार पाए। (पद 33)

पौलुस ने कुरिन्थ के विश्वासियों को प्रोत्साहित किया कि वे मसीह की स्वतन्त्रता में रहें और प्रभु यीशु द्वारा दिए गए नए जीवन का आनन्द लें। वे

मसीह में स्वतन्त्र तो थे परन्तु वे उस स्वतन्त्रता की उपासना न करें। पौलुस की नाईं वे अपने अधिकारों और स्वतन्त्रता का तुरन्त त्याग करने को तैयार रहें जिससे कि प्रभु को अधिकाधिक महिमा प्राप्त हो।

ध्यान देने योग्य बातें:

- आज के युग में हमारी मूर्तियां क्या हैं? क्या आपके जीवन में कोई मूर्ति है जिससे आपको छुटकारा पाना है?
- क्या आप मसीह में किसी भाई या बहिन के लिए अपनी व्यक्तिगत स्वतन्त्रताओं का त्याग करेंगे?
- आपको जिन बातों को करने की स्वतन्त्रता है क्या वह आपके आस-पास के मनुष्यों के लिए लाभकारी हैं?

प्रार्थना निवेदन:

- प्रभु से प्रार्थना करें कि वह आपकी व्यक्तिगत स्वतन्त्रता पर अटल न रहने में सहायता करे।
- क्या आप कभी किसी के लिए ठोकर का कारण रहे हैं? प्रभु से क्षमा मांगें।
- क्या आप कभी किसी विश्वासी के प्रति जिसे वह स्वतन्त्रता है जो आपको नहीं है, नकारात्मक या आलोचक रहे हैं? परमेश्वर से क्षमा याचना करके उस व्यक्ति के प्रति उचित स्वभाव की याचना करें।

19
स्त्रियों का सिर ढंकना

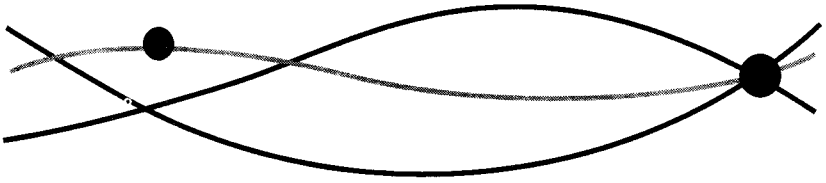

पढ़िए 1 कुरिन्थियों 11:1-16

अध्याय ग्यारह में पौलुस स्त्रियों और पुरुषों के व्यवहार के बारे में कहता है जो उन्हें आराधना में रखना था पौलुस ने कुरिन्थ के विश्वासियों की सराहना की कि उन्होंने उसके निर्देशों का पालन किया। उसके कहने का गुप्त अर्थ यह था कि वे आराधना में भी उसके निर्देशों का पालन करें। पौलुस ने स्पष्ट किया कि उसने जो भी कहा वह उसकी अपनी ओर से नहीं, प्रभु के निर्देश थे।

पौलुस सादृश्यता दर्शाते हुए कहता है कि प्रत्येक पुरुष का सिर मसीह है, स्त्री का सिर पुरुष है और मसीह का सिर परमेश्वर है। (पद 3) पौलुस कुरिन्थ की कलीसिया को सिखा रहा था कि परमेश्वर ने कलीसिया को एक व्यवस्था दी है। मुखिया होने का अर्थ बड़प्पन नहीं है। यीशु अपने पिता की इच्छा के अधीन रहता है इसका अर्थ यह नहीं कि वह पिता से कम है। इसी प्रकार स्त्री की भूमिका यद्यपि अधीनता की है, वह पुरुष से कम नहीं है। जिस प्रकार पिता और यीशु बराबर हैं, उसी प्रकार स्त्री और पुरुष बराबर हैं। परमेश्वर ने मसीह की देह में स्त्री और पुरुष को अलग-अलग भूमिकाएं दी

हैं। पुरुषों को मुखिया की भूमिका दी गई है जो प्रभु यीशु का मनुष्यत्व है। मसीह की मुखिया की भूमिका कलीसिया के लिए दीनता की सेवा थी। मुखिया होने के कारण यीशु ने कलीसिया के लिए प्राणों की आहुति दे दी। अगुवाई की भूमिका सेवा की भूमिका है।

अपनी इसी वार्ता में पौलुस ने आराधना में स्त्रियों के सिर ढांकने की चर्चा भी की थी। स्त्रियों ने यह प्रश्न भी पूछा था कि क्या उन्हें प्रथा के अनुसार आराधना में भी सिर ढांकना चाहिए। कुछ स्त्रियां आराधना में सिर खुला रखती थीं जिसके कारण वहां वही समस्या उत्पन्न हो गई थी जिसके लिए पौलुस ने पिछले अध्याय में कहा था कि यदि हमारी स्वतन्त्रता किसी के लिए ठोकर का कारण बने तो हमें उस स्वतन्त्रता का दूसरों की भलाई के लिए त्याग करना चाहिए।

पद चार में पौलुस कहता है कि यदि पुरुष अपना सिर ढांक कर प्रार्थना करे या भविष्यद्वाणी करे तो वह अपने सिर का अपमान करता है। ऐसा प्रतीत होता है कि कुरिन्थ की संस्कृति में सिर ढांकना सम्मान और अधीनता का प्रतीक था। सिर को खुला रखने का अर्थ था अधिकार को हाथ में लेना। यदि कोई स्त्री सिर खुला रखकर आराधना में आती थी तो इसका अर्थ था कि वह परमेश्वर द्वारा कलीसिया में उसके अधीन रहने के स्थान के विरुद्ध सार्वजनिक विद्रोह प्रदर्शित करते हुए अपने हाथ में अधिकार लेना चाहती थी। यदि कोई पुरुष अपना सिर ढांकता था तो इसका अर्थ था कि वह अपना अधिकार संभालने के लिए तैयार नहीं था और इस प्रकार वह परमेश्वर प्रदत्त अपने अधिकार की अवहेलना करता था।

इतिहास में देखने को मिलता है कि कुरिन्थ की संस्कृति में स्त्री के बाल घमण्ड का कारण होते थे। वहां स्त्री के बाल मुढ़ा देने का अर्थ था उसका अपमान करना। पद 6 में पौलुस ने कहा कि यदि कोई स्त्री आराधना में सिर नहीं ढांकती तो उसके लिए उचित होगा कि उसका सिर मुढ़ा दिया जाए अर्थात् उसके विद्रोह की मुद्रा के कारण उसे लज्जित किया जाए। पौलुस ने कुरिन्थ की विश्वासी स्त्रियों से आग्रह किया कि वे सिर ढांकने के द्वारा परमेश्वर द्वारा नियुक्त अगुवाई की भूमिका की अधीनता में रहने का प्रदर्शन करें।

पद 7 में पौलुस कहता है कि पुरुष परमेश्वर का रूप और महिमा होने के कारण अपना सिर न ढंकें। यद्यपि परमेश्वर के सामने स्त्री और पुरुष बराबर का स्थान रखते हैं, पुरुष की रचना पहले की गई थी और उसे पृथ्वी

पर अधिकारी ठहराया गया था। स्त्री पुरुष की महिमा है। यहां पौलुस क्या कहना चाहता है। वह यह नहीं कह रहा है कि परमेश्वर स्त्रियों को दूसरे दर्जे का समझता है परन्तु वह कुरिन्थ के विश्वासियों को यह समझाना चाहता था कि परमेश्वर ने स्त्री और पुरुषों को अलग अलग भूमिकाएं दी हैं। परमेश्वर ने पहले आदम को मिट्टी से रचा था। स्त्री को तो उसने आदम से बनाया था कि उसकी सहायक हो। पुरुष स्त्री के लिए नहीं, परन्तु स्त्री पुरुष के लिए बनाई गई थी। (पद 9) पौलुस के लिए यही सत्य महत्त्वपूर्ण था और मसीह यीशु की कलीसिया में स्त्री और पुरुष के लिए लागू होता था।

पुरुष की रचना परमेश्वर ने अपने लिए महिमा का कारण होने को की थी और स्त्री को इसी उद्देश्य में सहायक होने के लिए रचा था। पुरुष का उत्तरदायित्व था कि इस संसार में वह उसका प्रतिनिधि ठहरे जिसमें स्त्री उसकी सहायक हो।

स्त्री और पुरुष दोनों को अपनी अपनी उन भूमिकाओं से प्रसन्न होना चाहिए जो परमेश्वर ने उन्हें सृष्टि के समय प्रदान की थी। कुरिन्थ में जब स्त्री परदा करती थी तब उसका अर्थ यह था कि वह अपनी भूमिका से प्रसन्न थी। सिर के ढंके जाने का अर्थ था कि वह परमेश्वर के राज्य के विस्तार के निमित्त परमेश्वर द्वारा पुरुष को दी गई प्रभुता के अधीन रहना स्वीकार करती थी।

पद दस में उसने कहा कि स्त्रियों को अधिकार के इस चिन्ह को इसलिए रखना था कि स्वर्गदूत कलीसिया में परमेश्वर के सेवक के काम की निगरानी करते हैं। अत: वे आराधना और सभाओं में उपस्थित रहते हैं। इसलिए उनकी उपस्थिति में स्त्रियां सिर खुला रखकर अपने अधीन रहने के चिन्ह का विरोध न करें। ऐसा करने से वे स्वर्गदूतों को अप्रसन्न करेंगी। स्वर्गदूत परमेश्वर की सेवा और आराधना में विश्वासियों की सहायता एवं रक्षा के लिए उपस्थित रहते हैं।

मसीह की देह में परमेश्वर प्रदत्त भूमिकाओं के महत्त्व को समझाने के बाद पौलुस स्पष्ट कर देना चाहता था कि स्त्री और पुरुष दोनों को एक-दूसरे की आवश्यकता होती है। पौलुस ने कहा कि वास्तव में स्त्री पुरुष में से निकली थी और जीवन के आरंभ से ही वे एक-दूसरे पर निर्भर हैं। कलीसिया में भी ऐसा ही होना चाहिए। भूमिकाओं के अलग होने का अर्थ यह नहीं कि एक पक्ष दूसरे से बड़ा है। परमेश्वर ने मनुष्य को इस प्रकार बनाया है कि वे एक दूसरे के प्रतिपूरक हैं। ऐसा भी नहीं है कि एक पक्ष का आत्मिक महत्त्व दूसरे से अधिक है।

पौलुस ने कुरिन्थ की कलीसिया को प्रोत्साहित किया कि वे इस विषय में आत्म-निरीक्षण करें। (पद 13) उसने कहा कि प्रकृति ने ही उनमें अन्तर उत्पन्न किया है जो उनके बाल हैं। स्त्रियां प्राय: बालों पर अधिक घमण्ड करती हैं। यह उनके सिर पर परमेश्वर द्वारा दिया गया आवरण है। यही उनकी महिमा और गर्व का कारण है। पौलुस के विचारों में यह आवरण परमेश्वर के महिमान्वन में पुरुष के साथ उसकी सहायक भूमिका का प्रतीक है। (पद 15, उत्पत्ति 1:28)

पौलुस जानता था कि उसकी यह बात सब को स्वीकार्य नहीं होगी। वे जो उसके पक्ष में नहीं थे उनसे पौलुस का कहना यही था कि यही कलीसिया की शिक्षा और अभ्यास है। (पद 16) उसके कहने का अर्थ था कि इस विषय पर वाद-विवाद की आवश्यकता नहीं थी।

हम कुरिन्थ को लिखे पौलुस के पत्र में इस भाग से क्या शिक्षा पाते हैं? हमें इससे यह शिक्षा मिलती है कि मसीह की देह में स्त्री और पुरुषों के लिए अलग-अलग भूमिकाएं हैं। परमेश्वर ने निर्धारित किया है कि पुरुष कलीसिया में मुखिया की भूमिका निभाए और स्त्री उसकी सहायता करे। प्रत्येक पक्ष अपनी भूमिका निभाते हुए परमेश्वर को सम्मान प्रदर्शित करे।

सिर ढांकने का विषय सदियों से वाद-विवाद का विषय रहा है। क्या यह आवश्यक है कि स्त्रियां अराधना में सिर ढांकें? वे जो इसके पक्ष में हैं वे इसे यथावत् स्वीकार करते हैं और मानते हैं कि यह कलीसिया के लिए है। वे स्त्रियों को प्रोत्साहित करते हैं कि वे कलीसिया में परमेश्वर की व्यवस्था को स्वीकार करने के चिन्ह स्वरुप सिर ढांकें।

वे जो सिर ढांकने के पक्ष में नहीं, उनका विवाद तो बातों पर आधारित होता है। पहला कि पौलुस ने स्वयं कहा कि उनके बाल ही उनका प्राकृतिक आवरण हैं। (पद 15) दूसरा कि सिर ढांकने की प्रथा पौलुस के युग में थी जो अन्य संस्कृतियों में नहीं है। हो सकता है कि एक स्त्री अपना सिर ढांक ले परन्तु मन में वह अधीनता स्वीकार न करे। ऐसी स्थिति में यह आडम्बर है, जो परमेश्वर का अपमान है।

कुरिन्थ की संस्कृति में स्त्री का सिर नहीं ढांकना एक चर्चा का विषय होता वरन् परमेश्वर की आराधना में भी बाधक होता। यह पुरुष की अगुवाई की भूमिका का और परमेश्वर के वचन का खुला विरोध था। यही कारण था कि पौलुस ने कुरिन्थ की स्त्रियों से आराधना में सिर ढांकने का आग्रह किया था।

ध्यान देने योग्य बातें:

- क्या आप यह मानते हैं कि आज स्त्रियों को आराधना में सिर ढांकना चाहिए? क्यों या क्यों नहीं?
- क्या आपकी संस्कृति में सिर ढांकने जैसी कोई प्रथा है?
- आज कलीसिया के कौन से अभ्यास हमारी संस्कृति में सुसमाचार-प्रचार में बाधक हो सकते हैं?
- पुरुषों की अगुवाई का यह सिद्धान्त कलीसिया के संदर्भ में कैसे प्रयोगात्मक होगा? स्त्रियों की भूमिका क्या है?
- पुरुषों की अगुवाई के सिद्धान्त का कलीसिया में कैसा दुरुपयोग किया गया है?

प्रार्थना निवेदन:

- प्रभु से प्रार्थना करें कि मसीह की देह में अपनी भूमिका गंभीरतापूर्वक निभाने में वह आपकी सहायता करे।
- यदि पौलुस की शिक्षा के पालन में आपको कठिनाई हो रही है तो आप परमेश्वर से अनुग्रह की याचना करें कि आप इसे न समझते हुए भी करें।
- हमारी आराधना और सेवा में स्वर्गदूतों की भूमिका के लिए उसे धन्यवाद दें।

20

प्रभु भोज

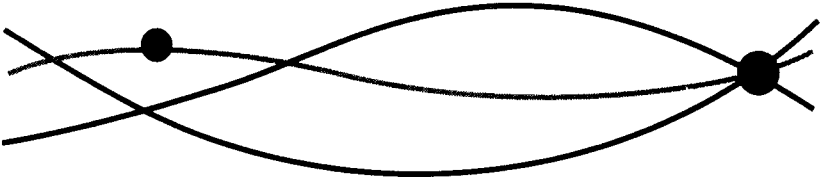

पढ़िए 1 कुरिन्थियों 11:17-34

हमने देखा कि कुरिन्थ की कलीसिया में अनेक समस्याएं थीं। अध्याय 1 में पौलुस विश्वासियों में विभाजन की चर्चा कर रहा था। अध्याय 3 में पौलुस ने उन्हें समझाया कि उनमें ईर्ष्या और कलह का कारण उनकी सांसारिकता थी। अध्याय 5 में उसने अनैतिकता के बारे में उन्हें चिताया था। अध्याय 6 में उनके न्यायालयों में जाने के लिए उसने उन्हें झिड़का था। अध्याय 10 में वह मूर्तिपूजा के विरुद्ध उन्हें सचेत कर रहा था। अध्याय 11 में हम देखते हैं कि वह स्त्रियों को कलीसिया में उनकी भूमिका समझा रहा था। और इस भाग में उसने प्रभु-भोज के दुरुपयोग के विषय कहा था।

पौलुस आरंभ में ही उनसे कह देता है कि इस विषय में उसके पास उनकी प्रशंसा में कहने को कुछ नहीं है। (पद 17) उसने उनसे कहा कि जो वे कर रहे थे उससे मसीह की देह को बहुत हानि पहुंच रही थी। वे अपने अगुवों के कारण विभाजित थे। वे न्यायालय जाने के कारण विभाजित थे। वे मूर्तियों को चढ़ाए मांस खाने के कारण विभाजित थे। वे कलीसियाओं में स्त्रियों की भूमिका के ऊपर विभाजित थे। हम आगे चलकर देखेंगे कि वे

आत्मिक वरदानों के ऊपर भी विभाजित थे। कुरिन्थ की कलीसिया में अनेक कारणों से विभाजन था।

प्रभु भोज में भी ये विभाजन देखने को मिलते थे। पद 21 में देखिए कि वहां कुछ लोग थे जो दूसरों की प्रतीक्षा किए बिना ही भोज कर लेते थे। पौलुस ने कहा कि कुछ लोग पीकर मस्त हो जाते थे जबकि कुछ भूखे ही रह जाते थे। यहां यह न भूलें कि उस समय प्रभु भोज आज के समान नहीं था। उस समय यह भोज एक बड़ा खाना होता था। ऐसे ही भोज (यीशु के साथ जो भोज चेलों ने खाया था, मरकुस 14:12-26) से आज के प्रभु भोज का आरंभ हुआ था। आरंभिक कलीसिया में प्रभु भोज एक कलीसियाई खाना होता था जहां कलीसिया प्रभु की मृत्यु को याद करती थी। जब कलीसिया ऐसे भोज के लिए एकत्र होती थी तब कुछ लोग खा-पीकर तृप्त हो जाते थे और बाद में आनेवालों की चिन्ता ही नहीं करते थे।

पद 22 से प्रतीत होता है कि समृद्ध जन गरीबों का निरादर करते थे। टीकाकारों का कहना है कि धनवान विश्वासी समय पर आ जाते थे और श्रमिकों की प्रतीक्षा नहीं करते थे जिन्हें काम करने के बाद आने का समय मिलता था। परिणाम यह होता था कि धनवान जन खा-पीकर नशे में हो जाते थे और जब श्रमिक गरीब विश्वासी वहां आते थे तो उनके खाने और पीने के लिए कुछ नहीं बचता था। इस प्रकार हम वहां के विभाजन की कल्पना कर सकते हैं। यह प्रभु की मृत्यु का स्मरण करने की कोई रीति नहीं थी। कुछ तो इतनी मदिरा पी लेते थे कि उन्हें नशा हो जाता था जबकि कुछ खाने और पीने की कमी के कारण मन में कड़वाहट लिए हुए थे।

पौलुस उन्हें झिड़की देकर कहता है कि उन्हें मसीह की देह, जिसमें समाजिक अन्तर नहीं होता है, को ध्यान में रखकर प्रभु भोज करना था। उन्हें प्रभु भोज में सबके साथ बराबरी रखना था। उनका अलग-थलग व्यवहार निन्दा के बराबर था। इससे तो प्रतीत होता था कि वे कलीसिया को और गरीब वर्ग को तुच्छ समझते थे। यह तो प्रभु यीशु के चरित्र के विरुद्ध था। पेटू और पियक्कड़ों से पौलुस ने कहा कि वे घर से ही खाकर आया करें।

उनको इस समस्या का बोध कराने के बाद पौलुस ने उन्हें प्रभु भोज का अर्थ समझाया। उसने उन्हें स्पष्ट किया कि जो उसने प्रभु से पाया है वह उन्हें दे रहा था, यह उसका अपना विचार नहीं था। (23)

यहां हमें यह जानना है कि पौलुस उस समय चेलों में नहीं था जब यीशु ने प्रभु भोज की स्थापना की थी। अत: पौलुस के आलोचकों के पास यह एक अच्छा अवसर था कि वे पौलुस की काट करें।

पौलुस ने इस बात के साथ उनके मन से सन्देह निकाल दिया जब उसने उन्हें कहा कि जिस रात यीशु पकड़वाया गया, उसने रोटी ली और तोड़ी और अपने चेलों से कहा कि वह रोटी उसकी देह का प्रतीक थी। उसने अपने चेलों से कहा कि उसकी याद में वे इस भोज को खाया करें। भोज समाप्त हो जाने पर यीशु ने कटोरा लेकर अपने चेलों से कहा कि वह कटोरा उसके लोहू में नई वाचा का प्रतीक था। पुरानी वाचा जिसमें बलि किए हुए पशु की आवश्यकता होती थी अब पूरी होने वाली थी। परमेश्वर और उसके जनों के मध्य एक नई वाचा मसीह यीशु के लोहू द्वारा स्थापित होनेवाली थी। प्रभु यीशु की स्पष्ट शिक्षा थी कि जो भी उस रोटी को खाता और कटोरे में से पीता है, प्रभु यीशु के दूसरे आगमन तक उसकी मृत्यु की घोषणा करता है। प्रभु भोज की स्मृति प्रभु यीशु की मृत्यु के अर्थ और लाभ का उत्सव था। यह कृतज्ञता और सुसमाचार के प्रचार की गंभीर यादगारी थी। परन्तु कुरिन्थ के विश्वासियों ने उसे पीने और खाने का अवसर बना दिया था जो अन्यजातियों के उत्सवों का सा रह गया था।

पौलुस ने इसके अन्त में कुरिन्थ की कलीसिया को प्रभु भोज मनाने के बारे में कठोर चेतावनी दी थी कि जो कोई प्रभु के कटोरे से निरर्थक पीएगा, वह प्रभु की देह और लोहू के विरुद्ध पाप का दोषी होगा (27)। यह एक गंभीर बात थी। वे अपने स्वार्थ के कारण उस देह और लोहू का अपमान कर रहे थे जिसने उन्हें बचाया था। पौलुस ने उन्हें चुनौती दी कि वे प्रभु भोज में सहभागी होने से पूर्व अपने आप को जांचें। (पद 28) वे जो अनुचित रीति से प्रभु भोज खा रहे थे वे मसीह की पवित्र देह और लोहू का अपमान कर रहे थे। (पद 29) वे अपने ऊपर उस सहभागिता के द्वारा दण्ड ला रहे थे। पौलुस ने उन्हें चिताया कि इसी कारण उनमें से अनेक रोगी थे और मर भी गए थे। यह उन पर परमेश्वर का दण्ड था क्योंकि वे उसकी निन्दा कर रहे थे। (पद 30) पौलुस ने प्रभु भोज पर उनके निन्दक कामों को शारीरिक रोगों से जोड़ दिया था।

कुरिन्थ के विश्वासियों के लिए यह कैसा प्रभावी रहा होगा। मैं कुछ रोगग्रस्त विश्वासियों को इस संदर्भ में कल्पना कर सकता हूं परन्तु हमें रोगों को हमारे पापों का कारण नहीं मानना चाहिए। बाइबल निश्चय ही सिखाती है कि समय समय पर परमेश्वर हमें ऐसा अनुशासन देता है।

पौलुस ने कुरिन्थ के विश्वासियों को उनके कर्मों की गंभीरता समझने की चेतावनी दी। यह भाग प्रभु के आगे दोषी विश्वासियों को जगाने की पुकार था। प्रभु का हाथ उन पर दण्ड के लिए था। क्योंकि उन्होंने अपने को नहीं जांचा, इसलिए प्रभु ने उन्हें दण्ड दिया और वे रोगग्रस्त हुए वरन् मर भी गए। पौलुस ने सिखाया कि प्रभु भोज का मानना सुसमाचार की प्रभावी स्मृति और अनुशासन और प्रेम से भरे जीवन का प्रेरक बल है।

ध्यान देने योग्य बातें:

- प्रभु भोज आपके लिए क्या अर्थ रखता है?
- रोग परमेश्वर का अनुशासन है, इसके बारे में यह भाग क्या सिखाता है? क्या आपको ऐसा समय याद आता है जब परमेश्वर ने रोग के प्रयोग द्वारा आपको अपने पास खींचा था?
- हम कुरिन्थ के विश्वासियों की नाईं किस प्रकार प्रभु भोज को अनुचित रीति से लेने के दोषी हैं?

प्रार्थना निवेदन:

- क्या आप प्रभु भोज में अनुचित सहभागिता के कभी दोषी रहे हैं? समय लेकर परमेश्वर के सामने अपने पापों को स्वीकार करें।
- समय लेकर परमेश्वर को आपके लिए उसके पुत्र की मृत्यु हेतु धन्यवाद दें।
- प्रभु से याचना करें कि वह आपकी कलीसिया में विश्वासियों के मध्य विभाजन की सुधि ले।

21
आत्मिक वरदान

पढ़िए 1 कुरिन्थियों 12:1-11

अब पौलुस मसीह की देह में आत्मिक वरदानों के बारे में अपनी राय देता है। यह कुरिन्थ की कलीसिया में चिन्ता का विषय था। पौलुस नहीं चाहता था कि वे इस विषय में अज्ञानी रहें। यह इतना अधिक महत्त्वपूर्ण विषय था कि पौलुस ने इस पर तीन अध्यायों के तुल्य चर्चा की है। वह चाहता था कि कुरिन्थ के विश्वासी इस बात पर विशेष ध्यान दें।

पौलुस ने आत्मिक वरदानों के बारे में अपनी शिक्षा देते समय इस बात का ध्यान रखा था कि वे मूर्तिपूजक पृष्ठभूमि से थे और एक प्रकार से पथभ्रष्ट थे। (पद 2) मूर्तियों में सामर्थ नहीं थी और न ही वे बोल सकती थीं, परन्तु फिर भी कुरिन्थवासी उनके द्वारा पथभ्रष्ट किए गए थे। अब जो विश्वास में आ गए थे वे कैसे यह निश्चित करें कि क्या परमेश्वर की ओर से था और क्या परमेश्वर की ओर से नहीं था। पौलुस ने पद 3 में कहा कि जो भी परमेश्वर के आत्मा के द्वारा बोलता था वह न केवल मसीह यीशु के प्रभु होने की घोषणा करेगा वरन् उसे प्रभु जानेगा भी। पवित्र आत्मा प्रभु यीशु के काम और व्यक्तित्व को कभी नहीं कोसता है। (पद 3) वे जो प्रभु यीशु

के काम और व्यक्तित्व को कम करें या उसका इन्कार करें, वे परमेश्वर की ओर से नहीं बोलते थे।

मसीह के नाम को ऊंचा करने के लिए परमेश्वर ने कलीसिया को आत्मा के वरदान दिए हैं। (पद 11) देखिए पद 4 और 5 में पौलुस कहता है कि एक ही आत्मा के वरदान भिन्न-भिन्न हैं। जो शब्द उसने यूनानी भाषा में काम में लिया है वह है "कैरिस्मेटा" अर्थात् "परमेश्वर का अनुग्रह"। अंग्रेज़ी शब्द "कैरिस्मेटिक" इसी मूल शब्द से निकला है। मसीह को महिमान्वन करने के लिए और कलीसिया की सेवा करने के लिए ये वरदान परमेश्वर की ओर से विशेष योग्यताएं हैं (पद 5)। अब तीसरी बात यह है कि उसी प्रभु की ओर से नाना प्रकार के काम भी हैं अर्थात् परमेश्वर की सामर्थी शक्ति। यह पद 5 की सेवकाईयों से और पद चार के वरदानों से भिन्न हैं।

पद 4 6 में एक और बात पर ध्यान दीजिए कि वह कहता है कि ये वरदान त्रिएक परमेश्वर की ओर से आते हैं। पिता परमेश्वर वरदान देता है (पद 6)। प्रभु यीशु वरदान देता है (पद 5)। और पवित्र आत्मा वरदान देता है (पद 4)। इसका अर्थ यह हुआ कि विश्वासियों को वरदान देने में तीनों एक हैं- सेवकाई और सेवा का सामर्थ।

पद 6 में यह भी स्पष्ट है कि प्रभु ये वरदान "सब मनुष्यों" को देता है। इसका अर्थ है कि प्रभु ने हर एक को कोई न कोई वरदान दिया है कि वह राज्य के विस्तार में उसे काम में ले। पद 7 में पौलुस ने उनसे कहा कि प्रत्येक विश्वासी को आत्मा का प्रकटीकरण प्राप्त है जो कलीसिया की भलाई के लिए है। प्रत्येक विश्वासी सबकी भलाई के निमित्त एक अद्वैत और अति आवश्यक योगदान देता है। ऐसा नहीं है कि जिन विश्वासियों को प्रदर्शनकारी वरदान दिए गए हैं वे ही कलीसिया के लिए उपयोगी हैं।

पद 8-11 में पौलुस ने इन वरदानों के कुछ उदाहरण दिए हैं जो परमेश्वर ने कलीसिया में बांटे हैं। इस सूची में सब वरदान नहीं हैं। आइए हम कुछ वरदानों को देखें।

बुद्धि की बातें (पद 8)

बुद्धि का अर्थ है वास्तविक जीवन में सच्चाई और ज्ञान। जिस व्यक्ति के पास यह वरदान है उसे परमेश्वर सामर्थ देता है कि वह मसीह की देह को निर्देश दे कि वह प्रकाशित सत्य को जीवन में लागू करे। आवश्यक नहीं कि यह व्यक्ति शिक्षक या प्रचारक हो परन्तु उसमें बुद्धि होती है कि वह

परमेश्वर के ज्ञान को दैनिक जीवन में कैसे व्यावहारिक बनाएं, उसकी व्याख्या करे।

ज्ञान की बातें (पद 8)

यह वह वरदान है जिसके द्वारा मसीह की देह के लिए सच्चाई को प्रकट किया जाता है। यह ज्ञान सर्वथा भिन्न होता है। जैसे यीशु ने जान लिया था कि सामरी स्त्री ने पांच पति कर लिए थे। (यूहन्ना 4:18) उसने उस अन्धे व्यक्ति के बारे में भी जान लिया था कि उसका अन्धापन उसके अपने पाप के कारण नहीं था। (यूह. 9:1-3) यह ज्ञान परमेश्वर के वचन में विहित सत्य का अलौकिक ज्ञान भी हो सकता है। ऐसे मनुष्यों को परमेश्वर अपने वचन के अर्थ की व्याख्या करने का सामर्थ भी देता है।

विश्वास (पद 9)

विश्वास तो प्रत्येक विश्वासी में होता है परन्तु कुछ विश्वासियों में असामान्य विश्वास होता है और वे परमेश्वर के लिए असंभव काम करते हैं तथा उसकी आशिषों को पाते हैं। उन्हें प्राप्त प्रार्थना के उत्तर और दबाव ग्रस्त परिस्थितियों में साहस दूसरों को परमेश्वर पर तथा उसके प्रावधानों पर भरोसा करने का प्रोत्साहन देते हैं।

चंगाई का वरदान (पद 9)

यह वरदान कहीं-कहीं विश्वास के वरदान से संबन्धित है परन्तु इसका ध्यान केन्द्र रोगियों पर होता है। परमेश्वर कुछ विश्वासियों को उन लोगों के लिए स्वेच्छा से प्रार्थना करने का बोझ देता है जिन्हें वह चाहता है कि चंगाई प्राप्त करें। चंगाई में शारीरिक, मानसिक और आत्मिक विषय आते हैं। पौलुस चंगाई के लिए वरदानों के बहुवचन का प्रयोग करता है। अत: कुछ लोगों का कहना है कि चंगाई के विभिन्न वरदान हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि कुछ को शारीरिक रोगों की चंगाई के लिए तो कुछ को मानसिक रोगों की चंगाई के लिए वरदान दिए गए हैं। कुछ लोगों का मानना है कि पौलुस द्वारा बहुवचन प्रयोग करने का अर्थ है कि जब परमेश्वर आवश्यक समझे किसी विश्वासी को चंगाई का वरदान बार-बार देता है।

आश्चर्यकर्म करने का सामर्थ (पर 10)

यहां आश्चर्यकर्मों का अर्थ शारीरिक मानसिक और आत्मिक चंगाई के चमत्कारों से नहीं है। यहां आश्चर्यकर्म वह है जो यीशु ने आंधी रोकने में

किया था। परन्तु यह परमेश्वर के राज्य के विस्तार और मसीही की महिमा के लिए होता है।

भविष्यद्वाणी (पद 10)

धर्मशास्त्र में भविष्यद्वाणी का अर्थ है किसी स्थिति विशेष के बारे में परमेश्वर के वचन को व्यक्त करना। यह भविष्य से संबन्धित हो सकती है परन्तु धर्मशास्त्र की अधिकांश भविष्यद्वाणियां वर्तमान से संबन्धित होती हैं। पौलुस के विचार में भविष्यद्वाणी मसीह की देह को प्रोत्साहन, सामर्थ और सान्त्वना प्रदान करती है। (14:3) बाइबल के भविष्यद्वक्ता के पास परमेश्वर की वाणी सुनने की क्षमता थी और उस वचन को व्यक्ति-विशेष या संपूर्ण समुदाय पर प्रकट करने का साहस था। इन वरदानों को पाने वाले विश्वासी परमेश्वर की प्रजा पर उसका सत्य प्रकट करने के लिए एक विशेष समय और परिस्थिति में परमेश्वर के प्रवक्ता होते हैं।

आत्माओं में अन्तर जानना (पद 10)

इस वरदान के द्वारा किसी व्यक्ति या किसी संस्था को जाना जाता है कि वह परमेश्वर की ओर से है या शैतान की ओर से। इसके द्वारा किसी में दुष्टात्मा की उपस्थिति की जानकारी भी ली जाती है। पतरस ने इसी वरदान द्वारा जान लिया था कि हनन्याह को शैतान ने प्रेरित किया था कि वह कलीसिया को दान दे (प्रे. का. 5)। यीशु ने फरीसियों की बातों में छल को पहचाना था। जिन लोगों में यह वरदान होता है वे व्यक्ति विशेष या परिस्थिति विशेष में अच्छाई या बुराई को देख लेते हैं। वे मसीह की देह के लिए पहरुए होते हैं कि खतरों से उन्हें अवगत करें।

अन्य भाषाओं में बोलने के वरदान (पद 10)

बाइबल में दो प्रकर की अन्य भाषाएं दी गई हैं। प्रेरितों के काम 2 में विभिन्न भाषाएं थीं जिन्हें प्रेरित स्वयं तो नहीं समझते थे परन्तु सुनने वाले समझते थे। इस वरदान का उद्देश्य है- अन्य भाषाओं में सुसमाचार का प्रचार। 1 कुरिन्थियों 14 में पौलुस जिन अन्य भाषाओं का उल्लेख कर रहा है वह बोलनेवाले और सुननेवाले दोनों ही नहीं जानते हैं। इस भाषा का उद्देश्य प्रचार नहीं अपितु आराधना, प्रार्थना और कलीसिया का निर्देशन है। (यदि अनुवाद किया जाए तब) तथा व्यक्तिगत विकास है। "भाषाएं" वे भाषाए हैं जिनका उल्लेख हम यहां कर चुके हैं। ये भाषाएं वे भाषाएं हैं जिन्हें बोलनेवाला स्वयं

तो नहीं समझता परन्तु उनका उद्देश्य यह होता है कि प्रचार द्वारा, निर्देशन द्वारा और व्यक्तिगत विकास द्वारा परमेश्वर के राज्य का विस्तार हो।

भाषाओं का अनुवाद (पद 10)

अन्यभाषा का सही अनुवाद करना। यह कलीसिया के विकास के लिए होती है। अन्य भाषा का अनुवाद आम सभा में (1 कुरि. 14:3) या व्यक्तिगत परिस्थिति में किया जाए। अन्य भाषा बोलनेवाला अपना ही अनुवाद कर सकता था। (1 कुरि. 14:13) ऐसे व्यक्ति में अन्य भाषा में बोले जाने वाली विषय वस्तु को जानने की क्षमता होती है।

परमेश्वर मसीह की देह को वे वरदान देता है जो उसके राज्य के विस्तार में आवश्यक हैं। अन्तिम निर्णय परमेश्वर का ही होता है कि हमें कौन सा वरदान दिया जाए। हमें उस वरदान को मसीह की देह की भलाई में उपयोग करके सन्तुष्ट होना है।

ध्यान देने योग्य बातें:

- आप ऐसा क्यों सोचते हैं कि पवित्र आत्मा के वरदानों का कुछ समुदायों में संकट होता है?
- क्या परमेश्वर ने आपको इन वरदानों में से एक या दो दिए हैं? वे क्या हैं? आप इनका उपयोग पूरी कलीसिया के लिए कैसे कर रहे हैं?

प्रार्थना निवेदन:

- यदि आप नहीं जानते कि परमेश्वर ने आपको क्या वरदान दिए हैं तो परमेश्वर से याचना करें कि वह आपको बताए।
- प्रभु का धन्यवाद करें कि वह अपने राज्य के विस्तार में आपका ऐसा प्रभावी प्रयोग कर रहा है।
- परमेश्वर से याचना करें कि वह आपको वरदानों के उपयोग के अवसर देता है।

22
एक देह

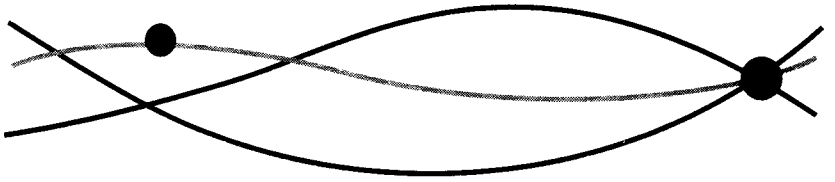

पढ़िए 1 कुरिन्थियों 12:12-31

कुरिन्थ की कलीसिया को यह समझाकर कि परमेश्वर विभिन्न विश्वासियों को विभिन्न वरदानों से सुसज्जित करता है, पौलुस उन्हें समझाता है कि ये वरदान अलग-अलग हैं परन्तु कलीसिया की भलाई के लिए कैसे काम में लिए जाते हैं। इस सत्य को समझाने के लिए उसने मानवीय देह का उदाहरण दिया कि विभिन्न अंग देह के कामों को एक साथ करते हैं। इसी प्रकार मसीह की देह है (पद 12) जिसमें अलग अलग संस्कृतियों और सामाजिक पृष्ठभूमियों के मनुष्य (यहूदी, यूनानी, दास, स्वतन्त्र आदि) पवित्र आत्मा से बपतिस्मा पाए हैं और उसी आत्मा से पीते हैं। (पद 13)

पौलुस ने जब कहा कि विश्वासी एक ही आत्मा द्वारा बपतिस्मा पाकर एक ही देह हैं तब उसका तात्पर्य आत्मा के बपतिस्मे से था, पानी के नहीं। आत्मा के बपतिस्मे का अर्थ है विश्वासी में पवित्र आत्मा का आकर अपना जीवन रोपित करना तथा उन्हें परमेश्वर की सन्तान बनाना। इस समय नया विश्वासी उद्धार के कुएँ से पीने के लिए समर्थ और बलशाली होता है तथा उसके सब लाभों का अनुभव करता है। इसका व्यवहारात्मक अर्थ क्या है?

पवित्र आत्मा ने आकर मरियम के गर्भ में मसीह के बीज को बोया था उसी प्रकार नया जन्म पाने पर पवित्र आत्मा आकर उस मनुष्य में मसीह के जीवन को रोपित करता है और हम में वास करने के द्वारा हमारे चरित्र को बदल देता है कि हम परमेश्वर की आज्ञा का पालन करें।

इसी प्रकार पवित्र आत्मा ने कुरिन्थ के विश्वासियों को बपतिस्मा देकर उन्हें एक आत्मिक परिवार में रखा था। पौलुस ने उनसे कहा कि यदि उनमें मसीह का आत्मा नहीं था तो वे मसीह के नहीं थे। (रोमियों 8:9) किसी मनुष्य में मसीह का आत्मा आने पर ही वह पमरेश्वर की सन्तान बनता है।

हमें यहां पर समझने की आवश्यकता है कि पवित्र आत्मा से भर जाने पर प्रत्येक विश्वासी अपने आप में अलग ही होता है। देह तो एक होती है परन्तु अंग अलग-अलग होते हैं। (पद 14) देह के सुचारू रूप से काम करने के लिए प्रत्येक अंग आवश्यक है। पैर नहीं कह सकता कि वह हाथ नहीं होने के कारण देह का अंग नहीं है। (पद 15) न ही कान कह सकता कि वह आंख न होने के कारण देह का अंग नहीं है। (पद 16) यह मूर्खता है परन्तु फिर भी हम अपने वरदानों और सेवकाइयों की दूसरों से तुलना करने की सोचते हैं कि हम कलीसिया के अंग नहीं हैं।

पद सत्रह में पौलुस इस विचार को चुनौती देता है। उसने कहा कि यदि पूरा शरीर आंख हो तो वह सुनेगा कैसे? यदि पूरा शरीर कान हो तो वह संघेगा कैसे? सत्य तो यह है कि परमेश्वर ने ही यह निर्धारित किया शरीर के अनेक अंग हों जिसमें प्रत्येक अंग शरीर के लिए आवश्यक हो। आंख हाथ से नहीं कह सकती कि मुझे तेरी आवश्यकता नहीं या सिर पैर से नहीं। कह सकता कि उसे पैर की आवश्यकता नहीं है।

सिर पैर से अधिक सम्मान पाता है परन्तु शरीर के सुचारू रूप से काम करने में पैर की भूमिका कम नहीं होती है। सिर सोचने का काम करता है और हाथ पैर उस काम को पूरा करने का काम करते हैं। इसी प्रकार मसीह की देह में ईर्ष्या का स्थान नहीं है। उसमें प्रत्येक विश्वासी की अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका है। कोई वरदान दूसरे वरदान से बड़ा नहीं है। कलीसिया के सुचारू रूप से काम करने के लिए सब महत्त्वपूर्ण एवं आवश्यक हैं।

क्या आपने कभी अपने पांव की उंगली पर चोट खाई है? यह अंग तो महत्त्वपूर्ण नहीं है। इसी प्रकार यदि मैं हाथ की उंगली पर हथौड़ा मार लूं तो मुंह से चीख निकल जाती है। और दर्द हाथ से होता हुआ दिल तक पहुंच

जाता है। मैं दर्द से कराह उठता हूं। पूरे शरीर में प्रतिक्रिया होने लगती है और मेरा काम रुक जाता है। पौलुस कहता है कि इसी प्रकार महत्त्वहीन वरदान भी मसीह की देह में अति आवश्यक हैं।

पद 28 में पौलुस ने कुरिन्थ की कलीसिया से कहा कि परमेश्वर ने कलीसिया में विश्वासियों को नाना प्रकार के काम करने के लिए अपनी अपनी जगह रखा है। इस सत्य को अनदेखा न किया जाए। किसी को क्या काम दिया जाए यह परमेश्वर का अपना सोचना है, मेरी इच्छा नहीं है। अत: कोई किसी वरदान को पाने की चेष्टा करे कि उसका अधिक लाभ हो तो वह अधिकार परमेश्वर ने उसे नहीं दिया है। हमें उसी में सन्तुष्ट रहना चाहिए जो परमेश्वर ने हमें दिया है।

पौलुस ने पद 28 में कुरिन्थ के विश्वासियों से कहा कि कलीसिया में मनुष्यों की भूमिका अलग अलग हैं जिन्हें परमेश्वर ने निर्धारित किया है और इन्हें अनदेखा न किया जाए। यह सर्वाधिकार परमेश्वर के हाथ में सुरक्षित है। देह में मेरी सेवा मेरी इच्छा का काम नहीं है। अत: मुझे उन वरदानों की लालसा नहीं करना है जो महत्त्वपूर्ण और ध्यान आकर्षण करने वाले प्रतीत हों। परमेश्वर ने हमें जो दिया है हमें उसी में सन्तुष्ट रहना है।

पौलुस ने कलीसिया में मनुष्यों की भूमिका का उल्लेख भी किया था। वे हैं- प्रेरित, भविष्यद्वक्ता, शिक्षक, चमत्कार करनेवाले, चंगाई देनेवाले, सहायता करनेवाले, प्रबन्ध करनेवाले, अन्य भाषा बोलनेवाले। (पद 28)। प्रेरितों को परमेश्वर ने पहले ही चुन लिया था जो प्रभु और उसकी शिक्षाओं के साक्षी थे। पवित्र आत्मा की प्रेरणा से प्रेरितों ने आरंभिक कलीसिया की स्थापना की और परमेश्वर द्वारा उन्हें दिए गए वचन की अधिकृत शिक्षा दी। हमारा विश्वास प्रेरितों के धर्म सिद्धान्त और शिक्षा पर आधारित है। उनकी शिक्षा को अधिकार चिन्ह और चमत्कारों द्वारा पुष्ट किया गया था। उन्होंने मसीह की कलीसिया के संस्थापक होने के नाते अधिकार संपन्न शिक्षा दी थी।

नये नियम के लिखे जाने से पहले कलीसिया में भविष्यद्वक्ता में सामर्थ का होना विहित था कि वह परमेश्वर के मन के विचार उनके जनों पर प्रकट करे जो समय और परिस्थिति विशेष से संबन्धित हों और परमेश्वर के प्रकाशित वचन के माध्यम से हों। यह कलीसिया के लिए विशेष समय और आवश्यकता में प्रोत्साहन, निर्देश और सान्त्वना के शब्द भी हो सकते थे।

शिक्षक परमेश्वर के सत्य का व्याख्याता था कि विश्वासी वचन के सत्य को अन्तर्ग्रहण कर पाएं। शिक्षक और भविष्यद्वक्ता में अन्तर केवल उनके

कलीसिया में स्थान का था। शिक्षक के पास परमेश्वर के वचन की अन्तर्दृष्टि प्राप्त की जाती थी कि उसकी सामान्य व्यावहारिकता क्या है जबकि एक भविष्यद्वक्ता के पास बैठने पर समझ में आता था कि परमेश्वर किस पाप को स्पष्ट रूप से उजागर कर रहा है या आपके जीवन की किस विशेष आवश्यकता की ओर संकेत कर रहा है।

पौलुस ने उन्हें यह भी कहा था कि परमेश्वर ने कलीसिया में आश्चर्यकर्म करनेवालों की नियुक्ति की थी। परमेश्वर ने इन्हें रखा था कि वे प्रकृति पर परमेश्वर की प्रभुता का प्रदर्शन करें। उनकी प्रार्थनाओं से असंभव संभव होता था। ये लोग प्रेरित, भविष्यद्वक्ता और शिक्षकों के वचन की पुष्टि चिन्ह और चमत्कारों द्वारा करते थे।

शारीरिक, मानसिक और आत्मिक रोगों के चंगा करनेवाले भी परमेश्वर ने कलीसिया में रखे थे। परमेश्वर उन पर अपनी इच्छा प्रकट करता था और वे अधिकार से परमेश्वर द्वारा दिखाए गए रोगी के लिए प्रार्थना करके उसे चंगा करते थे।

कुछ ऐसे भी लोग परमेश्वर ने कलीसिया में रखे थे जो आवश्यकताग्रस्त लोगों की सहायता करते थे। ये लोग मनुष्यों की उन आवश्यकताओं को देख पाते थे जिन्हें अन्य विश्वासी देखने में असमर्थ थे।

मसीह की देह को आगे बढ़ाने में आवश्यक बातों की दूरदर्शिता रखनेवालों को भी परमेश्वर ने वरदान दिये थे। ये लोग राजनीतिज्ञ वित्त, व्यवस्था तथा सामान्य प्रबन्धन में दक्ष थे कि परमेश्वर के राज्य का विस्तार देख प्रसन्न हों।

यहां पौलुस अन्य भाषाओं के वरदान का उल्लेख सबसे अन्त में करता है। ये भाषाएं वही दो भाषाएं हैं। एक, अन्य भाषा जो बोलनेवाला नहीं परन्तु सुननेवाला समझे कि सुसमाचार का प्रचार बढ़े। दूसरा, न बोलनेवाला और न सुननेवाला समझे जो प्रार्थना और अनुवाद करने पर कलीसिया के मार्गदर्शन के लिए थी।

अन्त में पौलुस ने कुछ प्रश्न पूछे। क्या सबको प्रेरिताई का वरदान मिला है? क्या हर एक मनुष्य को भविष्यद्वक्ता, शिक्षक या आश्चर्यकर्म करने वाला ठहराया गया है? इन सब प्रश्नों का उत्तर प्रत्यक्ष है, नहीं। प्रत्येक विश्वासी को एक अलग वरदान दिया गया है।

परमेश्वर ने अपने राज्य के विस्तार के लिए प्रत्येक विश्वासी को निभाने के लिए एक भूमिका दी है जो उसकी समझ के अनुसार है। यही कारण है कि हमें कलीसिया में एक दूसरे की आवश्यकता है। यदि हर एक के पास सब वरदान हों तो हमें एक दूसरे की क्या आवश्यकता? परमेश्वर ने ही हमें ऐसा बनाया है कि हमें एक दूसरे की आवश्यकता होती है।

अन्त में पौलुस कुरिन्थ के विश्वासियों से कहता है कि वे आत्मिक वरदानों की वरन् महत्त्वपूर्ण वरदानों की खोज करें। (उदाहरण 1 कुरि. 14:1) देखिए, वह उनसे इन वरदानों की लालसा करने के लिए कहता है। अर्थात् हम बैठकर यह न सोचें कि परमेश्वर चाहेगा तो हमें दे देगा। ऐसा विचार पौलुस की शिक्षा के विरुद्ध था। पौलुस ने उन्हें चुनौती दी कि वे ईर्ष्या न करें कि किसको क्या दिया गया है। परन्तु आत्मिक वरदानों की पूर्ण अभिव्यक्ति की खोज में लगे रहें। किसे वरदान प्राप्त है वे चिन्ता न करें। सब वरदानों का प्रेमपूर्ण प्रयोग परमेश्वर का महिमान्वन करता है। प्रभु आज हमारा उपयोग करे कि हम उसके राज्य के विस्तार में उसकी महिमा के निमित्त प्रेम से पूर्ण होकर काम आएं।

ध्यान देने योग्य बातें:

- क्या आपको कभी ऐसा प्रतीत हुआ है कि आपके वरदान महत्त्वपूर्ण नहीं हैं? इस गद्यांश में हमने कलीसिया के लिए प्रत्येक वरदान के महत्त्व के बारे में क्या सीखा है?
- आप अपनी कलीसिया में किस वरदान का प्रमाण देखते हैं? क्या वहां कोई ऐसा है जिसे अपने वरदानों के उपयोग के लिए आपके प्रोत्साहन की आवश्यकता है?
- परमेश्वर ने आपको क्या वरदान दिए हैं?

प्रार्थना निवेदन:

- आपकी कलीसिया को परमेश्वर ने जो वरदान दिए हैं उनके लिए उसका धन्यवाद करें।
- परमेश्वर से प्रार्थना करें कि वह आपके वरदानों को और कलीसिया में आपकी भूमिका को स्पष्ट करे।
- यदि आप परमेश्वर द्वारा दिए गए वरदानों को नहीं समझ रहे हैं तो प्रार्थना करें कि परमेश्वर आपको स्पष्ट दिखाए।

23

प्रेम धीरजवन्त और कृपालु है

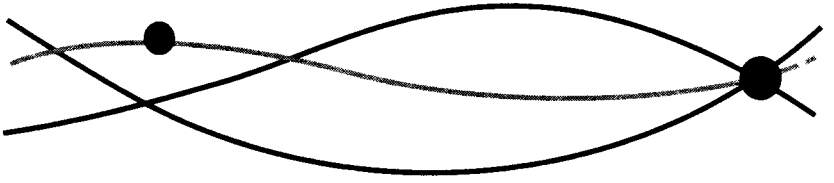

पढ़िए 1 कुरिन्थियों 13:1-4

अध्याय 12 में पौलुस ने कुरिन्थियों को समझाया कि परमेश्वर ने मसीह की देह को अनेक वरदान दिए हैं और ये वरदान एक ही मनुष्य को नहीं अपितु सबको अलग अलग दिए हैं और इन सब वरदानों में एक समानता है कि उनका उपयोग प्रेम में किया जाना है। प्रेम के बिना ये वरदान झनझनाती हुई झांझ के समान हैं। उदाहरण के रूप में, यदि मैं किसी को प्रेम से रहित सत्य बताऊं तो वह बड़ा कर्कश सुनाई देगा। इसी प्रकार किसी में भविष्यद्वाणी का वरदान है और वह गहन भेदों को जान सकता है परन्तु यदि वह प्रेम से रहित मनुष्य है तो सब कुछ व्यर्थ हो गया।

पौलुस ने कुरिन्थियों से कहा कि यदि वे अपना सब कुछ गरीबों को दे दें, यहां तक कि जान भी परन्तु उनमें प्रेम न हो तो बलिदान किस काम का? पौलुस की समझ में प्रेम आत्मिक वरदानों का आवश्यक तत्व है। पद 4-7 में वह समझाता है कि प्रेम क्या है।

हम सब यही चाहते हैं कि हमें अच्छी सेवकाई और अच्छे संबन्ध प्राप्त हो जाएं परन्तु जो सबसे बड़ी चोट हमें लगती है वह उनसे लगती है जिन्हें हम सबसे अधिक प्रेम करते हैं।

जब से मानवता पाप में गिरी है तब से न तो कोई सिद्ध मित्रता, न विवाह और न सेवकाई रही। आदम और हव्वा ने घनिष्ठता और अपने प्रिय पुत्र को खो दिया। याकूब की पत्नी लिआ ने अपने पति के प्रेम का वियोग जीवन भर सहा। योनातन और दाऊद शाऊल की ईर्ष्या के कारण एक दूसरे के वियोग से दुखी रहे थे। दाऊद पुत्र के विद्रोह से दुखी था। उड़ाऊ पुत्र का पिता अपने पुत्र की उद्दण्डता से दुखी था। चेलों को यहूदा के विश्वासघात का दुख था। पतरस प्रभु के इन्कार पर पछतावा करता रहा था। इस प्रकार यह सूची अनन्त है।

यह सब पाप का परिणाम है। अब एक **प्रश्न** है- "हम दूसरों के प्रति कैसा व्यवहार रखें जबकि उन्हें सेवा देने में ऐसे कष्ट हैं?" पौलुस के पास इसका उत्तर है, प्रेम! तो आइए हम देखें कि पौलुस बाइबल आधारित प्रेम के बारे में क्या कहता है।

प्रेम धीरजवन्त है

पौलुस ने "धीरजवन्त" के लिए यूनानी में जो प्रयोग किया वह है, "माकरोथूमिओ।" यह दो शब्दों का युगल शब्द है। पहला है "माकरोस" अर्थात् समय की सीमा में लम्बा। दूसरा है "थूमोस" अर्थात् क्रोध या आक्रोश। इस प्रकार इसका अर्थ हुआ कि किसी के क्रोध या वहशीपन को बहुत लम्बे समय तक सहन करना। पिता परमेश्वर का प्रेम ऐसा ही है। मनुष्य उसका विरोधी था परन्तु वह अपमान और दुख को सहता रहा जैसे कि एक पत्नी/पति अपने जीवन-साथी के कटाक्षों को सहकर आजीवन विश्वासयोग्य बनी/बना रहता है। यह माता-पिता की सहनशीलता है जिसे वे अपने विद्रोही पुत्र के प्रति रखते हैं। अन्त में परमेश्वर ने हमारे पापों के निमित्त अपनी जान तक गंवा दी। यही तो प्रेम है कि सब दुख सहकर भी अपने अपराधी की भलाई में लगे रहें। यह प्रेम तो उस प्रेमी परमेश्वर का है कि जब हम उसके बैरी थे वह हम तक पहुंचा। दुख सुखद अनुभव तो नहीं है परन्तु उसे सहन करते रहें। प्रेम-समय बुरा देखकर भाग खड़ा नहीं होता है। इस प्रेम का सबसे बड़ा उदाहरण प्रभु यीशु है जिसने क्रूस पर हमारी लज्जा को उठाया।

सच्चा प्रेम वह समझता है जो किसी के द्वारा दुख देने पर भी उसकी भलाई सोचता है। वह दुख उठाता है परन्तु दुख देकर आनन्दित नहीं होता।

ऐसा समय भी होता है जब प्रेम अपनी सुरक्षा करता है परन्तु वह दुख उठाकर भी वफ़ादार रहता है। वह प्रेम को त्याग नहीं देता। वह अपने प्रेमी के लिए कैसा भी कष्ट उठा लेता है। उसके प्रेम को बदलनेवाली कोई परिस्थिति नहीं है। (देखिए पौलुस क्या कहता है, रोमियों 8:38-39) कैसी सान्त्वना! मसीह का प्रेम तो ऐसा है कि उसे हमसे कुछ भी अलग नहीं कर सकता, चाहे वह हमारा पाप हो या भूल-चूक! प्रेम का अर्थ दुख और कष्टों का निवारण नहीं परन्तु उनको सहन करना है कि किसी का भला हो। यही यीशु ने किया और हमारे लिए उदाहरण छोड़ दिया।

प्रेम कृपालु है

कृपा से बढ़कर कोई शक्ति नहीं। पाश्विक बल विरोध उत्पन्न करता है। क्रोध के शब्द कलह उत्पन्न करते हैं। चुप रहने से कड़वाहट और निराशा आती है। कृपालु व्यवहार बाधाओं को तोड़ देता है। पौलुस ने यूनानी भाषा में कृपालु के लिए "ख्रेस्त्युओमाए" शब्द का उपयोग किया है जिसका अर्थ है "परोपकार।" इसका मूल शब्द है, "ख्रेस्तोस" अर्थात् "काम में लेना"। ध्यान दीजिए कि कृपालु यूनानी भाषा में क्रिया शब्द है।

यहां प्रेम को कृपालु कहने में पौलुस का विचार है कि वह मन के स्वभाव से कहीं अधिक होता है। यहां जिस दयालु स्वभाव को पौलुस समझाना चाहता है वह मन की प्रकृति से कहीं अधिक है। यदि आप अपने आस-पास के लोगों के लिए उपयोगी नहीं हैं तो आप दया का प्रदर्शन नहीं कर सकते। दया का अर्थ ही है "किया जाना।" दयालुता किसी की आवश्यकता को देखकर कुछ करना चाहती है। यह किसी के लिए समय और परिश्रम की बलि मांगती है।

आपको दया दिखानेवालों के साथ दयावन्त होना आसान है परन्तु कष्ट देनेवालों को दया दिखाना कठिन होता है। यहां ध्यान दीजिए कि पौलुस दया को सहनशीलता के तुरन्त बाद रखता है। कहने का अर्थ यह है कि प्रेम दुर्व्यवहार के उपरान्त भी दया का प्रदर्शन करता है। प्रेम बलिदान देकर अपने आप ही निर्दयी और उत्पीड़क को गले लगाता है। हम यीशु की आज्ञा में देखते हैं (लूका 6:35-36) कि अपने दुश्मन से प्रेम रखो और उनकी भलाई करो, तथा पाने की आशा न रखकर उन्हें दो। तब स्वर्ग में तुम्हारा प्रतिफल बड़ा है और तुम परमप्रधान की सन्तान कहलाओगे क्योंकि वह अकृतज्ञ और दुष्ट पर भी कृपा दर्शाता है। अपने स्वर्गीय पिता की नाईं दयावन्त बनें।

प्रेरित यूहन्ना इसी बात को कहता है, हम प्रेम को इस प्रकार जानते हैं: "प्रभु यीशु मसीह ने हमारे लिए प्राण दे दिए। अत: हमें भी भाइयों के लिए प्राण देने चाहिए। यदि किसी के पास संसार की सम्पत्ति हो और वह अपने भाई को गरीब देखकर उस पर तरस खाना न चाहे तो उसमें परमेश्वर का प्रेम किस प्रकार बना रह सकता है? प्रिय बच्चों, हम केवल शब्दों और मुंह से नहीं पर अपने काम और सत्य के द्वारा भी प्रेम करें।" (1 यूहन्ना 3:16-18) सच्चा प्रेम अपनी जान देने तक दयालु बना रहता है। वह कीमत नहीं देखता है। वह प्रभु यीशु का चरित्र और कार्य देखता है।

पति-पत्नी में प्राय: ऐसा होता है कि आरंभ में तो वे एक दूसरे को अपनी जान से अधिक प्रेम करते हैं परन्तु धीर-धीरे वे अपनी जान को अधिक प्रेम करने लगते हैं। मुझे अच्छी तरह से याद है कि जब मेरा विवाह हुआ था तब मैं अपनी पत्नी के लिए अनेक प्रेम के और लगाव के काम करता था। देर रात तक उससे बातें करना और तड़के सुबह उठकर उसकी सेवा करना। उसकी आवश्यकताओं पर ध्यान देना परन्तु समय के साथ अब जब मुझसे कुछ चाहती है तो मैं झुंझला उठता हूं। अब उसके लिए बलिदान का अन्त:करण पहले का सा नहीं रहा।

आप अपनी सेवकाई को नया और ताज़ा देखना चाहते हैं तो उसमें कृपालुता भर दें और मसीह की नाई काम में आएं। आपको उपलब्धियां देखकर अचम्भा होगा।

बाइबल आधारित प्रेम के पास दूसरों की आवश्यकता देखने के लिए आंखें होती हैं और वह व्यावहारिक सेवा के लिए तत्पर रहता है। हम में उपस्थित मसीह का प्रेम छोटी और बड़ी बातों में मनुष्य के साथ कृपालु व्यवहार करने में बड़े आनन्द का अनुभव करता है।

ध्यान देने योग्य बातें:

- क्या आप किसी के जीवन में कष्ट का कारण बनें हैं? उन्हें लिखें और प्रभु के सामने रखें, तब जाकर उनसे क्षमा मांगें।
- इस गद्यांश से हम अपने उद्दण्ड बच्चों, या हमें चोट पहुंचानेवाले मित्र या पति या पत्नी के प्रति कैसा व्यवहार करना सीखते हैं?
- सोचिए कि क्या ऐसे मनुष्य हैं जिनके व्यवहार से दुखी हो आप उनसे प्रेम नहीं रख पाते। उनके प्रति आपका व्यवहार कैसा है?

- आप अपने साथ के मनुष्यों को कृपा कैसे दिखाते हैं? इनमें से कम से कम एक बात को आनेवाले कुछ दिन व्यवहार में लें।
- क्या आप ध्यान कर सकते हैं कि इस सप्ताह आप किसको कृपा दिखाने से चूक गए? अपनी इस भूल को परमेश्वर के सामने रखें। धर्मशास्त्र में आपको दी गई क्षमा की याचना करें।

प्रार्थना निवेदन:

- क्या आप किसी से कभी आहत हुए हैं? कड़वाहट को परमेश्वर के सामने रखें और याचना करें कि परमेश्वर इस व्यक्ति के प्रति धीरजवन्त प्रेम प्रदान करे।
- परमेश्वर को आपके लिए उसके धीरजवन्त प्रेम के लिए धन्यवाद दें जो उसने आपके पाप और विद्रोह के उपरान्त भी आपसे रखा।
- प्रभु से प्रार्थना करें कि वह आज आपको कृपा प्रदर्शन का मार्ग दिखाए। जब वह आपसे बात करे तो सुनने को तत्पर रहें।
- प्रभु से क्षमा मांगें कि आप समय पाने पर कृपा प्रदर्शन करने से चूक गए। प्रार्थना करें कि आप अपने ऊपर कम और दूसरों पर अधिक ध्यान दें।

24

प्रेम ईर्ष्या नहीं करता और अपनी बड़ाई नहीं करता

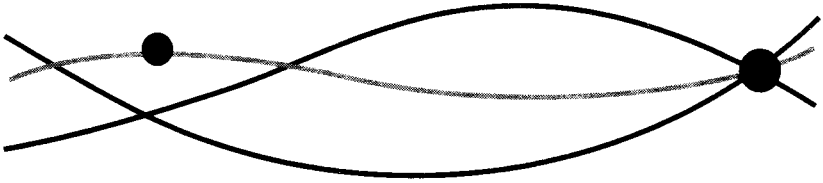

पढ़िए 1 कुरिन्थियों 13:4

प्रेम ईर्ष्या नहीं करता

आइए हम ईमानदारी से पूछें कि क्या हमारे मन में ईर्ष्या नहीं है? एक सप्ताह भी ऐसा नहीं जाता जब हम किसी के पास कुछ देखकर जलते नहीं। हो सकता है कि हमारे किसी साथी का व्यापार हमसे अधिक लाभ दे रहा हो, या हो सकता है कि किसी माता-पिता द्वारा बच्चों के पोषण में अधिक आसानी दिखाई देती है, या हमारे अथक परिश्रम के बाद भी हमारे सहपाठी हमसे अच्छे अंक पाते हैं, या किसी विश्वासी के पास वह वरदान है जिसकी कामना हम भी करते हैं।

बाइबल में अनेक बार ईर्ष्या से सावधान रहने को कहा गया है। पौलुस ईर्ष्या के बारे में रोमियों 1:28-29 में भी कहता है कि वह विकृत मानसिकता का फल है। गलतियों 5:18-21 में पौलुस ईर्ष्या को पाप के कामों की सूची में रखता है जिसमें जादू-टोना, ईर्ष्या, व्यभिचार और पियक्कड़पन हैं। पतरस ने अपने पहले पत्र 2:1 में पाठकों से आग्रह किया कि वे ईर्ष्या से मुक्ति पाएं। ईर्ष्या को ऐसा गंभीर पाप क्यों माना गया है? इसके तीन कारण हैं।

पहला, ईर्ष्या हमें कहां ले जाती हैं? उत्पत्ति 37:11 में यूसुफ के भाई उसके प्रति पिता के प्रेम के कारण यूसुफ से ईर्ष्या रखते थे और वे उसकी हत्या करना चाहते थे। मत्ती 27:18 में ईर्ष्या की के कारण यहूदियों ने यीशु को मृत्यु दण्ड दिलवाया। ईर्ष्या द्वारा शैतान हमारे जीवन में आता है और हमारा अन्त कहां होगा यह हम नहीं जानते।

दूसरा, ईर्ष्या आत्मकेन्द्रित होती है। इसे दूसरे स्थान से प्रसन्नता नहीं होती है। यह दूसरों की आवश्यकता को नहीं पहचानती। धर्मशास्त्र कहता है कि हम दूसरों को अपने से अधिक महत्त्वपूर्ण समझें परन्तु ईर्ष्या इसकी विरोधी है।

तीसरा कारण है कि यह परमेश्वर की इच्छा का तिरस्कार करती है। यह स्वीकार नहीं करती कि परमेश्वर किसी को आशीष दे। यह कहती है कि परमेश्वर मुझको ही सब आशिषें क्यों नहीं देता। यह परमेश्वर की उस परमप्रधान इच्छा को चुनौती देती है जिसमें होकर वह किसी को भी मनचाही आशीष देने का अधिकार रखता है।

पद चार में पौलुस ने कुरिन्थ की कलीसिया से कहा कि प्रेम करनेवालों में ईर्ष्या नहीं होती। पद 3:3 में उसने कुरिन्थ के विश्वासियों को ईर्ष्या के लिए झिड़का था। हम किसी से प्रेम करते हैं तो उसकी समृद्धि से आनन्दित होते हैं परन्तु ईर्ष्या करने पर अप्रसन्न होते हैं। ईर्ष्या प्रेम का वध करती है। वह दूसरों की समृद्धि पर आनन्द करने की हमारी क्षमता का नाश करती है। ईर्ष्या जीवन को एक स्पर्धा और द्वन्द्व बनाती है। नीतिवचन 14:30 में लिखा है कि ईर्ष्या हडिड्यों को गला देती है।

हमारे मसीही प्रेम की एक परख है कि हम किसी की समृद्धि पर कैसी प्रतिक्रिया दिखाते हैं। क्या उनकी सफलता और सुविधा हमारे मन में कड़वाहट उत्पन्न करती है? क्या हम मन में उनकी आशिषों की लालसा अपने लिए करते हैं? क्या हम हमारी असफलताओं के क्षेत्र में दूसरों की सफलता पर आनन्द करते हैं? क्या हम दिल से दूसरों के सम्मान में आनन्दित होते हैं? सच्चे प्रेम में ईर्ष्या होती ही नहीं है!

प्रेम अपनी बड़ाई नहीं करता

कुछ जानवर ऐसे होते हैं जो अपनी मादा को आकर्षित करने के लिए अपने बल का प्रदर्शन करते हैं या अन्य जानवरों पर अपनी प्रभुता दिखाते हैं या अपने रूप-रंग से उसे आकर्षित करते हैं। मनुष्यों की भी यही प्रवृति होती है। हम मनुष्य के मूल्य को उसके रूप रंग और योग्यता से आंकते हैं। हम

एक दूसरे से तुलना करके ऊपर उठना चाहते हैं और कुछ नहीं तो नीचे नहीं रहना चाहते हैं।

पौलुस के कहने का अर्थ क्या था कि प्रेम अपनी बड़ाई नहीं करता? व्यापार में देखा जाता है कि जो वस्तु बिकती नहीं उसकी बड़ाई करनी पड़ती है। लोगों को आकर्षित करने के लिए उसका गुणगान किया जाता है परन्तु मसीही प्रेम में यह सब आवश्यक नहीं है। हमें किसी को प्रभावित नहीं करना है।

पौलुस ने कुरिन्थ के विश्वासियों से कहा कि वे वह प्रेम सबके साथ रखें जो परमेश्वर ने उनके साथ रखा कि उनके सब दोष और कलंक समेत उन्हें अपना लिया और चाहे कुछ भी हो वह हमें अपनाएगा (रोमि. 8:31-39)। उसका प्रेम विश्वासयोग्य और भटके हुए में पक्षपात नहीं करता है। उसकी सेवा में हमारे महान काम न तो उस प्रेम को बढ़ाते हैं और न ही हमारी चूक और दुर्बलताएं उस प्रेम को कम करती है। यही सच्चा प्रेम है। यही सच्ची सुरक्षा है। बड़ाई करने से प्राप्त सराहना सुरक्षा नहीं होती है। सच्चे प्रेम की कोई शर्त नहीं, कोई आकर्षण नहीं।

बड़ाई करने में भी आत्मकेन्द्रित होने की प्रवृत्ति है। ऐसे लोग अपने आप को अन्यों से उत्तम दिखाते हैं। उनका ध्यान अपने ही ऊपर रहता है। यह सब बाइबल विरोधी है। बाइबल के प्रेम का केन्द्र अन्य जन होते हैं। सच्चा प्रेम निर्माण करता है। सच्चा प्रेम मृत्यु को स्वीकार करता है। वह दूसरों को अपने से अधिक महत्व देता है। वह मसीह की खूबियों की बड़ाई करता है।

प्रभु यीशु के पास तो अपनी बड़ाई करने के अनेक कारण थे परन्तु उसने कभी अपनी बड़ाई नहीं की। उसने सदैव अपने पिता की महिमा की। (यूह. 12:49-50) प्रभु यीशु पिता के प्रेम में सुरक्षित था, अत: वह दूसरों से प्रेम करने में असुरक्षित प्रतीत नहीं करता था। प्रभु हमें सिखाए कि हम दूसरों से उसका सा प्रेम रखना रखें।

ध्यान देने योग्य बातें:

- ध्यान करें कि अन्तिम बार आपको कब किसी से ईर्ष्या हुई थी। इससे आपको उस व्यक्ति के प्रति कैसी भावना का अनुभव हुआ था?
- आपके मित्र, पति/पत्नी के प्रति आप किस बात से आकर्षित हुए थे? क्या समय के साथ इस स्थिति में परिवर्तन आया है? यदि परिवर्तन आया है तो आपके संबन्धों पर क्या प्रभाव पड़ा?

- मसीह के सामर्थ के बारे में आपने अन्तिम बार कब घमण्ड किया था? प्रभु को उसकी अद्‌भुत खूबियों के लिए धन्यवाद दें।

प्रार्थना निवेदन:

- परमेश्वर के सामने अपनी ईर्ष्या का अंगीकार करें। उससे स्पष्ट कहें कि आपको कैसा लगता है और क्यों लगता है। इस पाप पर विजय पाने के लिए याचना करें। अगली बार ईर्ष्या के आने पर उसका त्याग करके उस व्यक्ति विशेष की आशिषों के लिए आनन्द मनाएं।
- प्रार्थना करें कि प्रभु आपके मानवीय संबन्धों में आपको अपनी आंखें अपने ऊपर न लगाने में सहायता करे।
- प्रभु को आपके लिए उसके अनन्त प्रेम का धन्यवाद दें।

25

प्रेम घमण्ड से फूलता नहीं, और न ही अनरीति चलता, न ही अपनी भलाई चाहता है

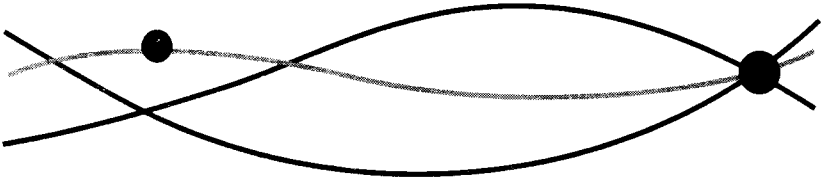

पढ़िए 1 कुरिन्थियों 13:4-5

प्रेम घमण्ड से फूलता नहीं

नीतिवचन 16:18 में लिखा है कि घमण्ड विनाश लाता है। किसी से संबन्ध बिगाड़ने का सबसे अच्छा तरीका है कि आप घमण्ड से भरकर उग्र हो जाएं। घमण्ड बाइबल में दर्शाए गए प्रेम का सबसे बड़ा बैरी है।

पौलुस कुरिन्थ के विश्वासियों से कहता है कि प्रेम घमण्ड से फूलता नहीं। उसने घमण्ड का जो यूनानी शब्द काम में लिया, वह है, "फुसिऊ" अर्थात् हवा भर जाना या दूसरा अर्थ है, अपने आप को दूसरे से ऊंचा उठाना। प्रेम और घमण्ड में क्या संबन्ध है?

1 कुरिन्थियों 4:6 में पौलुस पहले ही उन्हें चेतावनी दे चुका है कि कलीसिया में एक को दूसरे के विरुद्ध घमण्ड न करें। उसने कहा था, "हे भाइयों, मैंने इन बातों में तुम्हारे लिए अपनी और अपुल्लोस की चर्चा उदाहरण के तौर पर की है ताकि तुम हमारे द्वारा यह सीखो कि इस कहावत का अर्थ

क्या है? 'लिखी हुई बातों से आगे न बढ़ना।' तब तुम एक के पक्ष में और दूसरे के विरोध में गर्व न करोगे।"

घमण्ड का यही संकट है। वह अपने आप को दूसरों से ऊपर उठाना चाहता है। घमण्ड संबन्धों में प्रतिस्पर्धा लाता है। जब लोग घमण्ड से भर जाते हैं तब वे आशा करते हैं कि मनुष्य उनकी इच्छा के सामने झुक जाएं। घमण्डी व्यक्ति सेवक की भूमिका निभाना नहीं चाहता है। समस्या गंभीर तब हो जाती है जब दोनों पक्ष घमण्ड से फूल जाते हैं। ऐसी स्थिति में विवाद बढ़ता जाता है। पौलुस कहता था कि मसीही प्रेम दूसरे के ऊपर नहीं उठना चाहता। वह दीन होकर दूसरों की आवश्यकता को अपने से अधिक महत्त्व देता है।

घमण्ड सुधार स्वीकार नहीं करता है। क्या आपकी ऐसे लोगों भेंट हुई है जो अपनी भूल को स्वीकार नहीं करते? यह एक बहुत ही गंभीर समस्या है। क्या आपने कभी किसी से अपनी भूल की क्षमा मांगी है? प्रेम सुधार स्वीकार कर लेता है। वह अपनी भूल-चूक को स्वीकार करने के विरुद्ध घमण्ड नहीं करता। वह दीन होकर डांट को सुनता है और परिवर्तन के लिए तैयार हो जाता है।

घमण्ड किसी से सहायता भी स्वीकार नहीं करता है। क्या आपने किसी को अच्छी राय दी और उसने नहीं मानी? हम हमेशा यही दिखाना चाहते हैं कि हम जितने हैं नहीं, उतने अच्छे हैं क्योंकि हमें यह भय होता है कि मनुष्य हमें छोटा समझेगा। किसी के सामने अपनी आवश्यकताएं, परेशानियां और त्रुटियां प्रकट करना बहुत कठिन काम है। कभी कभी हम अपनी दुर्बलताएं अपने आप से ही छिपाते हैं। परमेश्वर के प्रेम के कारण ही मनुष्य अपनी घोर परेशानियों को प्रकट करता है और अपने आप को खोलता है।

प्रेम घमण्ड नहीं करता। वह दूसरों के साथ स्पर्धा नहीं करता। वह सेवा करने के लिए आगे बढ़ता है। वह सुधार से नहीं डरता। वह झिड़की सुनकर परिवर्तन लाता है। वह अपनी आवश्यकता और दुर्बलताएं स्वीकार करता है। वह सेवकाई स्वीकार करता है। केवल मसीह के प्रेम में ही हम अपने आप में रह सकते हैं और दूसरों को ये आशिषें दे पाते हैं।

प्रेम अनरीति नहीं चलता

क्या आपने सुना है कि मिठास में कीड़े पड़ते हैं? हम संबन्धों को जितना अधिक अंतरंग बनाएंगे उतना ही अधिक हम उनके साथ बुरा व्यवहार करेंगे। पिछले दो अध्यायों में हम देख चुके हैं कि बाइबल में दर्शाए गए प्रेम के

संबन्ध में सुरक्षा होती है। उसमें झूठा दिखावा नहीं होता है। यह जानकर कि मैं कुछ भी करूं मुझे प्रेम ही किया जाएगा तो मैं वह काम करने की और वह बात कहने की स्वतन्त्रता पाता हूं जो मुझे करना और कहना उचित नहीं है। हम अपरिचितों के लिए आवश्यकता से अधिक सेवकाई दिखा देते हैं परन्तु जिनसे हम प्रेम करते हैं उन्हें एक गिलास पानी नहीं पिलाते। हम अपने परिचितों की चाटुकारी और सराहना करते हैं परन्तु अपने प्रेमियों को नीचा दिखाते हैं। यदि हम ऐसा करते हैं तो निश्चय ही मसीह का प्रेम हम में नहीं है।

पौलुस ने कुरिन्थ के विश्वासियों से कहा कि प्रेम अनरीति नहीं चलता। यहां "अनरीति" से पौलुस का अर्थ था, अनुग्रह और सभ्यता की कमी या शिष्टाचार से रहित, लठमार, चित्त को न हरनेवाला या दबाव डालने वाला।

जब हम अपने अतिथियों को अनुग्रह दिखाते हैं, शिष्टाचार दिखाते हैं, सभ्यता दिखाते हैं तब हम क्या प्रदर्शित करते हैं? क्या हम यह नहीं दिखाते कि वे हमारे लिए सर्वोच्च आदर के पात्र हैं? अनरीति का अर्थ तो यह हुआ कि हम कहें कि कोई हमारे लिए अनुग्रह और शिष्टाचार दिखाने के योग्य नहीं है। अब यदि हम अपरिचितों के साथ ऐसा कुलीन व्यवहार करते हैं तो कुटुम्ब या कलीसिया में हमारे घनिष्ठ जनों के साथ हमें कैसा व्यवहार करना है? प्रेम किसी के साथ ऐसा व्यवहार करता है कि उनके व्यक्तिगत सम्मान को उजागर करे।

हम कई बार धन्यवाद देना भूल जाते हैं। कई बार हम अपने निकट संबन्धियों के साथ अनुग्रह से रहित और असभ्यता का व्यवहार करते हैं। कई बार हम अपना पूरा मूड जो निराशा और मनुष्यों के व्यवहार के कारण खराब होता है उसके कारण किसी के साथ ऐसा व्यवहार करते हैं जैसे कि वह कूड़े का ढेर हो? यह सब अनरीति का व्यवहार है। यह प्रेम नहीं है। प्रेम किसी का महत्व इतना अधिक मानता है कि न तो बुरे शब्दों का प्रयोग करता है और न ही बुरा व्यवहार करता है।

किसी पर दबाव डालना भी प्रेम के विरुद्ध है। कोई थका-मांदा हो तौभी हम उस पर अपनी आवश्यकताओं को डाल देते हैं क्योंकि हम अपनी आवश्यकताओं को अधिक महत्त्व देते हैं। यह मसीह का प्रेम नहीं है। मसीह का प्रेम तो अपनी हानि सहकर भी किसी को तरो-ताज़ा करता है। वह अनुग्रह और कृपालुता को बांटना चाहता है।

शिष्टाचार को हम समय के साथ-साथ भूलते जाते हैं। आरंभ में तो हम बड़ा शिष्टाचार दिखाते हैं परन्तु कुछ समय बाद हम सब कुछ भूल जाते हैं। यह अनरीति है। यह प्रत्येक संबन्ध का सदैव का एक व्यवहार है।

पौलुस कहता है कि मसीही प्रेम अनरीति नहीं चलता। वह शब्दों और कामों द्वारा दिखाता है कि वह दूसरों के मूल्य को महत्त्व देता है। प्रेम का एक नाप है- शिष्टाचार। यदि हम अपने प्रेम का प्रदर्शन करना चाहते हैं तो हमारे शब्द और काम मसीह के अनुग्रह और शिष्टाचार से पूर्ण होने चाहिएं।

प्रेम अपनी भलाई नहीं चाहता है।

लैव्यव्यवस्था 19:18 में परमेश्वर की आज्ञा लिखी है "अपने पड़ोसी से अपने समान प्रेम रख।" यदि हमारे विचार में अपने आप से प्रेम रखना स्वाभाविक और अच्छा है तो पौलुस के शब्द देखिए जो उसने इफिसियों की कलीसिया को लिखे, "कोई भी व्यक्ति अपने शरीर से घृणा नहीं करता बल्कि वह उसका पालन पोषण करता है, जैसा मसीह अपनी कलीसिया के साथ करता है।" (इफि. 5:29) अपनी चिन्ता करना, अपना आनन्द खोजना, अपनी देख-रेख करना आदि स्वाभाविक है।

अपनी आशिषों का आनन्द लेना हम जानते हैं। यह एक स्वाभाविक प्रक्रिया है। परन्तु पौलुस पद 5 में कुरिन्थ के विश्वासियों से कहता है कि प्रेम अपनी भलाई नहीं चाहता। यह प्रेम स्वाभाविक प्रेम से बड़ा है। यह प्रेम दूसरों के लिए अपनी जान दे देता है। यह प्रेम यीशु में देखने को मिलता है। वह अपने से अधिक दूसरों की चिन्ता में रहता था।

अध्याय 10:24 में पौलुस ने कहा था कि किसी को अपना नहीं बल्कि दूसरों का भला देखना चाहिए। पौलुस के कहने का अर्थ यह नहीं था कि हम अपनी चिन्ता नहीं करें परन्तु यह कि जितनी चिन्ता हम अपनी करते हैं उससे अधिक हमें दूसरों की चिन्ता करना चाहिए। अपने दैनिक निर्णयों पर ध्यान दें कि आप अपनी आवश्यकताओं के कितने निर्णय लेते हैं। यदि आप किसी से वास्तव में प्रेम रखते हैं तो देखेंगे कि आपके निर्णय आपकी आवश्यकताओं की अपेक्षा दूसरों की आवश्यकता के निमित्त होते हैं।

पौलुस ने फिलिप्पी की कलीसिया को लिखा कि स्वार्थपूर्ण अभिलाषा या व्यर्थ के अभिमान में कुछ न करें, परन्तु दीनता में दूसरों को अपने से उत्तम समझें। (फिलि. 2:3-5) हमारा व्यवहार ऐसा हो, जैसा यीशु का था।

अपनी चिन्ता तो सब ही करते हैं परन्तु हमें दूसरों की चिन्ता भी कम नहीं करनी है।

यीशु अपनी महानता को भली-भांति जानता था परन्तु वह यह भी जानता था कि मनुष्य की किस्मत उसके काम पर लटकी हुई है। अत: उसने सांसारिक सुख-सुविधा को त्याग दिया कि परमेश्वर के राज्य का उद्देश्य पूरा हो। वह अपने स्वर्गीय पिता के उद्देश्यों को ही अपना लक्ष्य मानता था। प्रभु यीशु के प्रेम को दर्शाने के लिए हमें दूसरों के लाभ के लिए आत्मत्याग करना आवश्यक है।

देखिए पौलुस रोम के विश्वासियों को क्या लिखता है:

"मैं जानता हूं और प्रभु यीशु से मुझे निश्चय हुआ है, कि कोई वस्तु अपने आप से अशुद्ध नहीं, परन्तु जो उसको अशुद्ध समझता है, उसके लिये अशुद्ध है। यदि तेरा भाई तेरे भोजन के कारण उदास होता है, तो फिर तू प्रेम की रीति से नहीं चलता; जिस के लिये मसीह मरा उस को तू अपने भोजन के द्वारा नाश न कर।" (रोमि. 14:14-15)

प्रेम अपनी अधिकृत इच्छाओं और रुचियों को दूसरों के हित में बलि चढ़ा देता है। वह अपने अधिकारों का दावा नहीं करता है। यदि प्रभु यीशु उनके लिए मरा जो हमारे आस-पास हैं तो हम जीवन की रुचियों को क्यों न उनके हित में बलिदान कर दें?

ध्यान देने योग्य बातें:

- सोचिए कि अन्तिम बार आप किस से असहमत हुए हैं। इस असहमति में घमण्ड की क्या भूमिका थी? यदि आप घमण्ड को पी जाते तो क्या होता?
- समय लेकर आपके लिए किसी के द्वारा की गई सेवाओं को लिख लीजिए। इस सप्ताह समय निकालकर उस व्यक्ति को विशेष धन्यवाद दें।
- अधिकांश समय हम अपने मित्रों और परिवार जनों के लिए अपना प्रेम उनके प्रति अपना व्यवहार दिखाकर प्रकट करते हैं। आप हाल ही में उनके साथ किन शब्दों का प्रयोग करते रहे हैं? क्या आप अपने आस पास के जनों को अधिक शिष्टाचार दिखाते हैं?

- सोचिए कि आप किस प्रकार अपना समय और पैसा खर्च करते हैं या अपने निर्णय लेते हैं? इसमें कितना भाग आपकी अपनी इच्छाओं और आवश्यकताओं पर केन्द्रित होता हैं?

प्रार्थना निवेदन:

- प्रभु से प्रार्थना करें कि वह आपको सुधार स्वीकार करने में सहायता करे। अपने जीवन में आवश्यक परिवर्तनों के लिए समर्पण करें।
- प्रभु से सहायता मांगें कि वह आपके शब्दों और कामों द्वारा प्रेम प्रदर्शन में सहायता करे।
- परमेश्वर से याचना करें कि वह आपको व्यक्तिगत आवश्यकताओं और सेवकाई की आवश्यकताओं में सन्तुलन बनाने में सहायता करे।

26

झुंझलाना और बुरा मानना

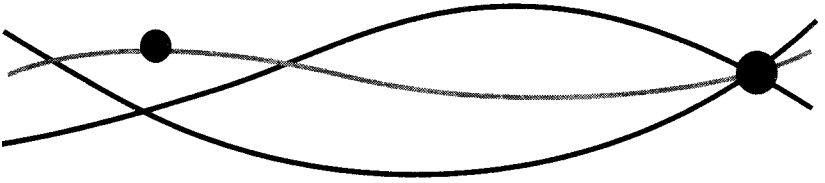

पढ़िए 1 कुरिन्थियों 13:5

वह झुंझलाता नहीं

कुछ वर्ष पूर्व मेरी भेंट एक ऐसे व्यक्ति से हुई जिसने मुझसे कहा कि उसका विवाहित जीवन बहुत ही अच्छा था। उन्हें पन्द्रह वर्ष हो गए थे और उसकी पत्नी और उसके बीच कभी किसी बात पर विवाद नहीं हुआ। मैं सोचने लगा कि वह इन वर्षों में कहां था क्योंकि मैंने तो जितने भी विवाहित जीवन देखे सब में ही विवाद होता था।

हम बहुत सी बातों पर क्रोधित हो जाते हैं परन्तु पौलुस ने कुरिन्थ के विश्वासियों से कहा कि प्रेम आसानी से क्रोध नहीं करता। पौलुस ने जो शब्द झुंझलाने के लिए काम में लिया वह यूनानी शब्द था और दो शब्दों की सन्धि से बना था। पहला शब्द था ''पारा'' अर्थात् ''पास में'' और दूसरा शब्द था, ''ऑक्सस'' अर्थात ''शीघ्र'' जिसका अर्थ होता है शीघ्र ही निकट आ जाना। जब कोई आपको छोड़ दे तो आप तुरन्त ही उसके ऊपर अपनी अप्रसन्नता प्रकट कर देते हैं, उससे दूर नहीं जाते।

पौलुस यह नहीं कहता कि प्रेम कुपित नहीं होता परन्तु यह कि प्रेम क्रोध करने में शीघ्रता नहीं करता है। बाइबल में हम देखते हैं क्रोध किया गया है परन्तु वह क्रोध नैतिकता का था। प्रेरितों के काम 17:16 में जब पौलुस ने देखा कि एथेन्स में हर स्थान पर मूर्तियां हैं तो वह यूनानी भाषा में वही शब्द लिखा है, ''पेराक्सुनो'' कुपित हुआ।

यीशु ने भी क्रोध में आकर पैसों का लेन-देन करने वालों के तख्ते उलट दिए थे। (लूका 19:45) इन दोनों ही स्थानों में धार्मिकता को कुचला जा रहा था। परमेश्वर और उसके वचन का अपमान हो तो क्रोध करना अनुचित नहीं।

यहां ध्यान देनेवाली बात यह है कि पौलुस ने कुरिन्थ के विश्वासियों से कहा था कि प्रेम अपना स्वार्थ नहीं देखता। अर्थात् वह क्रोध जो अपनी नहीं परमेश्वर की महिमा की कामना करता है। पतरस यीशु के बारे में यही कहता है, ''वह गाली सुनकर गाली नहीं देता था, और दुख उठाकर किसी को धमकी नहीं देता था, पर उसने अपने आपको सच्चे न्यायी के हाथ में सौंप दिया था।'' (1 पतरस 2:23) और हमारे लिए उसने कहा, ''तुम इसी के लिए बुलाए भी गए हो, क्योंकि मसीह भी तुम्हारे लिए दुख उठाकर तुम्हें एक आदर्श दे गया है ताकि तुम भी उसके चिन्ह पर चलो।'' (1 पतरस 2:21)

> इसी विषय में यीशु की शिक्षा सुनिए: ''परन्तु मैं तुमसे कहता हूं कि बुरे मनुष्य का सामना न करना। यदि कोई बुरा मनुष्य तेरे दाहिने गाल पर थप्पड़ मारे, उसकी ओर दूसरा गाल भी फेर दे। यदि कोई बुरा मनुष्य तुझ पर नालिश करके तेरा कुरता लेना चाहे, तो उसे दोहर भी ले लेने दे। और जो कोई तुझे कोस भर बेगार में ले जाए तो उसके साथ दो कोस चला जा। जो कोई तुझ से मांगे, उसे दे; और जो तुझ से उधार लेना चाहे, उस से मुंह न मोड़। तुम सुन चुके हो, कि कहा गया था; कि अपने पड़ोसी से प्रेम रखना, और अपने बैरी से बैर। परन्तु मैं तुम से यह कहता हूं कि अपने बैरियों से प्रेम रखो और अपने सतानेवालों के लिये प्रार्थना करो।'' (मत्ती 5:39-44)

प्रेम अपमानित होने पर प्रहार नहीं करता है। प्रेम वार सहन करता है और आवश्यकता पड़ने पर सुविधा का त्याग भी कर देता है। मसीह का प्रेम एक मील चलने के स्थान पर दो मील चला जाता है। वह उनसे भी प्रेम रखता है जो जीवन को दुखी और संकटमय बनाते हैं। मसीह का प्रेम क्योंकि स्वार्थी नहीं है इसलिए वह परेशान किए जाने पर कुपित नहीं होता। इसका सबसे बड़ा उदाहरण यीशु है जिसने हमारे लिए जो कभी उसके बैरी थे, अपना सब कुछ त्याग दिया।

प्रेम बुरा नहीं मानता

किसी भी संबन्ध में मन-मुटाव होते हैं। बहुत ही कम संबन्ध ऐसे होते हैं जहां क्षमा याचना की आवश्यकता नहीं होती है। जब हम एक दूसरे को आहत करते हैं तब उसे भुलाया नहीं जाता और हम एक दूसरे को उसकी याद बड़ी चतुराई से दिलाते हैं। हम या तो उस व्यक्ति का त्याग करते हैं, उसके प्रति मन में कड़वाहट रखते हैं, या उस पर आक्रोश प्रकट करते हैं, या यदि कोई हम पर दोष लगाए तो हम उसकी विफलताओं को उसे गिनाते हैं।

प्रभु यीशु हमारी अतीत की विफलताओं को नहीं गिनता क्योंकि उसने हमें क्षमा कर दिया है। धर्मशास्त्र की कुछ महान प्रतिज्ञाओं को देखिए:

- मैं उनकी दुष्टता को क्षमा कर दूंगा और उनके पापों को कभी स्मरण नहीं करूंगा। (यिर्म. 31:34)
- पूरब से पश्चिम जितनी दूर है उतनी ही दूर उसने हमारे अपराध हमसे कर दिए। (भ.सं. 103:12)
- तू हम पर तरस खाएगा। तू हमारे पापों को पांव तले रौंद देगा तथा हमारे अपराधों को समुद्र की गहराई में डाल देगा। (मीका 7:19)

यही हमें करना है। किसी को क्षमा करने का अर्थ है उसकी हमारे प्रति बुराई को समुद्र में डाल देना। (मीका 7:19) अर्थात् हम उनको दोषी न ठहराएं और ऐसा व्यवहार करें जैसे कि उन्होंने हमारे साथ कोई बुरा नहीं किया।

पौलुस ने यूनानी शब्द, ''लोगीज़ोमाए'' का प्रयोग किया था जिसका अर्थ है लेखा लेना। कहा जाता है कि प्रेम अंधा होता है परन्तु वह अनाड़ी नहीं होता है। वह कमियों को समझता है। वह जानता है कि मनुष्य सिद्ध नहीं है। वह कटाक्षों और परित्याग को सहन कर चुका होता है। वह क्रोध और मानसिक अवस्थाओं को सहन कर चुका है। प्रेम प्रत्येक आघात को क्षमा के मरहम से ढंक देता है। वह उन्हें ऐसा गहरा दबा देता है कि वे फिर न उठें। प्रेम किसी के दुर्व्यवहार के प्रति बुराई के बदले भलाई सोचता है।

परमेश्वर का प्रेम यथासंभव प्रयास करके मेल करता है जिससे कि बैरी को स्थान न मिले। पौलुस ने इफिसियों की कलीसिया को लिखा था कि वे क्रोध में आकर पाप न करें। क्रोध की अवस्था में सूर्यास्त न होने दें। शैतान को स्थान न दें। (इफि. 4:26-27) शैतान के लिए क्षमाविहीन आत्मा उपजाऊ भूमि होती है क्योंकि इस स्थिति में हमारा परीक्षा में गिरना बहुत आसान हो जाता है। अत: कड़वाहट की जड़ों का तुरन्त निवारण करना चाहिए। इब्रानियों 12:15 में लिखा है "ध्यान से देखते रहो, ऐसा न हो कि

कोई परमेश्वर के अनुग्रह से वंचित रह जाएं, या कोई कड़वी जड़ फूटकर कष्ट दे, और उसके द्वारा बहुत से लोग अशुद्ध हो जाएं।"

अक्षम्यता की आत्मा कलीसिया में विभाजन भी उत्पन्न करती है। अत: कलीसिया में मेल-मिलाप और संसार में सुसमाचार की प्रगति के निमित्त परमेश्वर आपको अक्षम्यता की आत्मा से आज मुक्ति दिलाए। परमेश्वर का वह प्रेम जो उसने हमारे हृदयों में बहाया, बुराइयों का लेखा नहीं रखेगा।

प्रेम दुखी और आहत मन के लिए अभ्यंजन है। प्रेम दिल के दुखों को समुद्र में डाल देता है। प्रेम किसी के विरुद्ध बुराई की अपेक्षा सर्वोत्तम भलाई सोचता है।

ध्यान देने योग्य बातें:

- आप अन्तिम बार किससे कुपित हुए थे? उस क्रोध में कितना स्वार्थ था? आपके क्रोध और कड़वाहट का वास्तविक कारण क्या था?
- आपकी कौन सी सुविधा या अधिकारों का खतरा आपको कुपित करता है? इस अध्ययन में आपने इन विषयों के बारे में क्या सीखा? क्या आप इन विषयों को प्रभु को देते हैं कि सुसमाचार आगे बढ़े?
- आपकी क्षमा करने या क्षमा न करने की क्षमता के संबन्ध में दूसरों के बारे में आपके क्या विचार होते हैं?
- क्या आपको किसी ने कभी आहत किया है? आज उस व्यक्ति के बारे में आपके क्या विचार हैं? क्या आपके मन में उसके लिए बुराई है? क्या आप उसे इसी समय क्षमा करने को तैयार हैं?

प्रार्थना निवेदन:

- क्या आप आसानी से कुपित हो जाते हैं? परमेश्वर से याचना करें कि वह आपके क्रोध को अपने वश में कर ले।
- आपकी अद्‌भुत क्षमा के लिए प्रभु को धन्यवाद दें।
- प्रभु से अनुग्रह मांगें कि आपके साथ की गई बुराइयों को आप क्षमा करके भूल जाएं। उससे याचना करें कि वह अपने अगाध प्रेम द्वारा आपके अतीत की आहतों को प्रतिस्थापित कर दे।

27

प्रेम कुकर्म से नहीं परन्तु सच्चाई से आनन्दित होता है

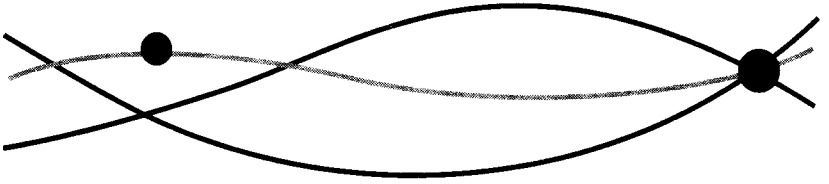

पढ़िए कुरिन्थियों 13:6

पौलुस कुरिन्थियों से प्रेम के विषय चर्चा करते हुए कह रहा था कि प्रेम कुकर्म से आनन्दित नहीं होता। (पद 6) यूनानी में कुकर्म का पर्याय शब्द है, ''अदीकिया'' जिसका संधि-विच्छेद है ''अ'' अर्थात् ''नहीं'' और ''दिके'' अर्थात् ''न्याय'' या उचित। अत: इस शब्द का अर्थ हुआ अन्याय या अनुचित व्यवहार। इसका प्रेम से क्या संबन्ध है?

पौलुस के इस कथन के हम अनेक भावार्थ निकाल सकते हैं। पहला, यदि कोई कुकर्म में पकड़ा जाए तो प्रेम आनन्दित नहीं होता। यहां मेरे मस्तिष्क में मत्ती 18 की खोई हुई भेड़ की कहानी उभर आती है। परमेश्वर उस चरवाहे की नाई शान्त नहीं रह सकता। वह किसी भी पाप में फंसी भेड़ (मनुष्य) को बचाकर घर लाकर की दम लेता है कि वह सुरक्षित हो जाए।

एक मां जिसकी सन्तान नशे की आदत में फंस गई उसकी चिन्ता ऐसी ही होती है। यही एक पत्नी की चिन्ता है जिसका पति धन-दौलत के पीछे पागल है। यही उस मुक्तिदाता की चिन्ता है जो स्वर्ग का वैभव त्यागकर

मानव सेवक का देहधारण करता है और अपने जीवन की आहुति दे देता है जिससे कि मनुष्य पाप के दासत्व से मुक्त कराया जाए। प्रेम एक ओर खड़ा रहकर मनुष्य का विनाश शैतान के हाथों नहीं देख सकता। वह यथासंभव प्रयास करेगा कि मनुष्य को निर्दयी बैरी के मुख से निकाल ले।

दूसरा, यह कि जब किसी के साथ अन्याय होता है तो प्रेम को दुख होता है। चाहे कोई कितना भी कष्ट दे या खीज दिलाए प्रेम उसके साथ अन्याय नहीं देख सकता। पुराने नियम में देखने को मिलता है कि इस्राएली बार-बार परमेश्वर से मुंह मोड़ लेते थे। वे एक दूसरे के साथ पक्षपात और अनुचित व्यवहार करते थे। उन्होंने अपने ही भाई और बहिनों को दास बनाया था कि निजी लाभ उठाएं। इन सब अपराधों के उपरान्त भी परमेश्वर उनके साथ परदेशियों का अन्याय सहन नहीं कर पाता था। उसने अपने लोगों के विरुद्ध उनके अपराधों का लेखा लिया।

तीसरा, प्रेम किसी के प्रति बुराई और अन्याय का कारण होने में आनन्दित नहीं होता अर्थात् प्रेम, झुंझलाता नहीं, जैसा हमने पहले देखा है। प्रेम बदला नहीं लेता, न ही प्रेम किसी पर वार करता है। क्या आपने कभी खुश होकर कहा, ''मैंने उसे उसकी जगह दिखा दी?'' क्या आपने कभी कहा, ''मैंने तो उससे पहले ही कहा था?'' क्या आप किसी के अपमान पर खुद भी हंसे थे? क्या आपने अन्यों के साथ मिलकर अपने किसी मित्र पर कटाक्ष किया?

हम कभी कभी बड़े निर्दयी हो जाते हैं। कभी कभी हम उपहास से अपने किसी प्रेमी जन पर टिप्पणी कसते हैं। ऐसी टिप्पणियां दुख पहुंचाती हैं। पौलुस कहता है कि सच्चा प्रेम ऐसी बुराइयों से आनन्दित नहीं होता। प्रेम केवल उन्हीं बातों का पीछा करता है जो किसी का विकास करती हैं। प्रेम आहत नहीं करता। आलोचना नहीं करता।

पौलुस के कहने का अर्थ यह था कि यदि वे परस्पर प्रेम रखते हैं तो किसी के भी बुराई में पड़ जाने पर उन्हें दुख होगा। (देखिए 5:1-2) वे कुछ भी करके उस भाई या बहिन को अपनी सहभागिता में लौटा लाएंगे। वे किसी के साथ हो रहे दुर्व्यवहार पर आनन्दित नहीं होंगे। उनका प्रेम प्रतिशोध पर या किसी की कमियों पर आनन्दित नहीं होगा।

प्रेम सच्चाई से आनन्दित होता है

प्रेम सच्चाई और स्पष्टवादिता से फूलता-फलता प्रतीत होता है। जिस संबन्ध में सच्चाई होती है उस संबन्ध में सुरक्षा का अहसास होता है। झूठ

सन्देह और कड़वाहट को उत्पन्न करता है। बाइबल में दर्शाया गया प्रेम सत्य पर फलता है। दूसरी ओर झूठ वह उपजाऊ भूमि है जिसमें शैतान अपना काम कर सकता है।

प्रेम सच्चाई को उसी प्रकार खींच लेता है जिस प्रकार सूखी भूमि पानी को। सच्चाई प्रेम को आनन्द, ताज़गी और नया जीवन देती है। प्रेम सच्चाई पर भूखे की तरह पोषित होता है। वह सच्चाई के लिए वैसे ही तरसता है जैसे फेफड़े हवा के लिए। यूनानी में सच्चाई का शब्द है, ''अलेथेइआ'' जिसका सन्धि-विच्छेद है ''अ'' अर्थात् ''नहीं'' और लानथानो'' अर्थात् ''झूठ बोलना'' या ''छिपाना।'' इस प्रकार इसका अर्थ है, ''आडम्बर से मुक्ति''।

पौलुस ने रोम की कलीसिया को लिखा कि प्रेम निष्कपट हो। (रोमि. 12:9) यदि हम निष्कपट नहीं हैं तो हम झूठ में जीते हैं। कपट का अर्थ है हम जो नहीं है वह दिखाते हैं।

परमेश्वर का प्रेम ऊपरी शृंगार नहीं है। वह हमारे व्यक्तित्व का एक भाग है। वह हमारे कहने और करने में व्याप्त होता है। हमारे संबन्ध इसी पर फलते हैं। हमारे काम वैसे होते हैं जैसे प्रेरित यूहन्ना ने अपने पत्र में लिखे, ''प्रिय बच्चों, हम शब्दों से और जीभ से प्रेम न करें परन्तु कामों और सत्य के द्वारा।'' (1 यूहन्ना 3:18)

सच्चा प्रेम शब्दों के प्रकटीकरण से परे कर्मों से दर्शाया जाता है। दूसरे शब्दों में, एक दूसरे के प्रति हमारे व्यवहार द्वारा हम में व्याप्त मसीह का प्रेम व्यवहारात्मक होता है जो शब्दों में नहीं, कामों में प्रकट होता है। अत: वह मतभेदों और कठिनाइयों में हमारे स्वभाव से प्रकट होता है।

सच्चाई का अर्थ है निष्कपट आचरण, जिसमें कल्पना करने का स्थान नहीं होता है। समय बुरा हो या अच्छा, मतभेद कैसा भी हो हमारा प्रेम बना रहेगा

कभी-कभी संबन्धों में कपट आ जाता है जैसे इसहाक और रिबका, कि हम एक दूसरे से धोखा करते हैं। रिबका ने याकूब को प्रेरित कर इसहाक से धोखा किया था। (उत्पत्ति 27)

''पापा को नहीं बताना'' या ''मेरे पति को पता चल गया तो वह मुझ को जान से मार देगा।'' यही तो कपट है जो बाइबल के प्रेम में नहीं होता है। वह हमें निष्कपट और पारदर्शी बनाता है। उसमें हम असुरक्षा और लज्जा का अहसास नहीं करते हैं।

ध्यान देने योग्य बातें:

- क्या आपको किसी का ठट्ठा करने का ध्यान है? इससे आपने उस समय मसीह के प्रेम का कैसा प्रदर्शन किया?
- क्या आप अपने मित्र या साथी से कुछ छिपाने के दोषी हैं? आपने इसकी आवश्यकता क्यों समझी? इससे आपके संबन्ध कैसे प्रकट होते हैं? प्रभु से इस विषय में सहायता मांगें।

प्रार्थना निवेदन:

- प्रभु से प्रार्थना करें कि वह आपको दिखाए कि आपने अपने संबन्धों में कहां किसी के साथ बुराई करने में आनन्द लिया है। उससे क्षमा मांगें और अपने जीवन में आवश्यक परिवर्तन लाने के लिए निर्णय लें।
- प्रभु से प्रार्थना करें कि मनुष्यों के साथ संबन्धों में निष्कपट बनने में वह आपकी सहायता करे।

28

प्रेम सब बातें सह लेता, विश्वास करता और आशा रखता है

पढ़िए 1 कुरिन्थियों 13:7

यरूशलेम को देखकर यीशु ने अपने लोगों के साथ अपने संबन्धों की उपमा मुर्गी और उसके चूज़ों से दी।

''हे यरूशलेम, हे यरूशलेम; तू जो भविष्यद्वक्ताओं को मार डालता है, और जो तेरे पास भेजे गए, उन्हें पत्थरवाह करता है, कितनी ही बार मैंने चाहा कि जैसे मुर्गी अपने बच्चों को अपने पंखों के नीचे इकट्ठे करती है, वैसे ही मैं भी तेरे बालकों को इकट्ठे कर लूं, परन्तु तुम ने न चाहा। देखो, तुम्हारा घर तुम्हारे लिये उजाड़ छोड़ा जाता है।'' (मत्ती 23:37-38)

मुर्गी का उदाहरण बहुत ही अच्छा है। मुर्गी कैसा भी कष्ट सहन करके अपने चूज़ों को अपने पंखों के नीचे सुरक्षित रखती है।

पौलुस ने कुरिन्थ के विश्वासियों से कहा कि प्रेम सब बातें सह लेता है। पौलुस ने यूनानी में जिस शब्द का यहां प्रयोग किया है उसका अर्थ है, ''छत'' या ''शरणस्थान।'' इसका निहितार्थ है दुख सहन करके किसी की रक्षा करना। मुर्गी कैसी भी कड़ाके की ठंड और वर्षा को अपने ऊपर ले लेती

है। उसके चूज़े उसके परों के नीचे सुरक्षित और गर्म रहते हैं। वह उनके लिए शरण (छत) बन जाती है।

प्रेम अपने प्रेमी की रक्षा के लिए कैसा भी कष्ट सह लेता है वरन् जान भी दे देता है। आप अपने प्रेमियों के लिए एक प्रकार की छत बन जाते हैं।

हमें अनेक बातों से सुरक्षा की आवश्यकता होती है। पहला, शारीरिक सुरक्षा। माता-पिता अपने बच्चों को शारीरिक हानि से बचाकर अपना प्रेम प्रदर्शन करते हैं।

दूसरा, आत्मिक सुरक्षा। प्रेरित यूहन्ना ने अपने पाठकों को चिताया कि वे किसी ऐसे प्रचारक को अपने घर में न आने दें जो सुसमाचार का प्रचार नहीं करता हो। (2 यूह. 10) वह चाहता था कि कलीसिया सांसारिक बुराइयों से बची रहे। इससे प्रकट होता है कि प्रेम करनेवाला अपने प्रेमियों को संसार की बुराइयों से बचाकर रखना चाहता है और उन्हें मसीह के रूप में ढालना चाहता है।

तीसरा, मानसिक हानि से सुरक्षा। अपने शब्दों से किसी के मन को नहीं दुखाना कि वे तनावग्रस्त हों तथा किसी के व्यवहार से तनाव में पड़ें बल्कि मनुष्यों को दिलासा दें तथा प्रोत्साहित करें। प्रेम किसी की रक्षा करने से न तो थकता है और न ही हारता है।

प्रेम विश्वास करता है

पोलुस की इस बात पर हमें अचम्भा होता है क्योंकि हमारे प्रेमियों में से सब विश्वासयोग्य सिद्ध नहीं हुए।

इसका अर्थ क्या यह है कि प्रेम अन्धा है या अनुभवी नहीं? या प्रेम करने के कारण हम किसी की त्रुटियों को अनदेखा करें और उनकी हर एक बात पर विश्वास करें? या यह कि यदि हम किसी की बातों पर विश्वास नहीं करते तो हम उनसे प्रेम नहीं रखते हैं? नहीं, पौलुस के कहने का अर्थ यह था कि प्रेम प्रत्येक संबन्ध में विश्वास के वातावरण की खोज करता है। यह विश्वास अनेक रीतियों से प्रकट होता है।

पहली, प्रेम निष्ठा के द्वारा विश्वास उत्पन्न करता है। विवाह में जहां प्रेम है वहां संसर्ग और मानसिक विश्वासघात नहीं होता है। प्रेम मनुष्य को विनाशकारी परीक्षा में गिरने से बचाता है। प्रेम अन्त तक विश्वासयोग्य रहता है। कठिनाइयों और कष्टों में भी प्रेम अपने प्रेमी को नहीं त्याग देता।

दूसरी, अपने प्रेमी में आत्मविश्वास बढ़ाना। प्रेम अपने प्रेमियों को प्रोत्साहित करता है कि वे परमेश्वर द्वारा दिए गए वरदानों को विकसित करें। इसका अर्थ यह हुआ कि प्रेम निराशा में प्रोत्साहन देता है जैसे माता पिता अपने बच्चे को दौड़ प्रतियोगिता में उत्साहित करते हैं उसी प्रकार प्रेम प्रोत्साहन द्वारा दूसरों को अपने वरदानों के विकास के साथ साथ परमेश्वर की इच्छा के अनुरूप सिद्ध होने का प्रोत्साहन भी देता है।

तीसरी, अपनी विश्वासयोग्यता और निष्कपट आचरण द्वारा विश्वास को बढ़ावा देना। प्रेम सच्चाई और मुक्ति में फलवन्त होता है। प्रेम नकारात्मक व्यवहार नहीं करता। न ही सन्देह करता, न ही नकचढ़ा होता है। प्रेम दूसरों के बारे में अच्छाई का ही विश्वास करता है। जहां धोखा और कपट होता है वहां प्रेम नहीं होता है। प्रेम की एक ही दुर्बलता है कि वह किसी पर बहुत अधिक विश्वास कर लेता है और त्रुटियां नहीं देखता है।

जहां बाइबल प्रदर्शित प्रेम होता है वहां विश्वास और भरोसा होता है। जब मैं कहता हूं कि मैं किसी से प्रेम करता हूं तो यह कह रहा हूं कि मैं उसके साथ निष्ठा निभाने की प्रतिज्ञा करता हूं और उन पर विश्वास करने तथा उन्हें सत्य से अवगत कराने की शपथ लेता हूं।

प्रेम सदा आशावान होता है

पौलुस ने यूनानी में जो शब्द काम में लिया वह है, ''एलपिज़ो'' अर्थात् ''प्रसन्नतापूर्वक अपेक्षा करना'' या ''आनन्द से प्रतीक्षा करना''। इस शब्द में एक निश्चित संभावना है। देखिए बाइबल में इसका उपयोग कहीं कहीं किस प्रकार किया गया है।

- *सजातियां उसके नाम में आशा बान्धेंगी। (मत्ती 12:21)*

- यदि हमें मसीह में आशा केवल इसी जीवन की है तो हम मनुष्यों में सबसे अधिक दयनीय दशा में हैं। (1 कुरिन्थियों 15:19)

- इसी कारण हम परिश्रम और संघर्ष करते हैं कि हमने अपनी आशा जीवित परमेश्वर में रखी है। जो सब मनुष्यों का उद्धारकर्ता है, विशेष करके उनका जो विश्वास रखते हैं। (1 तीमु. 4:10)

- अब विश्वास है आशा की हुई वस्तुओं का प्रमाण और अनदेखी वस्तुओं की निश्चितता। (इब्रा. 11:1)

❁ यदि तुम उन्हें देते हो जिनसे पाने की आशा रखते हो तो तुम्हें क्या लाभ? पापी भी पापियों को इसी आशा से देते हैं कि पूरा का पूरा पाएं। (लूका 6:34)

❁ आशा हमें निराश नहीं होने देती क्योंकि परमेश्वर ने पवित्र आत्मा के द्वारा हमारे मन में अपना प्रेम भर दिया है। (रोमि. 5:5)

यह वह आशा है जो हमें न तो कभी निराश करेगी और न ही कभी नीचा दिखाएगी। यदि हम देखना चाहें कि प्रेम में आशा क्या है तो हमें इसे यीशु में देखना है। उसमें हमारी आशा क्या है? उसे जानने से हमें आशा कैसे होती है? उसकी आशा हममें और हमारे लिए क्या है?

सबसे पहले तो हमें यह आशा है कि प्रभु यीशु अपनी प्रतिज्ञाओं को पूरा करने में विश्वासयोग्य है। परिस्थिति कैसी भी हो, चाहे गहन अन्धकार से पूर्ण हो हम निश्चिन्त होकर आगे बढ़ जाएं और विश्वास रखें कि हमारा प्रभु अपने हाथों में हमें उठा लेगा और अन्धकार के पार लगाएगा। हम समझेंगे नहीं परन्तु विश्वास के साथ आशा रखें कि वह हमारे लिए आगे आएगा।

परमेश्वर ने इस्राएल से कहा था कि वह उनका परमेश्वर होगा। उन्हें आशा और विश्वास था कि वह अपनी बात पर अटल रहेगा। वे अपने बैरियों का सामना परमेश्वर की इसी प्रतिज्ञा पर करते थे कि वह उन्हें न तो छोड़ेगा और न ही त्यागेगा। बैरी चाहे कैसा भी हो उन्हें परमेश्वर के रहते चिन्ता करने की आवश्यकता न थी।

दूसरी बात, प्रभु यीशु को बड़ी आशा थी कि वह हममें काम करेगा। वह हमारे लिए योजना बनाकर रखे हुए है और जानता है कि हमें कैसे काम में ले कि उसका महिमान्वन और सम्मान हो। उसने यह चुना कि वह हमें इस जगत के लिए अपनी योजना में उपयोग करे। उसे हमसे बड़ी आशा है। वह हमें हमसे अच्छी तरह जानता है। वह हमारे मन के पाप जानता है फिर भी वह हमें उपयोग करना चाहता है।

इन सब बातों का हमारे पारस्परिक प्रेम से क्या प्रयोजन? बाइबल आधारित प्रेम में बड़ा विश्वास और असीम आशा है। जब हम एक दूसरे के साथ परमेश्वर का प्रेम बांटते हैं तब हमारे संबन्धों में महान आशा और एकता उत्पन्न होती है। जब मैं पाता हूं कि मुझसे प्रेम किया जा रहा है तो मुझ को सहयोग पाने का विश्वास भी होता है। यदि मैं किसी से प्रेम रखता हूं तो उसे प्रोत्साहन भी देता हूं। मुझे अपने प्रेमपूर्ण संबन्धों में स्वतन्त्रता प्राप्त है। यद्यपि

हम मनुष्य होने के नाते खरे नहीं उतरते, परमेश्वर का प्रेम जो हमारे लिए और हम में है वह हमें कभी निराश नहीं करेगा। वही हमारी अन्तिम आशा है। हम भूल करने पर यदि पश्चात्ताप करें तो हम उसमें पूरी तरह स्थापित किए जाते हैं। इसी आशा और विश्वास के कारण हम इस अटल प्रेम को मनुष्यों में बांटकर सुसमाचार को आगे बढ़ाते हैं और परमेश्वर के राज्य का पृथ्वी पर विस्तार करते हैं।

ध्यान देने योग्य बातें:

- क्या आपने कभी स्वयं को किसी के लिए ऐसी बातें कहते पाया है जिनसे उन्हें दुख पहुंचा है? क्या आप कभी किसी के रक्षक होने के स्थान पर उनके घातक हुए हैं?
- इन बातों को परमेश्वर के और संबन्धित व्यक्तियों के सामने रखें। हम सबको किसी न किसी बात से रक्षा चाहिए। ये कौन सी बातें हैं? आप किसी को नकारात्मक प्रभाव से बचने में कैसे सहायता कर सकते हैं?
- क्या ऐसा कभी हुआ है कि आप किसी की सहायता हेतु पहुंचने से पीछे हटे? आप उसमें कैसे सुधार कर सकते हैं?

प्रार्थना निवेदन:

- सोचिए कि प्रभु ने किस किस रीति से आपकी रक्षा की। आपके जीवन में उसकी इन सुरक्षाओं के लिए उसे धन्यवाद दें।
- प्रभु से प्रार्थना करें कि वह आपको दूसरों के लिए विश्वास और भरोसे का व्यक्ति बनाए। उससे याचना करें कि वह आपके जीवन में उन क्षेत्रों को आप पर प्रकट करे जो इस संबन्ध में आपके लिए काम आएंगे।
- परमेश्वर के सामने और उन लोगों के सामने जिन्हें आपने जीवन में निराश किया है, अपनी कमज़ोरियों को रखें।
- प्रभु को उस आशा के लिए धन्यवाद दें जो हमें उसमें है। उसे धन्यवाद दें कि वह हम में अपना पवित्र आत्मा बसाता है कि वह हमें उन कामों के लिए विश्वासयोग्य बनाए जो उसने हमें वरदान स्वरूप दिए हैं।

29

प्रेम सदा धीरज धरता है और कभी टलता नहीं

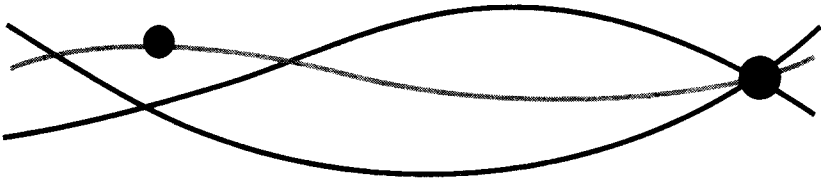

पढ़िए 1 कुरिन्थियों 13:7-13

हम कभी कभी सोचते हैं कि प्रेम सब कुछ ठीक कर देता है। जब हम बच्चे थे तब कहानियों के अन्त में पढ़ते थे कि फिर सब खुशी से रहने लगे। जब संबन्धों में कड़वाहट आ जाती है तब हम अचम्भा करते हैं। सत्य तो यह है कि इस पाप से श्रापित पृथ्वी पर कभी कभी संबन्ध बहुत कड़वे हो जाते हैं।

मेरा ध्यान याकूब की कहानी पर जाता है कि उसकी पत्नी लिआ आजीवन याकूब के प्रेम के लिए तरसती रही। (देखिए उत्पत्ति 29) आज भी अनेक जन जीवन में प्रेम के लिए तरसते रहते हैं।

पौलुस ने कुरिन्थ के विश्वासियों से कहा कि प्रेम धीरज धरता है। धीरज का मूल यूनानी शब्द है, ''हुपोमेनो'' जिसका अर्थ है, ''नीचे रहना'' अर्थात् सहन करना। भावार्थ यह है कि एक प्रेमी जन दुख में बना रहता है या दुख देने वाले से दूर नहीं भागता। यह एक आसान काम नहीं है। देखिए इब्रानियों का लेखक हमारे प्रभु यीशु के लिए क्या कहता है, ''आओ हम विश्वास के

कर्ता और सिद्ध करनेवाले यीशु की ओर ताकते रहें, जिसने अपने सम्मुख रखे हुए आनन्द के लिए क्रूस का दुख सहा। यीशु ने उसकी लज्जा की चिन्ता न की और सिंहासन पर परमेश्वर की दाहिनी ओर जा बैठा।'' (इब्रा. 12:2)

यीशु ने इस पृथ्वी पर शारीरिक, मानसिक और आत्मिक संघर्ष किया था। उसने यह कष्ट और अपमान क्यों सहन किया था? क्या यह हमारे लिए उसका प्रेम नहीं था? यीशु ने मत्ती 10:22 में कहा कि उसके कारण मनुष्य हम से घृणा करेंगे परन्तु जो अन्त तक धीरज धरेगा, उद्धार पाएगा। सुसमाचार के लिए कष्ट और अपमान सहन करना मसीह को प्रेम करने का मापदण्ड है।

राजा सुलैमान भी जानता था कि संबन्धों में अनेक समस्याएं आती हैं और सच्चा प्रेम कठिनाइयों में साथ नहीं छोड़ता। उसने कहा कि पानी की बाढ़ से भी प्रेम नहीं बुझ सकता, और न महानदों से डूब सकता है। यदि कोई अपने घर की सारी सम्पत्ति, प्रेम की सन्ति दे दे तो भी वह अत्यन्त तुच्छ ठहरेगी। (श्रेष्ठगीत 8:7)

ऐसा समय भी आता है जब प्रेम दर्द से पुकार उठता है। प्रेम से दुख होता है। हम बोझ से दबे सोचते हैं कि हम नाश न हो जाएं। मूसा ने ऐसे दर्द का अनुभव किया था। उसने एक बार परमेश्वर से कह ही दिया कि वह समस्त इस्राएलियों को अकेले लेकर नहीं चल पाएगा। उनका बोझ उसके लिए बहुत अधिक था। (गिनती 11:14) मूसा परमेश्वर से और अपने लोगों से प्रेम रखता था परन्तु उनका बोझ (उत्तरदायित्व) उसके लिए असहनीय हो रहा था।

जी हां, प्रेम गहरे दुख से पुकार उठता है। प्रेम की परख दुख और परेशानियों में ही होती है। एक किशोर युगल प्रेम को नहीं समझ सकता। जब विवाहित जीवन वर्षों आगे बढ़ जाता है तब जीवन का संघर्ष, बच्चों का विद्रोह और परस्पर मतभेद तथा अनेक अन्य परेशानियों से गुज़र जाने के बाद ही प्रेम की सच्ची समझ प्राप्त होती है। सच्चा प्रेम दुख और परेशानियों के अन्धकार में अपनी संपूर्ण आभा में चमकता है।

मैं एक ऐसे माता-पिता को जानता हूं जिनका एक विकलांग पुत्र था। वे अपने पुत्र की देख-रेख में अत्यधिक समर्पित थे जबकि वे सेवानिवृत्त हो चुके थे। पिता के मर जाने के बाद उसकी माता उसकी देख-रेख अकेले ही करती रही। उसने कभी शिकायत नहीं की। यह धीरजवन्त प्रेम है जो अनेक कष्ट उठाकर भी पीछे नहीं हटा।

हममें से ऐसा कौन है जो किसी से प्रेम करने में एक बार भी नहीं चूका हो? अनेक बार हम अपने घमण्ड और स्वार्थ के कारण प्रेम करने से चूक जाते हैं। यहां पौलुस के कहने का अर्थ क्या था कि प्रेम कभी टलता नहीं। 'टलता' के लिए जो यूनानी शब्द पौलुस ने काम में लिया वह था, ''एकपिपतो'' अर्थात् टूटकर दूर हो जाना या अपने मार्ग से अलग हो जाना। अत: पौलुस के कहने का अर्थ था कि प्रेम अपने मार्ग से कभी भी अलग नहीं होता।

इसका अर्थ क्या यह हुआ कि यदि मैं किसी को निराश कर दूं तो मैं यह सिद्ध करता हूं कि मैं उससे प्रेम नहीं रखता? नहीं, ऐसा नहीं है क्योंकि हम अपने दैनिक जीवन में कहीं न कहीं छोटी या बड़ी बातों में प्रेम से चूक जाते हैं परन्तु हम अपने मन में यह जानते हैं कि हम अपने प्रेमियों से तब भी प्रेम करते हैं। अत: यह कहना उचित होगा कि हम अपने प्रियजनों को निराश इसलिए कर देते हैं कि हम प्रेम का व्यवहार नहीं कर रहे, न कि इसलिए कि हम उनसे प्रेम नहीं रखते।

प्रेम की भावना और प्रेम का कामों द्वारा प्रदर्शन दोनों में अन्तर है। हम प्राय: प्रेरित पौलुस की हिदायत से चूक जाते हैं कि हमें शब्दों से नहीं परन्तु कार्यों और सच्चाई द्वारा प्रेम करना है। (1 यूह. 3:18)

यहां हमें एक सिद्धान्त समझ लेना है कि जब परमेश्वर का प्रेम कामों में प्रकट किया जाता है तब वह अपना उद्देश्य पूरा करके ही रहता है। परमेश्वरीय प्रेम किसी की भलाई करने से कभी नहीं चूकता। हमारे चूकने का कारण एकमात्र यही है कि हम परमेश्वर के सच्चे प्रेम को जो उसने हमारे मन में डाला है, कार्यरूप नहीं देते हैं।

पौलुस ने कुरिन्थ के विश्वासियों से कहा कि आत्मा के वरदान तो समाप्त हो जाएंगे परन्तु प्रेम कभी समाप्त नहीं होगा अर्थात् प्रेम आनेवाले संसार में भी रहेगा।

अब प्रश्न यह है कि मैं इस प्रेम को कैसे दर्शाऊं? यदि आप प्रभु यीशु को अपना उद्धारकर्त्ता मानते हैं तो आप इस प्रेम को दर्शा सकते हैं। यहां पौलुस एक बच्चे का उदाहरण देता है कि बच्चा बच्चों का सा व्यवहार करता है परन्तु जब वह वयस्क हो जाता है तब वह बड़े लोगों का सा व्यवहार करता है। (पद 11)

पौलुस ने कहा कि अभी तो हम जो कुछ भी जानते हैं वह पूरा नहीं है अर्थात् अभी हम बच्चों की नाई हैं। हम अपने पापी स्वभाव से संघर्ष कर रहे हैं। अभी हम प्रेम का एक भाग ही समझते हैं परन्तु वह समय (अनन्तकाल) आ रहा है जब हम प्रेम को पूरी तरह समझेंगे क्योंकि प्रेम जाता नहीं रहेगा।

स्वर्ग में हम प्रेम की परिपूर्णता को जानेंगे। वहां हम प्रेम के मार्ग में आने वाली बाधाओं से मुक्त हो जाएंगे। वहां हम अपने स्वार्थ से मुक्त हो जाएंगे। इसका अर्थ यह हुआ कि यदि इस जीवन में हमें निवेश करना है तो प्रेम का निवेश करें। प्रेम उन बातों में से एक है जिसे हम स्वर्ग में अपने साथ ले जाएंगे।

दूसरा, यह निश्चय जान लें कि यह परमेश्वर की इच्छा है कि हम प्रेम करना सीखें। प्रेम स्वर्ग की सुगन्ध है। प्रेम ही प्रभु यीशु के जीवन की प्रेरणा थी कि उसने हमें अपना जीवन और हमारे लिए अपनी जान दे दी। यह प्रभु की इच्छा है कि हम उसके प्रेम को जानें और उसे अपने आस-पास के मनुष्यों में बांटें।

क्या आप प्रेम के विषय इस अध्ययन को समझने में कठिनाई का सामना करते हैं? क्या आप सोचते हैं कि ऐसा प्रेम आपकी पहुंच से बाहर है? ऐसा प्रेम स्वाभाविक नहीं है। पौलुस की शिक्षा के अनुसार हम यह प्रेम तब ही कर सकते हैं जब यीशु हम में अन्तर्वास करे और हमारे माध्यम से प्रेम करे। क्या वह जिसकी यह इच्छा है कि हम इस प्रेम का अनुभव करें और संपूर्ण अनन्तकाल एक दूसरे से प्रेम रखें, आज हम पर यह प्रेम प्रकट नहीं करेगा। वह निश्चय ही करेगा।

ध्यान देने योग्य बातें:

- क्या आज आप पर संबन्धों का अत्यधिक बोझ है? क्या आप किसी को तब भी प्रेम करेंगे जब आप जान लेंगे कि आपको उनके संबन्ध से वह नहीं मिलेगा जो आप उनसे चाह रहे हैं? यह आपके प्रेम के बारे में क्या कहता है?
- अपने संबन्धों पर ध्यान दें और देखें कि आप किस रीति में अपने आस-पास के लोगों से प्यार करने से चूक रहे हैं?

- क्या आपने कभी अपने लिए परमेश्वर के प्रेम पर सन्देह किया है? इस अध्ययन से आपने अपने जीवन में परमेश्वर के प्रेम के अनुभव और समझ के बारे में परमेश्वर की इच्छा के विषय क्या सीखा? परमेश्वर के प्रेम की परिपूर्णता प्राप्त करने में आपके सामने क्या बाधाएं आती हैं?
- अपने संबन्धों की जांच करें। आप अपने आस-पास रहनेवालों से किस कारण प्रेम नहीं कर पा रहे हैं?
- क्या आपने कभी स्वयं को परमेश्वर के आपके प्रति प्रेम के विषय में प्रश्न करते हुए पाया है? इस मनन के द्वारा आपने अपने जीवन के लिए परमेश्वर की इच्छा और प्रेम के विषय में क्या जाना? क्या चीज़ आपकी परमेश्वर के प्रेम की परिपूर्णता का अनुभव करने से रोकती है?

प्रार्थना निवेदन:

- परमेश्वर से प्रार्थना करें कि वह आपको दूसरों से वही प्रेम करने में सहायता करे जो वह आपसे करता है।
- प्रभु को धन्यवाद दें कि वह आपको प्रेम करना सिखाना चाहता है।
- परमेश्वर से याचना करें कि वह आपके जीवन में कठिन परिस्थिति आने पर भी आपको प्रेम में अटल रहने की सामर्थ दे।

30

अन्य भाषा और भविष्यद्वाणी

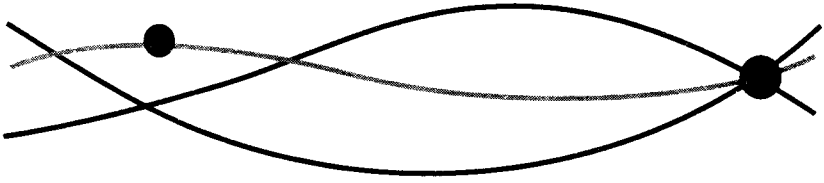

पढ़िए 1 कुरिन्थियों 14:1-25

कुरिन्थ के विश्वासियों को प्रेम की खोज करने की चुनौती देने के पश्चात् पौलुस अब उन्हें कहता है कि वे आत्मिक वरदानों की खोज करें। (पद 1) यह दूसरी बार है कि पौलुस इस विषय में उन्हें चुनौती दे रहा है। (देखिए 12:31) इसका अर्थ यह हुआ कि आत्मिक वरदान मसीह की देह के लिए आवश्यक हैं।

परमेश्वर अपने राज्य को आप और मेरे जैसे मनुष्यों के द्वारा फैलाना चाहता है। इसके लिए उसने हमें आत्मिक वरदान दिए हैं। हम अपनी प्राकृतिक प्रतिभाओं व क्षमताओं के साथ क्या यह कर पाएंगे? परमेश्वर के वरदानों के अभाव में हम निश्चय ही असफल रहेंगे। यही कारण है प्रेरित पौलुस ने कुरिन्थ के विश्वासियों को कहा कि वे आत्मिक वरदानों की खोज यत्न से करें।

यद्यपि आत्मा के सब वरदान महत्त्वपूर्ण हैं, (अध्याय 12) पौलुस ने अपना ध्यान इस अध्याय में भविष्यद्वाणी और अन्य भाषाओं के वरदानों पर केन्द्रित किया है। ऐसा प्रतीत होता है कि कुरिन्थ की कलीसिया में इन

वरदानों के उपयोग में समस्या थी। पौलुस इन दोनों वरदानों के उपयोग के लिए उन्हें प्रोत्साहित करता है परन्तु वह चाहता था कि वे जानें कि इनका प्रभावी प्रयोग कैसे किया जाए।

पौलुस भविष्यद्वाणी के वरदान की तुलना अन्य भाषा के वरदान से करता है। पद 2 में पौलुस कहता है कि अन्य भाषा बोलना परमेश्वर से बात करना है अर्थात् पवित्र आत्मा किसी व्यक्ति की जीभ को प्रार्थना करने के लिए ऐसी भाषा प्रदान करती है। अन्य भाषा बोलने वाला परमेश्वर के राज्य के लिए प्रार्थना करने हेतु पवित्र आत्मा का माध्यम बन जाता है।

यहां अन्य भाषा मनुष्यों के सुनने के लिए नहीं है इसलिए वे उस भाषा को समझ नहीं पाते हैं। (पद 2) यद्यपि अन्य भाषा बोलनेवाला अलौकिक रहस्यों का बखान करता है, वह अनुवाद बिना मनुष्य की समझ से परे होती है।

दूसरी ओर वे जो भविष्यद्वाणी करते हैं वे मनुष्य को साहस, प्रोत्साहन और सांत्वना देते हैं जिन्हें सुननेवाले समझ सकते हैं। (पद 3-4) अन्य भाषा में अनुवाद की आवश्यकता होती है परन्तु भविष्यद्वाणी स्पष्ट होती है और विकास प्रदान करती है। यदि अन्य भाषा समझ में न आए तो उसके बोलने का क्या उद्देश्य? पौलुस के अनुसार परमेश्वर द्वारा अन्य भाषा का वरदान देने के दो कारण हैं।

व्यक्तिगत विकास

वे जो अन्य भाषा बोलते हैं, अपना विकास करते हैं। (पद 4) अन्य भाषा का वरदान पानेवाले के पास बहुत आशीषें होती हैं। परमेश्वर का आत्मा किसी व्यक्ति की जीभ को उपयोग करके प्रसन्न होता है कि परमेश्वर के भेदों को व्यक्त करे या उनकी घोषणा करे। परमेश्वर ऐसे विश्वासियों को उन समयों में सामर्थ प्रदान करता है जब वे नहीं जानते कि प्रार्थना कैसे करें। यद्यपि ये विश्वासी नहीं जानते कि वे क्या कह रहे हैं, वे यह जानते हैं कि अपनी आत्मा में वे परमेश्वर के साथ संपर्क कर रहे हैं। जबकि पौलुस ने कहा कि भविष्यद्वाणी का वरदान अन्य भाषा के वरदान से उत्तम है, वह प्रत्येक विश्वासी के लिए अन्य भाषा बोलने का अभिलाषी था। (पद 5)

सार्वजनिक विकास

पौलुस के अनुसार कलीसिया में अन्य भाषाओं का एक और प्रयोजन है। यदि अन्य भाषा का अनुवाद हो तो वह संपूर्ण कलीसिया का विकास करती

है। (पद 5) यदि उनका अनुवाद न हो सके तो वे रहस्य ही बनी रहती हैं। अनुवाद के होने से अन्य भाषाओं का कलीसिया में अपना एक स्थान होता है। अन्य भाषाओं के बोलने और भविष्यद्वाणी करने में अन्तर दर्शाने के लिए पौलुस ने कुरिन्थ की कलीसिया को पद 6-12 में कुछ व्यावहारात्मक उदाहरण दिए हैं।

यदि किसी कलीसिया में जहां अन्य भाषाएं बोली जा रही हों वहां कोई बाहर से आ जाए तो उसे क्या लाभ होगा? उन्हें तो कुछ भी समझ में नहीं आएगा। परन्तु यदि किसी को भविष्यद्वाणी या बुद्धि का वचन या निर्देशन हेतु परमेश्वर से प्रकाशन प्राप्त हो तो आगन्तुक को सुनकर लाभ होगा और वह सामर्थ पाएगा तथा उसका व्यक्तिगत विकास होगा।

पौलुस ने पद 7-8 में और एक उदाहरण दिया है। यदि किसी संगीत वाद्ययंत्र के एक एक सुर अलग सुनाई न दें तो सुननेवाले को समझ में ही नहीं आएगा कि क्या बजाया जा रहा है। यदि तुरही फूंकी जाए और उसके सुर स्पष्ट न हों तो सेना को कैसे समझ में आएगा कि वह युद्ध की पुकार है।

इसी प्रकार कोई भाषा, सुनने वाले को सन्देश न पहुंचाए तो सुननेवाले को कोई लाभ नहीं। (पद 9-11) इस कारण पौलुस ने कुरिन्थ की कलीसिया से आग्रह किया कि उचित यही होगा कि वे भविष्यद्वाणी के वरदान पर ध्यान केन्द्रित करें जिससे कि कलीसिया का विकास हो।

अन्य भाषा बोलने के लिए भाषा बोलनेवाले को उसके अनुवाद की भी प्रार्थना करना चाहिए जिससे कि व्यक्तिगत लाभ के साथ कलीसिया का भी विकास हो। (पद 13)

पद 14 में पौलुस उन्हें समझाता है कि अन्य भाषा के बोलने से उनके मन फलवन्त नहीं होते हैं क्योंकि बोलनेवाले स्वयं ही उस भाषा को नहीं समझते हैं। पवित्र आत्मा उनकी जीभ को अपनी भाषा में उपयोग करता है। यह एक अद्भुत व्यक्तिगत अनुभव है परन्तु पौलुस कहता है कि वे अपने ध्यान को कलीसियाई आराधना में लगाएं।

पद 18 में पौलुस प्रभु का धन्यवाद करता है कि वह कुरिन्थ के विश्वासियों से अधिक अन्य भाषा बोलता था। इससे स्पष्ट है कि पौलुस को यह वरदान प्राप्त था। पौलुस ने यह भी स्पष्ट किया कि आराधना में पांच शब्द ही ऐसे बोले जाएं जो समझ में आएं। इसकी अपेक्षा की हज़ार शब्द अन्य भाषा में बोले जाएं जो किसी की समझ में न आएं क्योंकि अन्य भाषा

बोलने से व्यक्ति विशेष को तो लाभ होगा परन्तु शेष सब के लिए विकास कुछ भी न होगा। (पद 17) अत: जब हम कलीसियाई आराधना के लिए एकत्र हों तो हमारा ध्येय कलीसियाई विकास हो।

अन्य भाषा बोलने के वरदान के बारे में कुरिन्थ की कलीसिया बच्चों की सी मानसिकता रखती थी। वे इस वरदान से ऐसे अभिभूत थे कि इसका दुरुपयोग करने लगे थे। यही कारण था कि पौलुस ने कहा कि अन्य भाषा का वरदान महत्त्वपूर्ण नहीं था और न ही वह विश्वास की परिपक्वता का प्रतीक था। इससे क्या वे संसार को मसीह की शरण में ला रहे थे? यदि सुसमाचार को फैलाना है तो मसीह चाहता है कि हर एक वरदान प्रगति से संबन्धित हो।

पौलुस यशायाह 28 का संदर्भ देते हुए कहता है कि अन्य भाषाएं इस्राएल में अविश्वासियों का प्रतीक मानी जाती थीं जो दण्ड का संकेत था। अत: प्रचार में अन्य भाषाओं का कोई स्थान नहीं है। आराधना में स्पष्ट प्रचार का महत्त्व होता है। यदि कोई आगन्तुक उनके बीच हो और अन्य भाषा सुने तो वह सोचेगा कि वे अपना मानसिक सन्तुलन खो बैठे हैं। यह अविश्वासियों के लिए क्या गवाही का चिन्ह होगी? इसके उत्तर एक से अधिक हैं।

पहला, अन्य भाषा पवित्र आत्मा के सामर्थ को कार्य करता दिखाती है। यदि अविश्वासी के कुछ भी समझ में न आए तो वह यह तो समझ जाएगा कि कोई दिव्य शक्ति वहां है।

दूसरा, यह उन दिनों किसी पर पवित्र आत्मा के अवतरण का संकेत होती थी जैसे कि प्रेरितों के काम की पुस्तक में चेलों के साथ हुआ था कि वे अन्य भाषा बोलने लगे थे, परन्तु पौलुस ने इसे एक सिद्धान्त नहीं बनाया था। यह अविश्वासियों के लिए परमेश्वर की उपस्थिति और सामर्थ का प्रतीक होती है।

दूसरी ओर, यदि भविष्यद्वाणी हो रही हो तो परमेश्वर आगन्तुक से आमने-सामने बात कर सकता है। वह अविश्वासियों के पापों का उल्लेख कर सकता है और उनके मन के विचार प्रकट कर सकता है। इस प्रकार अविश्वासी भी प्रभु की महिमा करते हुए स्वीकार करेंगे कि परमेश्वर उनके मध्य है। (24-25)

भविष्यद्वाणी परमेश्वर की वाणी है जो पापों को उजागर करती है। परमेश्वर भविष्यद्वक्ताओं के माध्यम से मनुष्यों को पापों का बोध कराकर उन्हें परमेश्वर के पास आने की चुनौती देता है।

भविष्यद्वाणी मनुष्य के मन को खोल देती है। नातान ने दाऊद को उसके गुप्त पापों के लिए टोका था। (2 शमूएल 12:7-10) भविष्यद्वक्ताओं को परमेश्वर अपनी अन्तर्दृष्टि प्रदान करता है।

सारांश यह है कि अन्य भाषा बोलना और भविष्यद्वाणी करना दोनों ही कलीसिया में आत्मा के वरदान हैं परन्तु भविष्यद्वाणी अधिक महत्त्व रखती है। अन्य भाषाएं अनुवाद के बिना कलीसियाई विकास हेतु निरर्थक हैं। उसने कलीसिया को यही चुनौती दी कि वे उन्हीं वरदानों में श्रेष्ठता पाएं जो संपूर्ण कलीसिया के अधिकाधिक विकास में सहायक हों।

ध्यान देने योग्य बातें:

- अन्य भाषा और भविष्यद्वाणी में क्या अन्तर है?
- अन्य भाषा के वरदान के उद्देश्य क्या हैं?
- भविष्यद्वाणी की कलीसिया में क्या भूमिका है?
- क्या आपकी कलीसिया में आत्मिक वरदानों में सन्तुलन है?

प्रार्थना निवेदन:

- प्रभु को कलीसिया के वरदानों हेतु धन्यवाद दें।
- परमेश्वर के उन लोगों के लिए धन्यवाद दें जिन्होंने अपने वरदानों के उपयोग से आपको लाभ पहुंचाया है।
- परमेश्वर से याचना करें कि वह आपकी कलीसिया को विकास हेतु समस्त आवश्यक वरदान प्रदान करे।

31
उचित आराधना विधि

पढ़िए 1 कुरिन्थियों 14:26-40

अन्य भाषाओं के वरदान और भविष्यद्वाणी के वरदान में अन्तर स्पष्ट करने के बाद पौलुस ने अब कुरिन्थ की कलीसिया में आराधना के महत्त्व के बारे में चर्चा की। ऐसा प्रतीत होता है कि कुरिन्थ की कलीसिया में आराधना का महत्त्व समाप्त होता जा रहा था। वह व्यवस्था एवं अनुशासन की आवश्यकता थी। इस धर्मशास्त्र से हमें समझ में आएगा कि आरंभिक कलीसिया में आराधना कैसे होती थी।

पद 26 में पौलुस कुरिन्थ की कलीसिया को आराधना में पालन करने हेतु सामान्य सिद्धान्त समझाता है। उनका आराधना में एकत्र होना संपूर्ण कलीसिया के लिए शक्तिदायक होना था अर्थात् एक दूसरे को बल प्रदान करना। क्या आपकी आराधना संपूर्ण कलीसिया के लिए बल का कारण सिद्ध होती है? यदि नहीं, तो सुधार हेतु गंभीर विचार करें।

उस युग में कलीसिया के आराधना में एकत्र होने के समय विश्वासी आराधना में सहभागी होने के साथ-साथ संपूर्ण कलीसिया को सुदृढ़ बनाने के

लिए तैयार होकर आते थे। देखिए पद 26 में पौलुस कहता है कि हर एक के पास भजन, निर्देशक वचन, प्रकाशन, अन्य भाषा, या अनुवाद होता था। यहां ''हर एक'' शब्द महत्त्वपूर्ण है क्योंकि प्रत्येक की अपनी सक्रिय भूमिका थी।

कुछ वर्ष हुए मैं एक ऐसी आराधना में सहभागी हुआ जहां पास्टर ने अकेले ही गाना गाया, गिटार बजाया, प्रार्थना की, वचन का प्रचार किया और सामूहिक गायन का निर्देशन किया। वहां से निकलने के बाद मैंने सोचा कि मेरे पास तो पास्टर को देखने की अपेक्षा अपनी भावना व्यक्त करने के लिए समय ही नहीं था। पौलुस ने कहा कि कुरिन्थ की कलीसिया में हर एक को आराधना में सक्रिय भाग लेना था कि कुछ न कुछ योगदान अवश्य दें अर्थात् आत्मा के वरदानों का पूरा पूरा उपयोग किया जाए। क्या आपकी कलीसिया में ऐसा होता है?

कुरिन्थ की कलीसिया में वरदानों का प्रयोग ऐसा हुआ कि वहां अव्यवस्था हो जाती थी। अत: पौलुस ने अगुवों को कुछ निर्देश दिए। सबसे पहले उसने कहा कि अन्य भाषा बोलना दो या तीन तक ही सीमित रखा जाए। वह चाहता था कि इस शोर-शराबे की अपेक्षा कलीसिया में सब वरदानों का आयोग हो।

दूसरा, अन्य भाषा बोलनेवाले एक एक करके बोलें। यहां प्रत्यक्ष है कि वह अन्य भाषा का बोलना सार्वजनिक उपयोग में कह रहा था (पद 27) न कि व्यक्तिगत उपासना में। भाषाओं का अनुवाद भी आवश्यक था। अन्य भाषा बोलने में प्राय: समस्या यह आ रही थी कि सब एक साथ बोल रहे थे और वहां अव्यवस्था हो रही थी।

पौलुस ने भविष्यद्वाणी पर भी भविष्यद्वक्ताओं की सीमा निर्धारित की थी। (29-33) किसी भी आराधना में दो या तीन व्यक्तियों को ही भविष्यद्वाणी करनी थी।

पद 29 में पौलुस ने कहा कि जब एक भविष्यद्वक्ता भविष्यद्वाणी करे तो अन्य वरदानयुक्त भविष्यद्वक्ता उसकी भविष्यद्वाणी को जांचे क्योंकि भविष्यद्वाणी खतरनाक भी सिद्ध हो सकती थी।

तीसरा, भविष्यद्वक्ता भी एक एक करके भविष्यद्वाणी करें। यदि एक व्यक्ति के भविष्यद्वाणी करते समय किसी दूसरे के पास परमेश्वर का वचन आ जाए तो पहला व्यक्ति शांत हो जाए। इससे आराधना में कोलाहल नहीं होगा।

यहां ध्यान दीजिए कि भविष्यद्वाणी के वचन पहले से तैयार नहीं किए जाते थे। वे अकस्मात् ही प्राप्त होते थे और वे कलीसिया के प्रोत्साहन और निर्देश के लिए होते थे (पद 31) कि परमेश्वर कलीसिया को किस मार्ग में लेकर चलना चाहता था।

अब पौलुस ने कुरिन्थ की कलीसिया में महिलाओं के स्थान के बारे में निर्देश दिए जो उसने कहा कि केवल कुरिन्थ की कलीसिया के लिए नहीं अपितु विश्वासियों की हर एक कलीसिया के लिए थे। (पद 33)

उसने कहा कि आराधना में महिलाओं को बोलना नहीं चाहिए। उन्हें अधीनता की स्थिति में रहना चाहिए क्योंकि मूसा की व्यवस्था में ऐसा लिखा है। (पद 34)

पौलुस किसी एक कानून का संदर्भ नहीं दे रहा था। वह सामान्य रूप से स्त्री और पुरुषों के बारे में शिक्षा दे रहा था। उसने कहा कि स्त्री को पुरुष के लिए एक सहायक के रूप में सृजा गया था। (उत्पत्ति 2:18) पौलुस ने यही बात कुरिन्थ की कलीसिया से कही थी। (11:3) इफिसियों 5:23 में जब पौलुस ने कहा कि स्त्री का सिर पति है वह उत्पत्ति के पद के संदर्भ में कह रहा था। परमेश्वर ने मुखिया होने का अधिकार पुरुष को दिया है। संभवत: यही कारण था कि पौलुस ने स्त्रियों को आराधना में चुप रहने का आदेश दिया था।

अब यहां एक प्रश्न उठता है कि क्या पौलुस स्त्रियों को आराधना में सर्वथा मूक बने रहने को कह रहा था? देखिए 11:5 में उसने क्या कहा? प्रार्थना करते समय और भविष्यद्वाणी करते समय स्त्रियां सिर ढांक कर रखें। धर्मशास्त्र में अनेक संदर्भ हैं जहां स्त्रियां आराधनालयों में और पुरुषों के मध्य प्रार्थना करती थीं। (प्रे.का. 1:14; 2:18; लूका 2:36-37)

पद 34 में पौलुस बल देता है कि वे अधीनता में रहें और तीमुथियुस को लिखे पहले पत्र में भी वह लिखता है कि वह अनुमति नहीं देगा कि स्त्रियां शिक्षा दें या पुरुष के ऊपर का स्थान रखें। (2:12)। पौलुस के विचार में प्रचारक और शिक्षक का पद केवल आत्मिक पुरुषों के लिए था न कि स्त्रियों के लिए। आराधना के मध्य यदि स्त्री कुछ बोलती तो वह अपमान की बात थी। यहां ध्यान देने की आवश्यकता है कि उस युग की अधिकांश महिलाएं अनपढ़ थीं। यदि उसे कुछ जानना था तो वह घर पर अपने पति से पूछे और समझे क्योंकि उसे सहायक और अधीनता की भूमिका निभानी थी।

अन्त में पौलुस ने उनसे कहा कि जो कुछ उसने लिखा वह परमेश्वर की ओर से था और यदि वे उसका पालन नहीं करेंगे तो परमेश्वर उनसे मुंह फेर लेगा। (पद 38)

पौलुस ने उन्हें अन्त में प्रोत्साहित किया कि वे भविष्यद्वाणी करें परन्तु अन्य-भाषा बोलने पर प्रतिबन्ध न लगाएं। इन सब बातों में कलीसिया व्यवस्था बनाए रखें।

ध्यान देने योग्य बातें:

- क्या आपकी कलीसिया विभिन्न वरदानों के उपयोग के लिए अवसर प्रदान करती है? आपकी कलीसिया में कौन से ऐसे वरदान हैं जिनका उपयोग नहीं हो रहा है?
- आपकी कलीसिया में अन्य भाषा और भविष्यद्वाणियों के वरदानों की क्या भूमिका है?
- आपकी कलीसिया में स्त्रियों की सेवकाई के क्षेत्र क्या हैं?

प्रार्थना निवेदन:

- परमेश्वर से याचना करें कि वह आपको कलीसिया में आपकी भूमिका दिखाए।
- परमेश्वर से याचना करें कि वह आपकी कलीसिया में उन सब वरदानों के लिए अधिक से अधिक स्थान बनाए जो उसने आपकी कलीसिया को दिए हैं।

32
वह जी उठा है

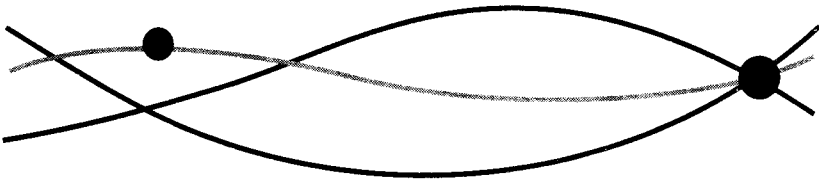

पढ़िए 1 कुरिन्थियों 15:1-34

कुरिन्थ की कलीसिया में एक भ्रान्ति व्याप्त हो गई थी कि यीशु मसीह मुर्दों में से जी नहीं उठा था। (पद 12) पौलुस इस प्रमुख मसीही विश्वास पर किसी प्रकार का भ्रम नहीं चाहता था।

उसने उन्हें यह ध्यान दिलाते हुए आरंभ किया कि उनका उद्धार उस सुसमाचार के कारण ही हुआ था जिसका प्रचार पौलुस ने उनमें किया था। (पद 1-2) और उसे पक्का विश्वास था कि वे उस सत्य पर अटल थे जिसकी शिक्षा उसने उन्हें दी थी।

यहां पद 2 कुछ उलझन सी पैदा करता है। यहां इस पद से पौलुस का अर्थ क्या था कि यदि वे दृढ़ता से थामे रहते हैं तब। नहीं तो उनका विश्वास करना व्यर्थ था। पौलुस के कहने का अर्थ था कि उद्धार किसी उचित शिक्षा को थामे रहने से नहीं है। अपने जीवन में उसकी सच्चाई का अनुभव करना अति आवश्यक है। वे जो यह मानते हैं कि मसीह यीशु उनके पापों के लिए मरा और फिर मुर्दों में से जी उठा, स्वर्ग में नहीं होंगे क्योंकि उन्होंने उद्धार

नहीं पाया है। पौलुस का कहना था कि इन शब्दों को पकड़े रहने से कुछ नहीं होता। उद्धार वह है जो इस सत्य को जीवन में अपनाए। और इस पर अटल रहना विश्वास की परख थी। यही विश्वासियों के उद्धार की वास्तविक आशा थी, न कि प्रचलित दार्शनिक विचार। वे अपनी आंखें प्रभु और उद्धारक यीशु पर लगाए रखें और केवल उसी पर भरोसा रखें। वे अपने विश्वास के सत्य के लिए जान भी दे दें।

कुछ विश्वासी वैसे हैं जैसा यीशु ने बीज बोनेवाले के दृष्टान्त में कहा था (मत्ती 13:3-8) कि कुछ बीज कंटीली झाड़ियों में गिरे। सांसारिक चिन्ताओं ने उनके विश्वास को दबाकर मार दिया। ऐसे लोग शिक्षाओं को मस्तिष्क में स्थापित तो कर लेते हैं परन्तु अपने मन में नहीं उतारते।

अब पौलुस सुसमाचार के वास्तविक सन्देश को समझाता है। पौलुस के अनुसार सुसमाचार के तीन मुख्य सत्य हैं। पहला, मसीह हमारे पापों के लिए मरा। उसके आगमन की भविष्यद्वाणी नबियों ने दी थी। उसे परमेश्वर ने पृथ्वी पर भेजा था कि वह हमारे बलिदान के स्थान पर अपनी जान दे।

दूसरा, मरने के बाद यीशु को कब्र में रखा गया था। (पद 4) अर्थात् वह सच में मर गया था। उस समय कुछ लोग कहते थे कि वह मरा नहीं था। यदि वह मरता नहीं तो हमारे पापों का दण्ड कैसे चुकाया जाता? परमेश्वर की व्यवस्था में तो पापों का भुगतान मृत्यु ही थी। (रोमि. 6:23; यहेजकेल 18:4) यीशु का कब्र में रखा जाना उसकी मृत्यु का प्रमाण था।

तीसरा, यीशु मुर्दों में से जी उठा था। (पद 4) मृत्यु उसे कब्र में नहीं रोक पाई थी। वह पाप, मृत्यु और नरक पर विजयी हुआ था और इसी कारण वह हमारी विजय का विश्वास है। पौलुस ने कहा कि यीशु के पुनरुत्थान को अनेकों ने देखा। (पद 5-8) वह पतरस और अन्य चेलों को दिखाई दिया था, तब वह पांच सौ से अधिक लोगों को दिखाई दिया था। हमें यह तो नहीं बताया गया है कि इन पांच सौ लोगों ने यीशु को कब देखा था परन्तु इनमें से अधिकांश लोग उस समय जीवित थे जब पौलुस यह पत्र लिख रहा था। यीशु एक बार फिर से याकूब और अन्य चेलों को दिखाई दिया था और अन्त में पौलुस को। (दमिश्क के मार्ग पर) कहने का अर्थ यह था कि यीशु का जी उठना सच था।

पद 9 में वह पाठकों से कहता है कि वह प्रेरितों में सबसे छोटा था क्योंकि उसने कलीसिया को सताया था। उसने कहा कि मसीही विश्वासियों

के साथ उसने जो अन्याय किया, उसके कारण वह इस योग्य नहीं था कि प्रभु उसे क्षमा करे या प्रेरित नियुक्त करे परन्तु परमेश्वर का अनुग्रह था कि पौलुस मसीह का विश्वासी और प्रभु का निष्ठावान सेवक बना। परमेश्वर के अनुग्रह ने ऐसा काम किया कि उसमें खोए हुओं के लिए संवेदना जाग उठी। प्रभु पौलुस के लिए एक ऐसी सच्चाई बन गया था कि उसने अन्य सभी प्रेरितों से अधिक उसकी सेवा थी। (पद 10)

आगे के पदों में पौलुस उनसे कहता है कि उत्थित यीशु में विश्वास रखना बहुत महत्त्वपूर्ण है। कुछ का यह मानना था कि मसीह का पुनरुत्थान नहीं हुआ था परन्तु पौलुस इस मत को मूर्खता कहता था। (पद 12) सैकड़ों गवाह होने के बाद भी कोई कैसे कह सकता था कि यीशु फिर जी नहीं उठा।

पद 14-19 में पौलुस ने कुरिन्थ की कलीसिया को समझाया कि यदि मसीह मुर्दों में से जी नहीं उठा होता तो

पहला, पौलुस का प्रचार और विश्वास व्यर्थ था (पद 14), क्योंकि उसके प्रचार का विषय उद्धार का सुसमाचार, यीशु के पुनरुत्थान पर ही दृढ़ता से आधारित था; नहीं तो वह क्योंकर व्यर्थ में अपना जीवन संकट में डाल रहा था?

दूसरा, यदि यीशु का पुनरुत्थान नहीं था तो वे सब जो उसे मरणोपरान्त देखने की गवाही देते थे, झूठे थे (पद 15) और पौलुस एवं अन्य प्रचारक धोखेबाज़ थे और मरणहार संसार को दी जाने वाली आशा झूठी थी।

तीसरा, मसीह के पुनरुत्थान के बिना मसीही विश्वास व्यर्थ था और उनके अग्रज अनन्त विनाश में डूब चुके थे। (पद 15) मसीही विश्वास ऐसी स्थिति में किस काम का और वह प्रभु जो पाप और मृत्यु पर विजय न पाए उसकी हम उपासना क्यों करें, क्योंकि हमारे जीवन की तब आशा ही क्या रही?

यदि पुनरुत्थान नहीं होता तो विश्वासी सबसे अधिक दयनीय दशा में होते (पद 19) क्योंकि वे किसी झूठी आशा के कारण संकट मोल ले रहे थे। वे ऐसे परमेश्वर की उपासना कर रहे थे जो उन्हें कभी बचा नहीं सकता था। पौलुस के लिए पुनरुत्थान का सत्य महत्त्वपूर्ण था क्योंकि विश्वासी के लिए यही मुख्य आशा थी।

पद 30-32 में पौलुस ने उन्हें बताया कि यदि मसीह का पुनरुत्थान नहीं था तो उसकी सेवकाई कैसी व्यर्थ थी क्योंकि प्रभु यीशु की सेवकाई में

प्रतिदिन अपने आपके लिए मरना पड़ता था। उसे अपना जीवन संकट में डालकर इफिसुस में वनपशु से लड़ने की आवश्यकता ही क्या थी? कुछ लोगों का मानना है कि पौलुस को जंगली जानवरों के सामने भी डाला गया था परन्तु परमेश्वर ने उसे बचा लिया था। कुछ लोग ऐसा मानते हैं कि ये जंगली जानवर वे मनुष्य थे जिन्होंने इफिसुस में सुसमाचार के कारण उसका कड़ा विरोध किया था।

अब पौलुस उन्हें विश्वास दिला रहा था कि प्रभु यीशु मुर्दों में से जी उठा है और उनकी आशा व्यर्थ नहीं थी। उसने उन्हें बताया कि यीशु मृतकों के जी उठने का पहला पल था। (पद 20) निर्गमन 23:16 और व्यवस्थाविवरण 26 के अनुसार उपज का पहला फल परमेश्वर को दिया जाना था जो और अधिक उपज की प्रतिज्ञा दर्शाता था। इसी प्रकार यीशु भी मृतकों का पहला फल होकर अनेकों के पुनरुत्थान की प्रतिज्ञा था। आदम मृत्यु लाया था परन्तु यीशु विश्वासियों के लिए उस मृत्यु में से पुन: जीवन लाया। (पद 21-22)

पौलुस का कहना था कि प्रभु यीशु सब प्रभुताओं, अधिकारों और शक्तियों का नाश कर देगा। (पद 24) वह अपने आगमन पर परमेश्वर के सब विरोधियों का नाश करेगा। नाश किया जानेवाला अन्तिम विरोधी होगा मृत्यु। (पद 26) यह अधिकार उसे पिता परमेश्वर से प्राप्त है। बैरियों का नाश करने के बाद वह सब कुछ पिता के अधीन कर देगा। (पद 28) हम एक जीवित और विजयी परमेश्वर की उपासना करते हैं।

कुरिन्थ में कुछ लोग अपने मृतकों के उद्धार हेतु उनके नाम का बपतिस्मा ले लेते थे। पौलुस ऐसे बपतिस्मे का पक्षधर नहीं था। वो उसे वैसे ही उदाहरणस्वरूप काम में ले रहा था जैसे उसने एथेन्स में अज्ञात परमेश्वर की मूर्ति को उदाहरण बनाया था। (प्रे.का. 17) उसका तर्क यह था कि यदि पुनरुत्थान नहीं था तो वे मृतकों के उद्धार के निमित्त उनके नाम का बपतिस्मा क्यों लेते थे। कुरिन्थ में तो मसीही विश्वासी ही नहीं अन्यजाति भी मृतकों के फिर जी उठने में विश्वास करते थे।

पौलुस ने उन्हें विश्वास दिलाया कि यीशु के पुनरुत्थान पर विश्वास रखना बहुत ही महत्त्वपूर्ण वरन् जीवन का एक सिद्धान्त है। इसके बिना सुसमाचार प्रचार और सुसमाचार के लिए कष्ट सहन सब व्यर्थ ही था। (पद 30-33)

यदि यीशु मृतकों में से जी नहीं उठा होता तो वे केवल वर्तमान का जीवन देखते और अपने पापों में नाश हो जाते। पौलुस ने उन्हें चिताया कि वे अपनी

संगति के बारे में भी सावधान रहें क्योंकि ऐसों की संगति करना जो यीशु के पुनरुत्थान में विश्वास नहीं रखते, उनके लिए हानिकारक हो सकती थी।

पौलुस ने कुरिन्थियों को सावधान किया कि वे उस सत्य में दीनता का जीवन व्यतीत करें जिसे वे जानते हैं और उस सत्य को उनमें बांटें जो परमेश्वर के सत्यों के बारे में अनभिज्ञ हैं। (पद 34)

ध्यान देने योग्य बातें:

- इस अध्याय में हमने प्रभु यीशु के पुनरुत्थान के महत्त्व के बारे में क्या सीखा?
- यहां पौलुस की शिक्षा के अनुसार हमने सच्चे विश्वासी बनने के बारे में क्या सीखा?
- क्या हमारे लिए यह कहा जा सकता है कि हम अनेक बार अपना जीवन उस सत्य के प्रकाश में नहीं जीते हैं कि यीशु जीवित है और एक दिन इस पृथ्वी पर फिर से आएगा?
- यदि हम मृतकों के पुनरुत्थान के बारे में वास्तव में विश्वास रखते हैं तो इसका प्रभाव हमारे इस पृथ्वी के जीवन पर कैसा पड़ेगा?

प्रार्थना निवेदन:

- प्रभु का धन्यवाद करो कि उसने मृत्यु पर जय पाई है।
- परमेश्वर से याचना करो कि वह आपकी सहायता करे, कि आप अपना जीवन इस समझ के साथ व्यतीत करें कि वह मृतकों में से जी उठा और आपको नया जीवन और आशा प्रदान की।

33
मृतकों का क्या होता है

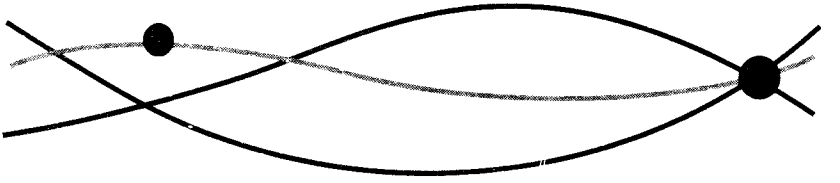

पढ़िए कुरिन्थियों 15:35-38

पुनरुत्थान के विषय पौलुस के विवेचन से कुछ व्यावहारात्मक विषयों का उत्थान हुआ था। पौलुस ने कहा कि पुनरुत्थान है तो मृतक कैसे फिर जी उठेंगे? पुनरुत्थान के बाद देह कैसी होगी? धर्मशास्त्र के इस भाग में पौलुस इन प्रश्नों के उत्तर देता है।

पौलुस ने उन्हें पौधों का एक उदाहरण देते हुए कहा कि बीज का मरना आवश्यक है कि उसे नई देह (पौधा) प्राप्त हो। यह नई देह बीज की देह से सर्वस्व भिन्न होती है। इसी प्रकार जो देह मरती है और जो देह पुनरुत्थान के दिन जी उठेगी दोनों में बहुत बड़ा अन्तर होगा।

मांसल देह तो सब एक सी होती हैं। (पद 39) प्राणी जगत में भी देह अलग-अलग होती हैं। चिड़िया की देह मछली की देह से अलग होती है। परमेश्वर ने पृथ्वी पर भी अलग अलग वातावरण और कार्यों के अनुसार प्राणियों को देह प्रदान की है।

इसी प्रकार सांसारिक देह और स्वर्गिक देह में अन्तर है। (पद 40-41) हम यह न सोचें कि हम इसी देह में स्वर्ग जाएंगे। परमेश्वर पुनरुत्थान के

जीवन के लिए भिन्न देह का निर्माण करेगा। हमारी नई देह इस देह से किस प्रकार भिन्न होगी? पौलुस कुछ अन्तर समझाता है।

पहला, कि नई देह अविनाशी होगी। (पद 42) यहां तो हम जानते हैं कि हमारी देह कैसी नाशमान है। हम अधिक से अधिक अस्सी या कुछ लोग नब्बे वर्ष तक जी लेंगे। इसमें भी अनेक दुर्घटनाएं घट सकती हैं–बीमारी, दुर्घटना, उत्पात आदि। नई देह पर इन बातों का कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा। वे नहीं मरेंगी, न ही उन्हें रोग लगेंगे, न ही वे दुर्बल होंगी।

दूसरा, नई देह महिमामय होगी। (पद 43) आज की देह में महिमा की कमी नहीं है। वह परमेश्वर की सृजन शक्ति का चमत्कार है परन्तु उसमें अनेक बुराइयां हैं, अपराध हैं, छल है, भ्रष्ट आचरण है। पाप ने इस अद्‌भुत रचना का विनाश कर दिया है।

नई देह में यह कुछ नहीं होगा। वह अपने सृष्टिकर्ता की महिमा का प्रदर्शन करेगी। जिसे वह आज नहीं कर पा रही है। वह पाप के प्रभाव और परिणामों से मुक्त होगी। वह परीक्षाओं और लालसाओं से मुक्त रहेगी। वह मसीह का स्पष्ट और निर्मल प्रकटीकरण होगी।

तीसरा, यह नई देह सामर्थी होगी। यह सांसारिक देह तो अद्‌भुत होते हुए भी दुर्बल, असहाय और सीमित है। कीड़े-मकोड़े भी अपने से अधिक बोझ उठा लेते हैं परन्तु यह देह नहीं उठा पाती। यह तो छोटे छोटे प्राणियों के तुल्य काम भी नहीं कर पाती है। वे अपनी चोंच से पेड़ में छेद कर देते हैं।

चौथा, नई देह आत्मिक होगी। (पद 44) वह परमेश्वर और उसकी योजनाओं के साथ एक होगी। वह पाप की प्रवृत्ति से मुक्त परमेश्वर की अनन्त संगति और अनन्त आनन्द के योग्य होगी। इसका अर्थ यह नहीं कि यह देह भौतिक नहीं होगी। यीशु को उसके पुनरुत्थान के बाद छूकर महसूस किया जा सकता था। (लूका 24:39)

यह देह हमने आदम से प्राप्त की है और नई देह हम यीशु से प्राप्त करेंगे। जैसे कि हम आज आदम के स्वरूप में हैं, उसी प्रकार एक दिन हम मसीह के स्वरूप में होंगे। (पद 49)

पौलुस ने पद 50 में कहा कि मांस और लोहू- सांसारिक देह, परमेश्वर के राज्य के वारिस नहीं होंगे। स्वर्ग प्रवेश के लिए हम इस पाप की देह को त्यागकर अविनाशी और पापमुक्त देह पाएंगे। वे जो जीवित रहेंगे, उन्हें भी वही अविनाशी और पापमुक्त देह प्राप्त होगी। (पद 51)

यह सब कब और कैसे होगा? पौलुस ने कहा कि यह एक भेद की बात है और इसे हम समझ नहीं सकते परन्तु यह एक क्षणिक कार्य होगा और पलक झपकते ही हो जाएगा। (पद 52) हम कैसे सामर्थी परमेश्वर की सेवा करते हैं! उसके लिए कुछ भी संभव नहीं।

ऐसा कब होगा? पौलुस ने कहा कि यह अन्तिम तुरही के फूंके जाने पर होगा। (पद 52) इसका अर्थ यह है कि मृतकों की आत्मा प्रभु के पास है परन्तु देह को अभी पुनरुत्थान की देह नहीं दी गई है। जिस दिन प्रभु मृत्यु को निगलकर विजयी होगा उस दिन मृतकों को नई देह प्रदान की जाएगी। (पद 54)

पुरानी देह का क्या होगा? यह देह कब्र में सड़ जाएगी। तब देह का पुनरुत्थान कैसे होगा? परमेश्वर उस मृतक देह में से एक नई देह का उत्थान करेगा जो अपनी आत्मा को ग्रहण करेगी। जैसे आदम मिट्टी से आया था उसी प्रकार नई देह भी मिट्टी ही से आएगी परन्तु उसके तत्व अविनाशी होंगे और वह नहीं मरेगी। मृत्यु तो पाप के कारण श्राप-स्वरूप आई थी। (उत्पत्ति 3:14) यह श्राप एक दिन समाप्त होगा। प्रभु हमें विजय प्रदान करेगा। (पद 57) उसने पाप का निवारण किया है इसलिए मृत्यु का डंक समाप्त हो गया है।

हमें इन सत्यों के प्रकाश में अटल रहना है। (पद 58) मसीह के प्रति और उसके राज्य के प्रति हमारे समर्पण से कोई हमें हिला न पाए। हम जानते हैं कि हमारा परिणाम व्यर्थ नहीं है। हमारी आशा सुरक्षित है। इस प्रकार अधिक से अधिक हानि जो हमें पहुंचा सकता है, वह यह है कि इस नाशमान देह को समाप्त कर दे। इसे एक दिन वैसे भी हमें त्यागना होगा। हमारी आशा इस जीवन में नहीं, आनेवाले जीवन में है।

ध्यान देने योग्य बातें:

- हमारी वर्तमान देह में हमारी सीमाएं क्या हैं? पौलुस यहां हमें नई देह के बारे में क्या प्रतिज्ञा देता है?
- पुनरुत्थान की समझ इस संसार में हमारे जीवन और प्रभु यीशु की सेवा पर कैसा प्रभाव डालती है?

प्रार्थना निवेदन

- प्रभु का धन्यवाद करें कि उसने हमें धर्मशास्त्र के इस भाग में बहुमूल्य प्रतिज्ञाएं दी हैं।
- परमेश्वर से याचना करें कि वह इस पृथ्वी की क्षणिक वस्तुओं की अपेक्षा स्वर्गिक वस्तुओं को प्राथमिकता देने में आपकी सहायता करे।

34
अन्तिम टिप्पणियां

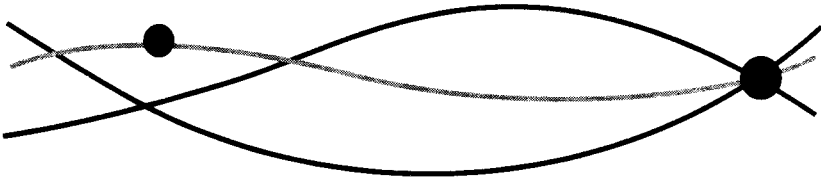

पढ़िए 1 कुरिन्थियों 16

पौलुस ने अपना यह पत्र टिप्पणियों की एक शृंखला के साथ अन्त किया जिन्हें हम एक एक करके देखेंगे।

यरूशलेम के लिए दान (पद 1-4)

यहां पौलुस उस दान के विषय चर्चा कर रहा था जो कुरिन्थ की कलीसिया यरूशलेम के विश्वासियों के लिए एकत्रित कर रही थी। गलतिया की कलीसिया भी उनके लिए दान एकत्रित कर रही थी। पौलुस ने उनसे कहा कि वे प्रत्येक रविवार दान का एक भाग अलग कर दिया करें। कुछ लोग अधिक मात्रा में दान देते थे परन्तु उचित था कि हर एक विश्वासी कुछ न कुछ दान अवश्य दें और वह चाहता था कि वे उसके आगमन से पूर्व दान एकत्रित करके रख लें। पौलुस दानवाहक के साथ एक परिचय पत्र भी भेजने का प्रस्ताव रख रहा था। पद 4 से प्रतीत होता है कि पौलुस स्वयं भी दान-वाहक के साथ जाना चाहता था।

यहां ध्यान देने योग्य बात यह है कि पौलुस विश्वव्यापी कलीसिया में सहयोग की बात कह रहा है। व्यक्तिगत कलीसिया केवल अपने ही सदस्यों की चिन्ता से सन्तुष्ट न हो।

कुरिन्थ जाने की पौलुस की कामना (पद 5-9)

पौलुस ने कहा कि जब वह मकिदुनिया का भ्रमण करने निकलेगा तब वह कुरिन्थ के विश्वासियों से भी भेंट करेगा और उनके साथ शिक्षा में समय देगा तथा उन्हें विश्वास में प्रोत्साहित करेगा।

पौलुस इफिसुस भी जाना चाहता था क्योंकि वहां सुसमाचार के लिए अवसर के द्वार खुले थे। शैतान भी वहां अपना काम करना चाहता था परन्तु पौलुस शैतान से डरता नहीं था। वह जानता था कि परमेश्वर शैतान से अधिक महान है। उसका विश्वास सर्वशक्तिमान परमेश्वर में था।

तीमुथियुस का आगमन (पद 10-11)

पौलुस ने उन्हें लिखा कि तीमुथियुस आना चाहता था। अत: वे उसका स्वागत करें, उसे लौटा न दें। पौलुस ने उन्हें तीमुथियुस के चरित्र और निष्ठा के बारे में विश्वास दिलाया। वे उसका एक सेवक की नाईं आदर करें और उसे पौलुस के पास भेजें।

अपुल्लोस का आगमन (पद 12)

पौलुस ने अपुल्लोस से आग्रह किया था कि वह कुरिन्थ के विश्वासियों से भेंट करे परन्तु व्यस्तता के कारण वह वहां नहीं जा पाया था। हमें नहीं बताया गया है कि पौलुस क्यों चाहता था कि अपुल्लोस वहां जाए परन्तु यह तो स्पष्ट है कि वह चाहता था कि कुरिन्थ के विश्वासी विश्वास में प्रशिक्षण और प्रोत्साहन पाएं और उसे विश्वास में आनेवालों को शिष्यता का प्रशिक्षण देना महत्त्वपूर्ण था। इस अध्याय में हमने देखा है कि पौलुस ने उन्हें विश्वास में परिपक्व बनाने के लिए कैसा प्रयास किया है। उसने पत्र लिखने में समय लगाया वरन् वह उनसे व्यक्तिगत भेंट भी करना चाहता था कि उन्हें प्रोत्साहन एवं निर्देशन प्रदान करे। वह चाहता था कि अपुल्लोस और तीमुथियुस भी वहां जाएं। प्रेरित पौलुस के लिए शिष्यता का प्रशिक्षण महत्त्वपूर्ण था।

दृढ़ रहने की पुकार (पद 13)

पौलुस समझ गया था कि कुरिन्थ के विश्वासी दूसरों पर निर्भर रहकर आगे नहीं बढ़ सकते थे। इस कारण उसने उनसे आग्रह किया कि वे विश्वास

में दृढ़ रहें, बाधाओं से विचलित न हों। वे कुछ भी करें, उसको शिक्षा के अनुरूप प्रेम में व्यवहार रखें। (पद 13)

स्तिफनास के बारे में (पद 15-18)

पौलुस ने स्तिफनास के परिवार को बपतिस्मा दिया था। (1:6) वह अखया का सबसे पहला विश्वासी परिवार था और वे सब पवित्र जनों की सेवा में समर्पित थे। यद्यपि उनकी सराहना नहीं की गई थी, उनकी सेवा महत्त्वपूर्ण थी। ऐसा प्रतीत होता है कि स्तिफनास के मित्र फूरतूनातुस और अखइकुस पौलुस से भेंट करने आए थे। पौलुस उनके यथासमय आने से अत्यधिक प्रसन्न था। उसे ऐसे समय में किसी के साथ की आवश्यकता भी थी। स्तिफनास प्रोत्साहन की सेवा में सर्वोत्तम व्यक्ति था। पौलुस ने कुरिन्थ के विश्वासियों से कहा कि वे ऐसे मनुष्यों का जो परमेश्वर के राज्य के निमित्त परिश्रम करते हैं, उनका आदर करें और उनके अधीन रहें। हम देख चुके हैं कि कुरिन्थ के विश्वासी अधीनता आसानी से स्वीकार नहीं करते थे। पौलुस ने उनसे कहा कि वे वैसे भड़कीले न दिखाई दें जैसे वे चाहते हैं, परन्तु उनका आदर किया जाना आवश्यक है।

अन्य कलीसियाओं का नमस्कार (पद 19-20)

अपने पत्र का अन्त करने से पहले पौलुस ने उन्हें एशिया क्षेत्र के रोम से अन्य कलीसियाओं का नमस्कार भेजा। अक्विला और प्रिस्का तथा उनकी आवासीय कलीसिया। पौलुस की भेंट इस दम्पति से कुरिन्थ में ही हुई थी। (प्रे. का. 18:1) वे सेवकाई में अत्यधिक सहभागी थे।

पौलुस ने कुरिन्थ के विश्वासियों से कहा कि वे पवित्र चुम्बन से एक दूसरे का अभिवादन करें। संभव है कि यह उस युग का मसीही तरीका था।

अन्तिम शब्द (पद 21-24)

पौलुस ने उनके प्रोत्साहन के लिए लिखा कि उसने पत्र का यह भाग अपने हाथों से लिखा था। वह प्राय: किसी से लिखवाता था परन्तु उसकी प्रमाणिकता एवं व्यक्तिगत स्पर्श हेतु वह कभी कभी स्वयं कुछ शब्द लिखता था। कुछ टीकाकारों का कहना है कि उसकी आंखों में परेशानी के कारण वह किसी न किसी से पत्र लिखवाता था।

जिसने प्रभु से प्रेम न रखा, उसे पौलुस ने श्राप दिया। यह अविश्वासियों पर श्राप नहीं था। यह उन पर था जो अपने आप को विश्वासी कहकर प्रभु

के प्रेम में जीवन नहीं जी रहे थे। वे कलीसिया के लिए धब्बे और प्रभु के नाम के लिए अपने आडम्बर के कारण निन्दा का कारण थे।

पद 22 में पौलुस ने अरामी भाषा का नारा लगाया, ''मारानाथा'' अर्थात् ''हमारे प्रभु आ'' जो आरंभिक कलीसिया में प्रचलित अभिवादन था। इससे कुरिन्थ को स्मरण भी हुआ कि प्रभु आनेवाला है।

पौलुस ने अन्त में उन्हें अपने प्रेम का विश्वास दिलाया और उन पर आरंभ की तरह परमेश्वर के अनुग्रह की शुभकामना व्यक्त की। (1:3) कुरिन्थ की कलीसिया में जो कुछ हुआ था यहां हमने देखा। उन्हें परमेश्वर के अनुग्रह के बारे में विश्वास दिलाने की आवश्यकता थी। यही सुसमाचार का सार है।

ध्यान देने योग्य बातें:

- क्या आपकी कलीसिया कुरिन्थ और गलतियों की कलीसियाओं की नाईं मिशनरी सेवा में लीन हैं?
- इस अध्ययन से हम कलीसिया में शिष्यता की आवश्यकता के बारे में क्या सीखते हैं?
- इस अध्याय में कुरिन्थ के विश्वासियों के प्रति पौलुस के स्वभाव को देखें। इससे हम विश्वास में अपरिपक्व व्यक्तियों के प्रति अपने व्यवहार के बारे में क्या सीखते हैं?

प्रार्थना निवेदन:

- अपने क्षेत्र में अन्य कलीसियाओं की आवश्यकता के बारे में सोचिए। परमेश्वर से याचना करें कि वह उनकी इन आवश्यकताओं की पूर्ति करे।
- विश्वास में दुर्बल व्यक्ति के लिए समय लेकर प्रार्थना करें। परमेश्वर से याचना करें कि वह इस व्यक्ति के लिए आपके द्वारा संभव सहायता दिखाए।